कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

~~25/11/80~~
19.12.80
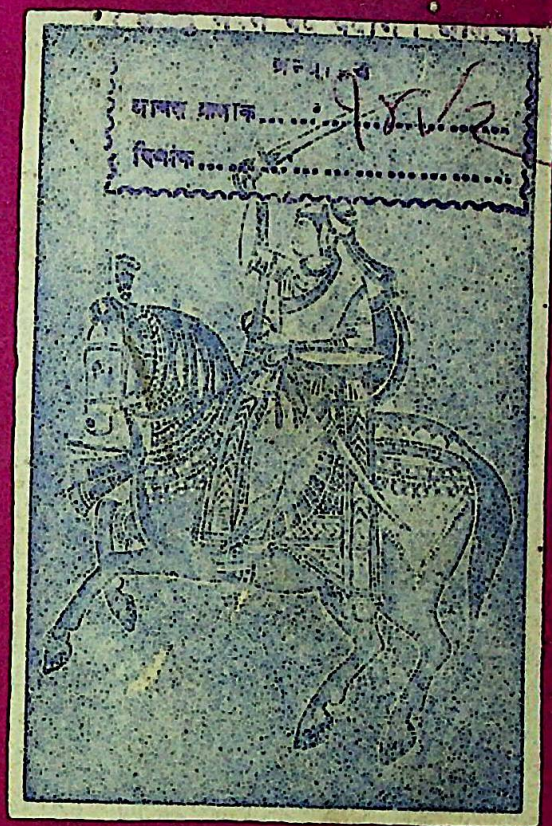
झाँसी की रानी

लक्ष्मीबाई

झांसी की रानी-लक्ष्मीबाई

(ऐतिहासिक उपन्यास)

संक्षिप्त संस्करण

"She was the best and the bravest of them all"

—Sir Hugh Rose.

वृन्दावनलाल वर्मा

मयूर प्रकाशन

झांसी • दिल्ली

प्रकाशकः—
सत्यदेव वर्मा, बी. ए. एल-एल. बी.
मयूर प्रकाशन, झांसी।

पंचमवृत्ति १९५८

मूल्य २॥)

मुद्रकः—
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

दो शब्द

किशोर और तरुण विद्यार्थियों तक 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई' उपन्यास पहुँचाने के लिये अनेक मित्रों ने संक्षिप्त संस्करण के लिये आग्रह किया। उन्हीं के आग्रह का यह परिणाम है।

झांसी
१६-८-५०

वृन्दावनलाल वर्मा

परिचय

दीवान आनन्दराय मेरे परदादा थे। रानी लक्ष्मीबाई की ओर से लड़ते-लड़ते सन् १८५८ में मऊ की लड़ाई में मारे गये थे। जब मेरी परदादी का देहान्त हुआ, मैं आठ वर्ष का था। तब परदादी से रानी के विषय में बहुत सी कहानियाँ सुना करता था। उन्होंने रानी को देखा था।

उन कहानियों की धरोहर मेरी दादी के पास रही। वह समय-समय पर उनसे मुझको मिलती रही। जब दादी का देहान्त हुआ, मुझको वकालत आरम्भ किये छः वर्ष के लगभग हो चुके थे।

वह धरोहर अद्भुत होते हुये भी अस्पष्ट थी और उसकी रूपरेखा धुंधली तथा सत्य के आधार पर कम और भक्ति के ऊपर अधिक। इधर इतिहास के अध्ययन और तथ्य के अनुशीलन ने उस धरोहर के मूल्य को कम कर दिया। सामने केवल पारसनीस की पुस्तक 'रानी लक्ष्मीबाई का जीवन चरित्र' थी। वह इतिहास का कङ्काल मात्र न थी परन्तु दादी-परदादी की बतलाई हुई परम्परा के विरुद्ध थी। पारसनीस के अन्वेषण काफी मूल्यवान होते हुये भी उनका विचार कि रानी झांसी का प्रबन्ध अङ्गरेजों की ओर से 'ग़दर" के ज़माने में करती रहीं, परदादी और दादी की बतलाई हुई परम्पराओं के सामने मन में खपता नहीं था। तो भी मैं सोचता था, शायद ये परम्परायें जनता के इच्छा–संकल्पों (Wishful thinking) का फल हैं, इसलिये छुटपन से जिस मूर्ति की मन में निष्ठापूर्वक पूजा करता चला आ रहा था, उसके प्रति कुछ नास्तिकता उत्पन्न हो गई।

सुनता रहता था कि रानी स्वराज्य के लिये लड़ीं थीं, पारसनीस के ग्रन्थ में पढ़ा कि उनका शौर्य विवशता की परिस्थिति में उत्पन्न हुआ था। मैं जब बोर्डिंग हाऊस के जीवन में था, एक रात स्वप्न देखा कि हौकी ग्राउण्ड पर युद्ध हो रहा है और मैं रानी की तरफ से 'स्वराज्य' के लिये लड़ता हुआ घायल हो गया हूं, तब जागने पर बड़ा अचम्भा हुआ, क्योंकि खेल में उस दिन हौकी का [illegible] भी नहीं [illegible] था।

यह स्वप्न भी मुझको प्राय: दिक किया करता था।

सन् १९३२ तक यह उथल-पुथल अर्द्ध सुसुप्त रूप में मन के किसी कोने में पड़ी रही।

एक दिन एक साहब ने कहा, 'जजी की कचहरी की एक अलमारी में चालीस-पचास चिट्ठियां रक्खी हुई हैं जो १८५७ में किसी अंग्रेज फौजी अफसर ने लै० गवर्नर के पास झांसी को अधिकृत कर लेने के बाद रोज-रोज भेजी थीं।

मैंने उन चिट्ठियों की नकल करवाई। उनमें कोई खास बात तो नहीं मिली परन्तु एक विश्वास जगह करने लगा—रानी का शौर्य विवशता की परिस्थिति में उत्पन्न नहीं हुआ था।

कचहरी में नवाब वन्ने नाम के एक अर्जीनवीस काम करते थे। वह मुझको प्राय: रोज ही कचहरी में मिलते थे। वह राजा रघुनाथराव के लड़के नवाब अलीबहादुर की लड़की के लड़के निकले! मैंने सोचा, शायद इनके पास रानी सम्बन्धी कोई सामग्री हो। पूछने पर उन्होंने बतलाया कि नवाब अलीबहादुर का रोजनामचा इत्यादि घर पर रक्खे हैं। मैं उत्सुकता के मारे परेशान हो गया। रोजनामचा देखने को मिला। उसको मैंने पढ़वाया। नवाब अलीबहादुर कैसे थे और उनका नौकर पीरअली किस तरह का आदमी था यह तो उनके रोजनामचे से प्रकट होता ही था परन्तु रानी लक्ष्मीबाई की विलक्षणता और तत्कालीन समाज की प्रगति और रहन-सहन का भी उससे पता चला। रोजनामचा दीमक के हमलों से जर्जर हो चुका था और अब तो, उसके शुरू का भाग नष्ट ही हो गया है परन्तु मैंने नोट ले लिये।

१८५८ में नवाब अलीबहादुर ने अपनी राजभक्ति के प्रमाण में कुछ बयान दिये थे। उन बयानों में पीरअली का भी जिकिर किया था। वे बयान मुझको मिल गये।

इससे बढ़कर, मुझको एक व्यक्ति मिले—मुं० तुराबअली दरोगा। ये ८, १० वर्ष हुये तब परलोकगामी हुये, ११५ वर्ष की आयु में। गदर के जमाने में, तुराबअली साहब अंग्रेजों की ओर से पुलिस के

थानेदार थे। इनसे मुझको रानी के विषय में बहुत बातें मालूम हुईं—दादी-परदादी की परम्पराओं की पोशक ! और अङ्गरेजों के दारोगा से !!

उन्हीं दिनों में झांसी में एक बुड्ढा और मिला। नाम अजीमुल्ला। यह रानी के विषय में तुराबअली की अपेक्षा कहीं अधिक बातें जानता था। इसने रानी को देखा था परन्तु वह उस समय छोटा था। तुराबअली ने तो रानी को सैकड़ों ही बार देखा था।

इसके उपरान्त मैंने झांसी के बुड्ढे-बुढ़ियों को परेशान करना शुरू कर दिया। परन्तु वे जिस उत्साह और भक्ति के साथ रानी की बातें बतलाते थे उससे मैं यह सोचता हूं कि परेशान न हुये होंगे।

सवाल था, रानी स्वराज्य के लिये लड़ीं या अङ्गरेजों की ओर से झांसी का शासन करते करते उनको जनरल रोज से विवश होकर लड़ना पड़ा।

रानी ने बानपूर के राजा मर्दनसिंह को जो चिट्ठी युद्ध में सहायता करने के लिये लिखी थी उसमें 'स्वराज्य' का शब्द आया है। यह चिट्ठी इस प्रश्न का सदा के लिये स्पष्ट उत्तर देती है। खेद है कि मैं इस संस्करण में उस चिट्ठी का चित्र न दे सका—बानपूर के राजा के वंशज ने वह चिट्ठी या उसका फोटो मेरे हवाले अभी नहीं किया।

राजा गङ्गाधरराव का हस्ताक्षर मुझको राजा साहब कटेरा ने अपनी एक सनद दिखला कर सुलभ कर दिया। कृतज्ञ हूं। सनद की नकल भी मेरे पास है। उस समय ९५ वर्ष पहले लगभग आज ही की तरह की हिन्दी लिखी जाती थी, इस सनद से पता लगता है।

मराठी में विष्णुराव गोडसे का 'माझा प्रवास' एक छोटा-सा प्रबन्ध है। गोडसे रानी के साथ किले में था, जब रोज के मुकाबले में रानी लड़ीं। मैंने अपनी पुस्तक में माझा प्रवास का भी उपयोग किया है।

मोतीबाई ऐतिहासिक है। मुझको उसका पता अकस्मात् ही चला। ओरछे दरवाजे एक मसजिद है। जिमीन का झगड़ा कचहरी में चला। मैं मसजिद वालों की तरफ से वकील था। जिमीन का सेटल्मेंट झांसी में

न था, ग्वालियर में था। वहां से नक़ल मंगवाई। उसमें ज़िमीन की पूर्व स्वामिनी निकली मोतीबाई नाटकशाला वाली! गंगाधरराव को नाटक खेलने और खिलवाने का बहुत शौक था। स्त्रियों का अभिनय स्त्रियां ही करती थीं। इनमें मोतीबाई भी थी। मोतीबाई का पता लगाते-लगाते जूही, दूर्गा और मुगलखां भी निगाह में आये। इन सबके सम्बन्ध की घटनाओं का सार सच्चा है।

सन् १९३२ से मैं इन अनुसन्धानों में लगा।

एक दिन रानी लक्ष्मीबाई के भतीजे मुझको झाँसी में घर पर ही मिले। वे रानी के ऊपर हिन्दी में कुछ लिखना चाहते थे। रानी क्यों लड़ीं इस समस्या पर हम दोनों एक मत थे।

फिर एक दिन डाक्टर सावरकर के एक सेक्रेटरी मुझको झांसी में ही मिले। वे मराठी में 'सत्तावनी' लिख रहे थे। रानी के सम्बन्ध की जो सामग्री उनके ग्रन्थ के लिये आवश्यक थी, मैंने दी। मैं सोचता था कि रानी के विषय में बहुत लोगों ने कुछ लिखा है और लिख रहे हैं, मैं क्यों कुछ और प्रयत्न करूं? कुछ दिनों बाद मेरी यह धारणा बदल गई।

कलेक्टरी में कुछ सामग्री मिली। १८५८ में लोगों के बयान लिये गये थे। इनको मैंने पढ़ा। इनको पढ़कर मैं अपने विश्वास में दृढ़ हुआ—रानी स्वराज्य के लिये लड़ी थीं।

मेरी वह स्वप्न, जिसकी भूमिका हौकी ग्राउण्ड पर थी, फिर ताज़ा हुआ। मैंने निश्चय किया कि उपन्यास लिखूंगा, ऐसा जो इतिहास के रग-रेशे से सम्मत हो और उसके सन्दर्भ में हो! इतिहास के कङ्काल में माँस और रक्त का सञ्चार करने के लिये मुझको उपन्यास ही अच्छा साधन प्रतीत हुआ। उस साधन को मैंने जो कुछ रूप दे पाया है वह पाठकों के सामने है।

यदि आनन्दराय ने रानी के लिये गोली खाई और मेरी कलम ने थोड़ी सी स्याही—तो इस अन्तर को पाठक अवश्य ध्यान में रखने की कृपा करें।

वृन्दावनलाल वर्मा

उदय

[१]

वर्षा का अन्त हो गया । कुआंर उतर रहा था । कभी-कभी झीनी-झीनी वदली हो जाती थी । परन्तु उस सन्ध्या के समय आकाश बिलकुल स्वच्छ था । सूर्यास्त होने में थोड़ा-सा विलम्ब था । विठूर के बाहर गङ्गा के किनारे तीन अश्वारोही तेज़ी के साथ चले जा रहे थे । तीनों बाल्यावस्था में । एक बालिका, दो बालक । एक बालक की आयु १६, १७ वर्ष, दूसरे की १४ से कुछ ऊपर । बालिका की तेरह से कम ।

बड़ा बालक कुछ आगे निकला था कि बालिका ने अपने घोड़े को एड़ लगाई । बोली, 'देखूँ कैसे आगे निकलते हो ।' और वह आगे हो गई । बालक ने बढ़ने का प्रयास किया तो उसका घोड़ा ठोकर खा गया और बालक धड़ाम से नीचे जा गिरा । सूखी लकड़ी के टुकड़े से उसका सिर भिड़ गया । खून बहने लगा । घोड़ा लौट कर घर की ओर भाग गया । बालक चिल्लाया 'मनू, मैं मरा ।'

बालिका ने तुरन्त अपने घोड़े को रोक लिया । मोड़ा, और उस बालक के पास पहुँची । एक क्षण में तड़ाक से कूदी और एक हाथ से घोड़े की लगाम पकड़े हुये झुक कर घायल बालक को ध्यान पूर्वक देखने लगी । माथे पर गहरी चोट आई थी और खून बह रहा था । बालिका

मिठास के साथ बोली, 'घबराओ मत, चोट बहुत गहरी नहीं है। लोहू बहने का कोई डर नहीं।'

मझला बालक भी पास आ गया। उतर पड़ा और विलह्व होकर अपने साथी की चोट को देखने लगा।

'नाना तुमको तो बहुत लग गई है।' उस बालक ने कहा।

'नहीं बहुत नहीं है' बालिका मुस्कराकर बोली, 'अभी लिये चलती हूं। कोठी पर मरहम पट्टी हो जायगी और बहुत शीघ्र चंगे हो जायेंगे।'

'कैसे ले चलोगी मनू ?' बड़े लड़के ने कातर स्वर में कराहते हुये पूछा।

मनू ने उत्तर दिया, 'तुम उठो। मेरे घोड़े पर बैठो। मैं उसकी लगाम पकड़े तुम्हें अभी घर लिये चलती हूं।'

'मेरा घोड़ा कहाँ है ?' घायल ने उसी स्वर में प्रश्न किया।

मनू ने कहा, 'भाग गया। चिन्ता मत करो। बहुत घोड़े हैं। मेरे पर बैठो। जल्दी नाना, जल्दी।'

नाना बोला, 'मनू मैं सध नहीं सकूंगा।'

मनू ने कहा, 'मैं साध लूंगी। उठो।'

नाना उठा। मनू एक हाथ से घोड़े की लगाम थामे रही, दूसरे से उसने खून में तर नाना को बिठलाया और बड़ी फुर्ती के साथ उचट कर स्वयं पीछे जा बैठी। एक हाथ से घोड़े की लगाम सम्भाली। दूसरे से नाना को थामा और गाँव की ओर चल दी। पीछे-पीछे मझला बालक भी चिन्तित, व्याकुल चला। जब ये गांव के पास आ गये तब कई सिपाही घोड़ों पर सवार इन बालकों के पास आ पहुँचे।

'लगी तो नहीं ?'

'ओफ बहुत खून निकल आया है।'

'आओ, मैं लिये चलता हूं।'

'घर पर घोड़े के पहुंचते ही हम समझ गये थे कि कोई दुर्घटना हो गई।' इत्यादि उद्गार इन आगन्तुकों के मुंह से निकले। इन लोगों

के अनुरोध करने पर भी मनू नाना को अपने ही घोड़े पर सँभाले हुये ले आई। पहुँचते ही कोठी के फाटक पर एक उतरती अवस्था के और दूसरे अधेड़ वय के पुरुष मिले। दोनों त्रिपुण्ड लगाये थे। उतरती अवस्था वाला रेशमी वस्त्र पहने था। उतरती अवस्था वाले को कुछ कम दिखता था। उसने अपने अधेड़ साथी से पूछा, 'क्या ये सब आ गये मोरोपन्त ?'

'हां महाराज।' मोरोपन्त ने उत्तर दिया। जब वे बालक और निकट आ गये तब मोरोपन्त नामक व्यक्ति ने कहा, 'अरे यह क्या ? मनू और नाना साहब दोनों लोहूलुहान हैं !'

जिसको मोरोपन्त ने 'महाराज' कहकर सम्बोधन किया था, वह पेशवा बाजीराव द्वितीय थे। उन्होंने भी दोनों बच्चों को रक्त में सना हुआ देख लिया। घबरा गये।

सिपाहियों ने झटपट नाना को मनू के घोड़े पर से उतारा। मनू भी कूद पड़ी।

मोरोपन्त ने उसको चिपटा लिया। उतावले होकर पूछा, 'मनू कहां लगी है बेटी ?'

'मुझको तो बिलकुल नहीं लगी, काका', मनू ने जरा मुस्कराकर कहा, 'नाना को अवश्य चोट आई है परन्तु बहुत नहीं है।'

'कैसे लगी मनू ?' बाजीराव ने प्रश्न किया।

कोठी में प्रवेश करते करते मनू ने उत्तर दिया, 'उँह, साधारण-सी बात थी। घोड़े ने ठोकर खाई। वह सँभाल नहीं सके। जा गिरे। घोड़ा भाग गया। घोड़ा ऐसा भागा, ऐसा भागा कि मुझको तो हँसी आने को हुई।'

मोरोपन्त ने मनू के इस अल्हड़पने पर ध्यान नहीं दिया। नाना को मनू अपने घोड़े पर ले आई, वे इस बात पर मन ही मन प्रसन्न थे। बाजीराव को सुनाते हुये मोरोपन्त ने पूछा, 'तू नाना साहब को कैसे उठा लाई ?'

मनू ने उत्तर दिया, कैसे भी नहीं। वह बैठ गये। मैं पीछे से सवार हो गई। एक हाथ में लगाम पकड़ ली, दूसरे से नाना को थाम लिया। बस।'

नाना को मुलायम बिछौनों में लिटा दिया गया। तुरन्त घाव को धोकर मरहम-पट्टी कर दी गई। घाव गम्भीर न होने पर भी लम्बा और जरा गहरा था। बाजीराव बहुत चिन्तित थे। उन्होंने रो तक दिया।

मोरोपन्त को विश्वास था कि चोट भयप्रद नहीं है तो भी वह सहानुभूति के कारण बाजीराव के साथ चिन्ताकुल हो रहे थे।

जब मनूबाई और मोरोपन्त उसी कोठी के एक भाग में, जहां उनका निवास था अकेले हुये, मनू ने कहा, 'इतनी जरा-सी चोट पर ऐसी घबराहट और रोना-पीटना !'

'बेटी, चोट जरा-सी नहीं है। कितना रक्त बह गया है !'

'आप लोग जो हमको पुराना इतिहास सुनाते हैं उसमें युद्ध क्या रेशम की डोरों और कपास की पौनियों से हुआ करते थे ?'

'नहीं मनू। पर यह तो बालक है।'

'बालक है ! मुझसे बड़ा है। मलखम्भ और कुश्ती करता है। बाला गुरू उसको शाबाशी देते हैं। अभिमन्यु क्या इससे बड़ा था ?'

'मनू, अब वह समय नहीं रहा।'

'क्यों नहीं रहा, काका ? वही आकाश है, वही पृथ्वी। वही सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र। सब वही हैं।'

'तू बहुत हठ करती है।'

'जब मैं सवाल करती हूँ तो आप इस प्रकार मेरा मुँह बन्द करने लगते हैं। मैं ऐसे तो नहीं मानती। मुझको समझाइये, अब क्या हो गया है !'

'अब इस देश का भाग्य लौट गया है। अङ्गरेजों के भाग्य का सूर्योदय हुआ है। उन लोगों के प्रताप के सामने यहाँ के सब जन निस्तेज हो गये हैं।'

'एक का भाग्य दूसरे ने नहीं पढ़ा है। यह सब मनगढ़न्त है। डरपोकों का ढकोसला।'

'तू जब और बड़ी होगी तब संसार का अनुभव तुझको यह सब स्पष्ट कर देगा।'

'मैं डरपोक कभी नहीं हो सकती। आप कहा करते हैं--मनू तू ताराबाई बनना, जीजाबाई और सीता होना। यह सब भुलावा क्यों? अथवा क्या ये सब डरपोक थीं?'

'बेटी, ये सब सती और वीर थीं, परन्तु समय बदलता रहता है। बदल गया है।'

'यह तो हेर-फेर कर वही सब मनमाना तर्क है।'

'फिर कभी बतलाऊँगा।'

'मैं ऐसी गलत-सलत बात कभी नहीं सुनने की।'

'तो सोवेगी या रात भर सवाल करती रहेगी!' अन्त में खीझकर परन्तु मिठास के साथ मोरोपन्त ने कहा।

मनू खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली, 'काका आपने तो टाल दिया। मैं इस प्रसङ्ग पर फिर बात करूँगी। अभी अवश्य करवट लेते ही सोई,' फिर एक क्षण उपरान्त मनू ने अनुरोध किया, 'काका देख आइये नाना सो गया या नहीं। आपको नींद आ रही हो तो मैं दौड़कर देख आऊँ।'

मोरोपन्त ने मनू को नहीं जाने दिया। स्वयं गये। देख आये। बोले, 'नाना साहब सो गये हैं।'

मनू सो गई। मोरोपन्त जागते रहे। उन्होंने सोचा, 'मनू की बुद्धि उसकी अवस्था के बहुत आगे निकल चुकी है। अभी तक कोई योग्य वर हाथ नहीं लगा। दक्षिण जाकर देखना पड़ेगा। इसी विचार के लौट-फेर में मोरोपन्त का बहुत समय निकल गया। कठिनाई से अन्तिम पहर में नींद आई।

[२]

मनूबाई सवेरे नाना को देखने पहुँच गई। वह जाग उठा था पर लेटा हुआ था। मनू ने उसके सिर पर हाथ फेरा। स्निग्ध स्वर में पूछा, 'नींद कैसी आई ?'

'सोया तो हूँ, पर नींद आई-गई बनी रही। कुछ दर्द है।' नाना ने उत्तर दिया।

मनू—'वह दोपहर तक ठीक हो जायगा। तीसरे पहर घूमने चलोगे न ? सन्ध्या से पहले ही लौट आयेंगे।'

नाना—'सवारी की धमक से पीड़ा बढ़ने का डर है।

मनू—'आरम्भ में कदाचित् थोड़ी-सी पीड़ा हो, परन्तु शीघ्र उसको दाब लोगे और जब लौटोगे याद नहीं रहेगा कि कभी चोट लगी थी।'

नाना—'यदि पीड़ा बढ़ गई तो ?'

मनू—'तो सह लेना, फिर कभी गिरोगे तो चोट कम आंसेगी।'

नाना—'और यदि आज ही फिसल पड़ा तो ?'

मनू—'तो मैं तुमको फिर उठा लाऊँगी। चिन्ता मत करो।'

नाना—'और जो तुम खुद गिर पड़ीं तो ?'

मनू—'तब मैं फिर सवार हो जाऊँगी। किसी की सहायता नहीं लेनी पड़ेगी और घर आ जाऊँगी।'

नाना—'मेरे बस का नहीं।'

मनू—'लड्डू खाओगे ?'

नाना—'इच्छा नहीं।'

मनू—'तब क्या इच्छा है ?'

नाना—'मुझे चुपचाप पड़ा रहने दो !'

मनू—'कब तक ?'

नाना—'तीन-चार दिन लग जायेंगे।'

मनू—'किसने कहा ?'

नाना—'काका कहते थे। वैद्य ने भी कहा था।'

मनू—'वैद्य तो लोभवश कहता होगा, पर दादा क्यों कहते थे!'

नाना—'उनसे ही पूछ लेना। मेरा सिर मत खाओ।'

मनू हँस पड़ी। फिर दाईं ओर का होंठ थोड़ा सा—बिलकुल जरा सा—दबाकर बोली, 'तुम कहते थे—बाजीप्रभु देशपांडे की कीर्ति कमाऊँगा, तानाजी मालुसरे को पछाड़ूँगा, स्वर्ग निवासी छत्रपति शिवाजी को अपने कृत्यों से फड़का दूंगा, श्रीमन्त पन्त प्रधान बाजीराव की बराबरी करूँगा......'

इतने में वहां बाजीराव आ गये। मनू इतनी तीक्ष्णता के साथ बोल रही थी कि बाजीराव ने उसका अन्तिम वाक्य सुन लिया।

बोले, 'तेरी चपलता न जाने कब कम होगी? यह सब क्या बके जा रही है?'

मनू रञ्चमात्र भी नहीं दबी। बोली, 'इसको दादा आप बकना कहते हैं? आप ही हम लोगों को यह सब छुटपन से सुनाते आये हैं। मैं उसी को दुहरा रही हूँ। अब इसे आप बकवास समझने लगे हैं! यह क्यों दादा?'

बाजीराव ने कहा, 'बेटी क्या आज उन बातों के स्मरण से जीवन को चलाने का समय रहा है? महाभारत की कथायें सुनो, और अपने पुरखों की बातें सुनो। अच्छी भली बनो। मन बहलाओ और जीवन को पवित्र सुख से सुखी बनाओ। नाना को चिढ़ाओ मत।'

मनू ने मुस्कराकर होंठ जरा सा दबाया, थोड़ी सी त्योरी संकुचित की और बाजीराव के बिलकुल पास आकर बोली, 'क्या हम लोगों को अब सोकर, खाकर ही जीवन बिताना सिखलाइयेगा दादा?'

बाजीराव को हँसी आई। कुछ कहना ही चाहते थे कि मोरीपन्त कहते हुये आ गये, 'नाना साहब को हाथी पर बिठला कर थोड़ा सा घूम आने दीजिये। हाथी तैयार खड़ा है।'

बाजीराव ने प्रश्न किया, 'हाथी की सवारी में चोट को धमक तो नहीं लगेगी ?'

मोरोपन्त ने उत्तर दिया, 'नहीं, पलकिया में बहुत मुलायम गद्दी तकिये लगा दिये गये हैं और हाथी बहुत धीमे चलाया जावेगा।'

मनू हाथी को देखने बाहर दौड़ गई। नाना निस्तार इत्यादि के लिये उठ गया। मनू ने हाथी पहले भी देखे थे, फिर भी वह इस हाथी को बार-बार चारों ओर से घूम-घूमकर देख रही थी। और उसके डील-डौल पर कभी मुस्करा रही थी, कभी हँस रही थी।

थोड़ी देर बाद बाजीराव नाना को लिये बाहर आये। साथ में छोटा लड़का भी था, मोरोपन्त पीछे-पीछे। हाथी पर पहले नाना को बिठला दिया गया। फिर छोटे को। महावत ने हाथी को अँकुश छुलाई! हाथी उठा।

मनू ने मोरोपन्त से कहा, 'काका, मैं भी हाथी पर बैठूंगी।'

बाजीराज के घुटनों से लिपट कर बोली, 'दादा, मैं बैठूंगी।'

नाना हौदे में महावत के पास बैठा था। उसने महावत को अविलम्ब चलने का आदेश किया। मनू को ओर देखा भी नहीं।

बाजीराव ने नाना से कहा, 'लिये जाओ न मनू को !'

नाना ने मुँह फेर लिया ! तब बाजीराव ने दूसरे बालक से कहा, 'रावसाहब, मनू को ले लेते तो अच्छा होता !'

महावत कुछ ठमका तो नाना ने उसकी पसलियों में उँगली चुभोकर बढ़ने की आज्ञा दी। वह नाना साहब और रावसाहब—दोनों लड़कों—को लेकर चल दिया। मनू की आँख में क्षोभ उतर आया। मोरोपन्त का हाथ पकड़कर बोली, 'हाथी लौटाओ काका। मैं हाथी पर अवश्य बैठूंगी।'

बाजीराव कोठी में चले गये।

मोरोपन्त को भी क्षोभ हुआ, परन्तु उन्होंने उसको नियन्त्रित करके कहा, 'वह चला गया, बेटी।'

मनू मोरोपन्त का हाथ पकड़ कर खींचने लगी, 'महावत को पुकारिये; वह रुक जायगा। मैं बिना बैठे नहीं मानूंगी।'

मोरोपन्त का क्षोभ भड़का। उन्होंने उसका फिर दमन किया। मनू ने फिर हाथी पर बैठने का हठ किया। मोरोपन्त ने क्रुद्ध स्वर में मनू को डाटा, 'तेरे भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। क्यों व्यर्थ हठ करती है?'

मनू तिनक कर सीधी खड़ी हो गई। तमक कर कुछ कहना चाहती थी। एक क्षण ओठ नहीं खुल सके।

मोरोपन्त ने शान्त करने के प्रयोजन से भरसक धीमे स्वर में परन्तु क्रोध के सिलसिले में कहा, 'सैकड़ों बार कहा कि समय को देखकर चलना चाहिये। हम लोग न तो छत्रधारी हैं और न सामन्त—सरदार। साधारण गृहस्थों की तरह संसार में रहन-सहन रखना है। पढ़ी-लिखी होने पर भी न जाने सुनती-समझती क्यों नहीं है। कह दिया कि भाग्य में हाथी नहीं लिखा है। हठ मत किया कर।'

मनू के ओठ सिकुड़े। चिनौती-सी देती हुई बोली, 'मेरे भाग्य में एक नहीं दस हाथी लिखे हैं।'

मोरोपन्त का क्रोध-क्षोभ भीतर सरक गया। हँस पड़े। मनूबाई को पेट से चिपका लिया। कहा, 'अब चल कोई शास्त्र-पुराण पढ़। तब तक वे दोनों लौट आते हैं।'

मनू मचली। बोली, 'मैं अपने घोड़े पर बैठकर सैर को जाऊँगी और उस हाथी को तङ्ग करूँगी।'

मोरोपन्त सीधे शब्दों में वर्जित करना चाहते थे, परन्तु इस उपकरण में सफलता के चिह्न न पाकर उन्होंने तुरन्त बहाना बनाया, घोड़े से यदि हाथी चिढ़ गया तो तू भले ही बचकर निकल आवे, पर नाना साहब, रावसाहब तथा महावत मारे जावेंगे।'

वह मान गई।

'तब तक कुछ और करूँगी' मनूबाई ने कहा, 'पुस्तकें तो नहीं पढ़ूँगी। बन्दूक से निशानेबाजी करूँगी।'

[३]

थोड़ी देर में घण्टा बजाता हुआ हाथी लौट आया। मनू दौड़कर बाहर आई। एक क्षण ठहरी और आह खींचकर भीतर चली गई। नाना और राव, दोनों बालक, अपनी जगह चले गये। बाजीराव ने नाना को पुचकार कर पूछा, 'दर्द बढ़ा तो नहीं ?'

'नहीं बढ़ा' नाना ने उत्तर दिया, 'अच्छा लग रहा है। मनू कहां गई ?'

बाजीराव ने कहा, 'भीतर होगी।'

रावसाहब—'उसे बुरा लगा होगा। नाना ने साथ नहीं लिया मैंने तो कहा था।'

नाना—'वह मुझको सवेरे से ही चिढ़ा रही थी।'

बाजीराव—'क्या ? कैसे ?'

नाना—'उसका स्वभाव है।'

कुछ क्षण उपरान्त मनू वहां आ गई।

नाना ने हँसते हुये कहा, 'छबीली, तुम क्या कोई ग्रन्थ पढ़ रही थीं ?'

मनू जल उठी। बोली, 'मुझसे छबीली मत कहा करो।'

नाना ने और भी हँसकर कहा, 'क्यों नहीं कहा करूँ ? यह तो तुम्हारा छुटपन का नाम है।'

मनू की आंख लाल हो गई। बोली, 'मुझको इस नाम से घृणा है।'

नाना गम्भीर हो गया। बोला, 'मुझको तो यही नाम सुहावना लगता है। छबीली, छबीली।'

'इस नाम को कभी नहीं सुनूंगी।' कहकर मनू वहां से जाने को हुई। बाजीराव ने उसको पकड़ लिया। मनू ने भागना चाहा। न भाग सकी। तब नाना ने भी पकड़ लिया।

'क्या मनू बुरा मान गई ?' नाना ने स्नेह के साथ पूछा।

मनू ओठ सिकोड़कर, रुखाई के साथ बोली, 'अवश्य। आगे इस नाम से मेरा सम्बोधन कभी मत करना।'

इसी समय पहरे वाले ने वाजीराव को सूचना दी, 'झाँसी से एक सज्जन आये हैं। नाम तात्या बतलाते हैं।'

नाना बोला, 'मनू, एक से दो तात्या हुये।'

मनू का क्षोभ घुला। बाजीराव ने प्रहरी से झाँसी के आगन्तुक को बिठलाने के लिये कह दिया।

मनू ने कहा, 'झाँसी वाला तात्या कुश्ती लड़ता होगा ?'

रावसाहब—'झाँसी में कोई वाला गुरु होंगे तो कुश्ती का भी चलन होगा। वह तो राज्य ठहरा।'

नाना—'बड़ा राज्य है ?'

बाजीराव—'बड़ा तो नहीं है, पर खासा है। हमारे पुरखों का प्रदान किया हुआ है, जानते होगे।'

रावसाहब—'अपने को फिर नहीं मिल सकता ?'

मनू—'दान किया हुआ फिर कैसे वापिस होगा ?'

बाजीराव—'हाँ वापिस नहीं हो सकता। झाँसी के राजा हमारे सूवेदार थे। इस समय अपना वस होता तो झाँसी में हम लोगों का मान होता। परन्तु झाँसी तो बहुत दिनों से अङ्गरेज़ों की मातहती में है।'

मनू—'ग्वालियर, इन्दोर, बरोदा, नागपुर, सतारा इत्यादि के होते हुये भी थोड़े से अङ्गरेजों ने आप सबको दाव लिया !

बाजीराव—'यह मानना पड़ेगा कि वे लोग हम से ज्यादा चालाक है। हथियार उनके पास अधिक अच्छे हैं। शूरवीर भी हैं और भाग्य उनके साथ है। और आपसी फूट हमारे साथ—'

मनू—'दादा, क्या भाग्य में शूरवीर होना भी लिखा रहता है ? यदि ऐसा है तो अनेक सिंह स्यार होते होंगे और अनेक स्यार सिंह।'

बाजीराव—'जब स्यार पागल हो जाता है तब सिंह भी उससे डरने लगता है।'

मनू—'वह भाग्य से पागल होता है अथवा किसी कारण से ?' बाजीराव हँसने लगे।

इसी समय मोरोपन्त ने आकर कहा, 'दादा साहब, तात्या दीक्षित झाँसी से आये हैं।'

बाजीराव बोले, 'मैंने उनको बिठला दिया है। यहीं ठहरने, भोजन इत्यादि का प्रबन्ध कर दिया जावे।'

मोरोपन्त ने कहा, 'तात्या मुझको एक बार काशी में मिले थे। यात्रा के लिये गये हुये थे। विद्या-विदग्ध हैं, सज्जन हैं। राजा के यहां उनका मान है।'

मनू ने हँसकर पूछा, 'कुश्ती लड़ते हैं ? तलवार-बन्दूक चलाते हैं ? घोड़े पर चढ़ते हैं ?'

'दुर पगली', मोरोपन्त ने कहा, 'जो यह सब जानता हो वह क्या कुछ है ही नहीं ? दीक्षित जी पक्के ब्राह्मण हैं। शास्त्री, आचार्य।'

नाना ने मनू की ओर देखते हुये कहा, 'और यदि ब्राह्मण हथियार बाँध उठे तो वह पक्के से कच्चा हो जायगा ? मनू ! तुम बतलाओ।'

मनू हँसी। बाजीराव भी हँसे। मोरोपन्त ने मुस्कराकर कहा, 'इस लड़की जैसी वाचाल तो शायद ही कोई हो।'

मनू ने ओठों की समेट में मुस्कराहट को दबाकर गर्दन मोड़ी। फिर विशाल नेत्र संकुचित करके बोली, 'आप ही कहा करते हैं—ताराबाई ऐसी थीं, जीजाबाई ऐसी थीं, अहिल्या ऐसी, मीरा ऐसी। मैं पूछती हूं—क्या ये सब मुँह पर मुहर लगाये रहती थीं ?'

[४]

भोजनोपरान्त तात्या दीक्षित से बाजीराव और मोरोपन्त मिले। तात्या दीक्षित ज्योतिष और तन्त्र के शास्त्री थे। काशी, नागपुर, पूना इत्यादि घूमे हुये थे। महाराष्ट्र समाज से काफी परिचित थे। बिठूर (ब्रह्मावर्त) में बाजीराव के साथ दक्षिणी ब्राह्मणों का एक बड़ा परिवार आ बसा था। *उस काल में मलखम्भ और मल्लयुद्ध के आचार्य बाला गुरू का अखाड़ा दक्षिणियों और हिन्दुस्थानियों से भरा रहता था और गुरू बल, यौवन और स्वाभिमान को वितरित-सा करते रहते थे। वह स्वयं इतने दृढ़, बलिष्ट और स्वाभिमानी थे कि उनको लेटने तक में चित्त होने से नफरत थी! औंधे लेटा करते थे।

मोरोपन्त ने अवसर निकाल कर तात्या दीक्षित से प्रार्थना की, 'दीक्षित जी, मुझे अपनी कन्या मनूबाई के विवाह की बड़ी चिन्ता लग रही है। मैंने बहुत खोज की है परन्तु कोई योग्य वर नहीं मिला। अब भी खोज कर रहा हूं। आपका संसार में बहुत परिचय है। आप इस कन्या के लिये योग्य वर ढूंढ़ दीजिये। बड़ा अनुग्रह होगा।'

बाजीराव ने भी कहा, 'कन्या बहुत सुन्दर है। बड़ी कुशाग्र बुद्धि और होनहार। उसके लिये अच्छा वर ढूंढ़ना ही चाहिये।

मोरोपन्त बोले, 'सब हथियार चलाना बहुत अच्छी तरह जानती है। घोड़े की सवारी में पुरुषों के कान पकड़ती है। जब चार वर्ष की थी, उसकी मां का देहान्त हो गया था। इसलिये मैंने स्वयं उसकी दिन-रात देखभाल की है, लालन-पालन किया है। मराठी, संस्कृत और हिन्दी पढ़ाई है। शास्त्रों में उसकी रुचि है।'

बाजीराव ने कहा, 'बालिका है, इसलिये इस आयु में जितना पढ़ सकती थी उतना ही पढ़ा है परन्तु तेज बहुत है। पूजा-पाठ मन लगाकर करती है।'

---

*इनकी संख्या लगभग आठ सहस्र थी। बाजीराव की पेंशन का एक बड़ा भाग इन लोगों पर खर्च होता था।

पूजा-पाठ सम्बन्धी रुचि पर बाजीराव ने ज्यादा जोर दिया। अश्वा-रोहण इत्यादि पर बहुत कम।

तात्या दीक्षित ने जन्मपत्री मांगी। मोरोपन्त ने ला दी। दीक्षित ने उसकी परीक्षा करके कहा, 'ऐसी जन्मपत्री मैंने कदाचित् ही पहले कभी देखी हो। इसको कहीं की रानी होनी चाहिये।'

मोरोपन्त फूल गये। बाजीराव को भी सन्तोष हुआ। बोले, 'जब आप जावें साथ में जन्मपत्री लेते जावें। योग्य वर से मेल खाने पर हमको सूचित करें।'

दीक्षित ने स्वीकार किया।

उसी समय रावसाहब के साथ वहाँ मनू आ गई।

बाजीराव ने दीक्षित से कहा, 'यही वह कन्या है।'

दीक्षित ने मनूबाई के विशाल नेत्र, भौंरे को लजाने वाले चमकीले बाल, स्वर्ण-सा रङ्ग और सम्पूर्ण चेहरे का अतीव सुन्दर बनाव देखकर प्रसन्नता प्रकट की।

दीक्षित ने ममता प्रदर्शित करते हुये कहा, 'आ बेटी आ! तूने शास्त्र पढ़े हैं? उच्च कुल की ब्राह्मण कन्या के लिये यह उपयुक्त ही है।'

मनू और रावसाहब बाजीराव के पास मसनद पर बैठ गये।

मनू बिना किसी संकोच के बोली, 'मैंने शास्त्र आंखों से देख भर लिये हैं। मुझको तुलसीदास की रामायण बड़ी प्रिय लगती है, परन्तु तलवार चलाना, मलखम्भ भांजना, घोड़े की सवारी, ये उससे भी बढ़कर भाते हैं...।'

बाजीराव ने हँसकर टोका, 'और बात बनाना, चबड़-चबड़ करना इन सबसे बढ़कर अच्छा लगता है।'

मोरोपन्त के मन में क्षणिक रोष आया। वह चाहते थे कि लड़की तात्या दीक्षित के सामने ऐसी बर्ते कि शील-संकोच का अवतार जान पड़े।

'परन्तु' दीक्षित ने हँसकर कहा, 'बालिका है। अभी संसार का उसने देखा ही क्या है।'

'बिलकुल अबोध है', मोरोपन्त बोले, 'सयानी होने पर अपने घर-द्वार का खूब प्रबन्ध करेगी।'

तात्या दीक्षित ने उत्साहित होकर भविष्यद्वाणी-सी की, 'यह किसी राज्य की रानी होगी।'

रावसाहब अभी तक मनू के पीछे चुप बैठा था। बोला, 'राज्य तो सब अङ्गरेजों ने ले लिये हैं। नये राज्य कहाँ से बनेंगे ?'

'राज्यों की और राज्य बनाने वालों की न कमी रही है और न रहेगी।' तात्या दीक्षित ने हँसकर कहा।

मनूबाई मुस्कराकर बोली, 'पर कुछ लोग कहते हैं कि अङ्गरेजों ने ऐसा जोर बांध लिया है कि कोई सिर ही नहीं उठा सकता।'

बाजीराव विषयान्तर करना चाहते थे। बोले, 'झांसी में बाग-बगीचे कितने हैं ?'

तात्या दीक्षित—'बहुत हैं। राजा के बगीचे हैं। सरदारों और सेठ-साहूकारों के हैं! नगर के भीतर ही अनेक हैं।'

मनू—'सेना बड़ी है ?'

दीक्षित—'खासी है !'

मनू—'घोड़े अच्छे हैं ?'

रावसाहब—'हाथी ?'

दीक्षित—'बहुत से हैं।'

मनू—'कितने ?'

इतने में वहां सुगठित शरीर का एक युवक आया।

बाजीराव ने पूछा, 'क्या है तात्या ?'

अपने नाम के एक और मनुष्य को सम्बोधित होते देखकर दीक्षित चौंका।

मनू ने बेधड़क कहा, 'वह हमारे गुरू के अखाड़े के प्रधान हैं। आपके नामधारी।'

युवक तात्या ने पेशवा से विनय की, 'महाराज, गुरूजी ने कहलवाया है कि झांसी से जो आचार्य आये हैं वे हमारे अखाड़े को देखने की कृपा करें।'

दीक्षित ने हामी भरी। तीसरे पहर सब लोग बाला गुरू के अखाड़े पर गये। मलखम्भ और मल्लयुद्ध का प्रदर्शन हुआ।

[५]

महाराष्ट्र में सतारा के निकट वाई नाम का एक गांव है। पेशवा के राज्य काल में वहां कृष्णराव ताम्बे को एक ऊँचा पद प्राप्त था। कृष्णराव का पुत्र बलवन्तराव पराक्रमी था।

उसको पेशवा की सेना में उच्चपद मिला। बलवन्तराव के दो लड़के हुये—एक मोरोपन्त और दूसरा सदाशिव। ये दोनों पूना दरबार के कृपा पात्र में थे।

उस समय पेशवा बाजीराव द्वितीय पूना में रहते थे। सन् १८१८ में अङ्गरेजों ने पेशवाई खत्म करके बाजीराव को आठ लाख रुपया वार्षिक पेंशन और बिठूर की जागीर दी। बाजीराव ब्रह्मावर्त (बिठूर) चले आये। बाजीराव के निज भाई चिमाजी आपा साहब थे। वे बनारस चले गये। मोरोपन्त ताम्बे पर चिमाजी की बड़ी कृपा थी। मोरोपन्त चिमाजी के साथ पूना से काशी चले आये और उनका काम-काज करते रहे। इसके उपलक्ष्य में मोरोपन्त को पचास रुपया मासिक वेतन मिलता था। यही मोरोपन्त मनूबाई के पिता थे।

मोरोपन्त की पत्नी का नाम भागीरथीबाई था। सुशील, चतुर, रूपवती।

मनूबाई कार्तिक बदी १४ सं० १८९१ (१९ नवम्बर सन् १८३५) के दिन काशी में इन्हीं से उत्पन्न हुई थी।

चिमाजी का शरीरान्त हो गया। मोरोपन्त को अपने कुटुम्ब के पालन के लिये कोई सहारा काशी में नहीं दिखलाई पड़ रहा था। बाजीराव ने काशी से बिठूर बुला लिया। मोरोपन्त पर बाजीराव की भी बहुत कृपा रही।

मनूबाई चार वर्ष की ही थी जब उसकी माता–भागीरथीबाई का देहान्त हो गया। मनू के पालन-पोषण और लाड़-दुलार का सम्पूर्ण भार मोरोपन्त पर आ पड़ा। मोरोपन्त ने मनू को बहुत प्यार के साथ पाला। लड़के से बढ़कर।

मनू इतनी सुन्दर थी कि छुटपन में बाजीराव इत्यादि उसको स्नेहवश 'छबीली' के नाम से पुकारते थे।

बाजीराव के अपनी कोई सन्तान न थी। इसलिये उन्होंने नाना धोडूपन्त नाम के एक बालक को गोद लिया। नाना तीन भाई थे—नाना, बाला और राव साहब। बाला उस समय बिठूर में न था। छोटा सहोदर रावसाहब था।

मनू और ये दोनों लड़के साथ खेलते-खाते और पढ़ते थे। मलखम्भ, कुश्ती, तलवार-बन्दूक का चलाना, अश्वारोहण, पढ़ना-लिखना इत्यादि सब इन तीनों ने छुटपन से साथ-साथ सीखा। मनू चपल, हठीली और बहुत पैनी बुद्धि की थी। कम आयु की होने पर भी वह इन हुनरों में उन दोनों बालकों से बहुत आगे निकल गई। स्त्रियों की सङ्गति कम प्राप्त होने के कारण वह लाज संकोच की अतीत दबन और झिझक से दूर हटती गई थी।

नाना आठ लाख वार्षिक पेंशन अपने और अपने भाइयों की परम्परा के जीवन सुख के लिये काफ़ी से अधिक समझता होगा। बाजीराव को पेंशन 'उसको और उसके कुटुम्ब के लिये दी गई थी।' बिना किसी प्रयत्न प्रयास के आठ लाख वार्षिक मिलते जावें तो फिर किस महत्वाकांक्षा की जोखिम के लिये और अधिक हाथ-पैर हिलाये जावें।

मनूबाई ऐसा नहीं सोचती थी। छत्रपति शिवाजी इत्यादि के आधुनिक और अर्जुन–भीम इत्यादि के पुरातन आख्यानों ने मनू की कल्पना को एक अस्पष्ट और अदम्य गुदगुदी दे रक्खी थी।

[६]

दूसरे दिन दीक्षित झाँसी चला गया।

झांसी के राजा गङ्गाधरराव विधुर थे। अधेड़ अवस्था से कुछ आगे थे। विवाह करना चाहते थे परन्तु अपने कठोर स्वभाव के कारण बहुत बदनाम थे।

दीक्षित ने गङ्गाधरराव की जन्मपत्री से मनू की जन्मपत्री का मिलान किया। दोनों के ग्रहों से सन्तुष्ट होकर उसने राजा से चर्चा की और उनको राजी कर लिया।

दीक्षित झांसी राज्य के कुछ कर्मचारियों को लेकर बिठूर को लौटा। गङ्गाधरराव के साथ मनू के विवाह सम्बन्ध को बाजीराव और मोरोपन्त ने स्वीकार कर लिया।

मनूबाई का श्रृङ्गार कराया गया। रङ्गीन रेशमी साड़ी स्वर्ण के आभूषण, माणिक मोती के हार। बाजीराव ने अपने वे सब आभरण मनूबाई से फिर वापिस नहीं लिये।

मनूबाई के बड़े-बड़े गोल नेत्र मणि-मुक्ताओं को भी आभा दे रहे थे। दुर्गा सी जान पड़ती थी।

सगाई वाग्दान की रीति होने के बाद मनूबाई, नानासाहब और रावसाहब एक ही कमरे में इकट्ठे हुये। वे दोनों लड़के भी रेशमी वस्त्रों और आभूषणों से लदे थे। सगाई का उत्सव बाजीराव ने धूम-धाम से करवाया। बालकों में बातचीत होने लगी।

नाना—'अब तो मनू तू झांसी से हाथियों पर बैठकर ब्रह्मावर्त आया करेगी।'

मनू—'एक हाथी पर या दस पर?'

नाना—'एक पर बैठेगी, बाकी पर मन्त्री सेनापति इत्यादि बैठे आवेंगे।'

मनू—'मुझको तो घोड़े की सवारी पसन्द है।'

नाना—'झाँसी में बैठ पावेगी ?'

मनू—'कौन रोक लेगा ?'

नाना—'सुनता हूं राजा बड़ा क्रोधी है।'

मनू—'तो क्या मुझे सूली मिलेगी ?'

रावसाहब—'अरे नहीं। पर नवकर-झुककर चलना पड़ेगा।'

मनू ने नवकर झुककर कमरे का एक चक्कर काटा। हँसकर बोली, 'ऐसे ? चलना पड़ेगा ?'

वे दोनों लड़के भी हँस दिये। मनू की कान्ति से वह वर झिलमिला उठा। और जब वे बालक हँसे, उनके दांतों की दीप्ति से वह घर दमक उठा।

रावसाहब—'मनू, तुम्हारे चले जाने पर हम लोगों को सब तरफ सूना-सूना लगेगा।'

मनू—'तो साथ चले चलना।'

नाना—'काका एकाध महीने के लिये जाने दे सकते हैं, अधिक समय के लिये नहीं।'

मनृ—'अधिक समय तो यहीं रहना चाहिये। बाला गुरू से तुमको अभी बहुत-बहुत सीखना है। आया ही क्या है ? मलखम्भ कुश्ती इत्यादि से शरीर को खूब कमाओ। अच्छी तरह से हथियार चलाना सीखो···।'

नाना—'और फिर दिल्ली पर धावा बोल दो।'

मनू—'दिल्ली में क्या रक्खा है ! दादा, काका और अखाड़े के सब समझदार लोग चर्चा करते हैं कि दिल्ली के कटघरे में अब एक कठपुतली भर रह गई है।'

नाना—'अब तो सब तरफ अङ्गरेजों का चरचराटा है।'

मनू हँस पड़ी।

रावसाहब ने कहा, 'तो क्या अङ्गरेज हमको वैसे ही निगल जायेंगे ?'

मनू हँसते-हँसते बोली, 'नाना साहब को कदाचित् विश्वास नहीं होता कि अङ्गरेज भी हराये जा सकते हैं।'

नाना ज़रा क्रुद्ध गया। कहने लगा, 'छबीली को सिवाय घमण्ड मारने के और कुछ आता ही नहीं।'

उन उज्ज्वल विशाल नेत्रों को और भी विस्तार मिला। मनू बोली, 'फिर छबीली कहा?'

नाना हँस पड़ा; 'आज तो तुमने अपने ही मुँह से छबीली कह दिया! ओह मात खाई!' नाना ने कहा।

मनू भी हँसी। बोली, 'आगे कभी मत कहना!'

नाना ने गम्भीर मुख मुद्रा करके कहा, 'अब तो झांसी की रानी कहा करूँगा।'

मनू मुस्कराई।

उस मुस्कान में झाँसी का कितना महान और कैसा अमर इतिहास छिपा पड़ा था!

उसी समय वहां बाजीराव और मोरोपन्त आ गये। बाजीराव प्रसन्न थे और मोरोपन्त आनन्द-विभोर। उन बच्चों को सुखी देखकर वे लोग उस कमरे के वातावरण में समा गये। बाजीराव के मुँह से निकल पड़ा, 'मनू तू ऐसी भाग्यवती हो कि भाग्यों को बांटती रहे!'

मोरोपन्त ने मनू को चिढ़ाने के तात्पर्य से कहा, 'श्रीमन्त ने इसका छुटपन में क्या नाम रक्खा था? मैं तो भूल ही गया।'

मनू ने गर्दन मोड़कर ओठ सिकोड़े, आंखों में क्रोध लाने की चेष्टा की। 'ऊँ' निकला और मुस्करा दी।

बाजीराव बोले, 'क्या नाम था मनू? तू ही बतला दे बेटी।'

बाजीराव के पेट पर अपना सिर रखकर मनू ने कहा, 'नहीं दादा। छबीली नाम अच्छा नहीं लगता।'

खिलखिला कर सब हँस पड़े।

उसी समय तात्या ने आकर कहा, 'सरकार ! लोग इकट्ठे हो गये हैं। बातचीत होनी है।'

वे तीनों चले गये। बैठक में ब्रह्मावर्त निवासी महाराष्ट्र के प्रमुख ब्राह्मण विवाह की शर्तों की चर्चा कर रहे थे।

मोरोपन्त के पास सोना-चांदी नहीं था पर जो कुछ था वह उसे विवाह में लगा देने को तैयार थे। विठूर के इन प्रतिष्ठित ब्राह्मणों की मध्यस्थता में तै हुआ कि विवाह का व्यय झांसी के राजा वहन करेंगे और विवाह झांसी में होकर होगा। यह भी तय हुआ कि मोरोपन्त झांसी में ही स्थायी तौर पर रहा करेंगे और उनकी गणना झांसी के सरदारों में होगी।

झांसी के मिहमान मोरोपन्त को कन्या सहित अपने साथ लिवा ले जाना चाहते थे। लेकिन यह ठीक न समझ कर मोरोपन्त उन लोगों के साथ नहीं गये। अपने सुभीते के लिये उन्होंने कुछ समय उपरान्त झांसी आने का संकल्प प्रकट किया। विवाह का मुहूर्त निश्चित करके मिहमान झांसी चले गये। बाजीराव ने बाला गुरू के अखाड़े वाले तात्या को झांसी में मोरोपन्त के लिये निवास-स्थान इत्यादि की उचित व्यवस्था के लिये उन लोगों के साथ भेजा। यह ब्राह्मण था। आगे चलकर इतिहास में यही युवा तात्या टोपे के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

झांसी के मिहमानों के चले जाने के कुछ दिन उपरान्त मोरोपन्त, तात्या इत्यादि मनू को लेकर झांसी आ गये।

[७]

विवाह का मुहूर्त शोधा जा चुका था। घूमधाम के साथ तैयारियाँ होने लगीं।

नगर वाले गणेश मन्दिर में सीमन्ती, वरपूजा इत्यादि रीतियाँ पूरी की गईं। राजा गंगाधरराव घोड़े पर बैठकर गणेश मन्दिर गये। उस दिन मनूबाई ने पहले-पहल गंगाधरराव को देखा। गंगाधरराव का मुख-सौन्दर्य अब भी वैसा ही था। आँखों का तेज लाल डोरों के कारण आकर्षक कम, भयानक ज्यादा मालूम होता था। पेट कुछ बढ़ा हुआ, परन्तु भद्दा नहीं लगता था। रंग साँवलापन लिये हुये। सारी देह एक बलवान पुरुष की।

मनू का ध्यान शरीर के इन अङ्गों पर एकाध क्षण ठहर कर उनके सवारी के ढङ्ग पर जा अटका। वह मुस्कराईं। अपनी सम्मति प्रकट करने के लिये आस-पास लड़कियों में किसी उपयुक्त पात्र को मन ही मन ढूंढ़ने लगीं। उसी समय मनू ने सोचा, यदि इस घड़ी नाना या राव यहाँ होते तो उनको सब बातें सुनाती समझाती।

राजा गंगाधरराव धीरे-धीरे रुकते-रुकते गणेश मन्दिर को जा रहे थे। नगर निवासी प्रणाम करते जाते थे और वे मुस्करा-मुस्करा कर प्रणाम का जवाब देते जाते थे।

यकायक मनू के सामने एक मराठा कन्या आई। आयु १५ से कुछ ऊपर। शरीर छरेरा, रंग हल्का साँवला, चेहरा ज़रा लम्बा, आँखें बड़ी, नाक सीधी, ललाट प्रशस्त और उजला। जैसे ही वह मनू के पास आई उसने आँखें नीची करके आदर पूर्वक प्रणाम किया। मनू को ऐसा लगा मानो पहले से परिचित हो। उससे बात करने की तुरन्त इच्छा उमड़ी।

बोलीं, 'तुम कौन हो ?'

उसने उत्तर दिया, 'आपकी दासी, सुन्दर मेरा नाम है।'

मनू—'मेरी दासी ! कैसे ?'

सुन्दर—'आप हमारी महारानी हैं। मैं सेवा में रहूंगी। आपकी दासी होकर अपना भाग्य बढ़ाऊँगी।'

मन—'मेरी दासी कोई भी न हो सकेगी। मेरी सहेली होकर रहोगी।'

मनू ने उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा। वह झिझकी। मनू ने उसका हाथ ढीला करके पूछा, 'तुम क्या सचमुच सदा मेरे पास रहोगी ?'

'सदा सरकार।' सुन्दर ने उत्तर दिया, 'हम १६ दासियां आपकी सेवा में रहा करेंगी।'

मनू को हँसी आई, परन्तु उसने रोक ली। गंगाधरराव की सवारी अब भी सामने थी। मनू ने धीरे से सुन्दर से कहा, 'तुम घोड़े पर चढ़ना जानती हो ?'

सुन्दर बोली, 'थोड़ा सा। दौड़ना खूब जानती हूं। कोस भर दौड़ जाऊँगी और हाँफ न आयेगी।'

'धीरे-धीरे जाने वाले घोड़े को भी यह जांघ से कसे जा रहे हैं !' गंगाधरराव की ओर संकेत करके मनू ने कहा।

सुन्दर ने चकित होकर पूछा, 'आपने कैसे जाना सरकार।'

मनू हँसी। दाँतों की सफेदी चेहरे के निखरे गोरे रंग से होड़ लगाने लगी।

मनू ने कहा, 'तुम हथियार चलाना जानती हो सुन्दर ?

'नहीं सीखा सरकार।' सुन्दर ने जवाब दिया।

इतने में गंगाधरराव की सवारी आगे बढ़ गई। दो लड़कियाँ और मनू के निकठ आईं। सुन्दर की ही उम्र की एक। दूसरी लगभग १४ वर्ष की। उन्होंने भी सिर झुकाकर प्रणाम किया।

सुन्दर ने परिचय दिया, 'इसका नाम मुन्दर है और इसका काशी। मेरी तरह यह भी आपकी दासियां हैं।'

मनू ने बिना किसी प्रयत्न के कहा, 'मेरी सहेलियां बनकर रहोगी। दासी मेरी कोई भी न होगी।'

वे दोनों हर्ष के मारे फूल गईं। काशी जरा छोटे कद की और सुगठित शरीर वाली, सुन्दर छरेरे शरीर की और जरा लम्बी; मुन्दर और काशी दोनों गौर वर्ण की। मुन्दर का चेहरा बिलकुल गोल, आँखें सुन्दर से कुछ ही छोटीं, परन्तु चञ्चल और तेज। काशी की कुछ बड़ीं और स्थिर।

मनू ने तीनों से अलग-अलग प्रश्न किये।

'तुम लोग कौन हो?'

'तीनों ने उत्तर दिया, 'कुणभी।'

'झांसी में कब आईं?'

'पुरखे आये थे।'

'झाँसी के आस-पास घूमी हो?'

'बहुत कम।'

'घोड़े पर चढ़ना जानती हो?'

'थोड़ा-थोड़ा।'

'हथियार चलाना?'

सुन्दर तो पहले ही बतला चुकी थी। मुन्दर ने तलवार चलाना सीखा था और काशी ने बन्दूक। मनू को जानकर अच्छा लगा।

बोली, 'मैं तुम लोगों को घोड़े पर चढ़ना सिखाऊँगी। हथियार चलाना भी। मलखम्ब जानती हो?'

वे तीनों सिर नीचा करके मुस्कराईं। सिर हिला दिये—'नहीं जानतीं।'

'गाना-बजाना जानती हो?' मनू ने बहुत सूक्ष्म चुटकी लेते हुये कहा।

सुन्दर बोली, 'वह तो हम तीनों जानती हैं, हम लोग जब सरकार की मर्जी होगी, सुनावेंगी।'

मनू ने कहा, 'जब इच्छा होगी सुनूंगी। परन्तु मुझको उसका शौक कुछ कम है। वह अच्छा है किन्तु घुड़सवारी, हथियार चलाना, मलखम्भ, कुश्ती, प्राचीन गाथाओं का श्रवण—ये सब मुझको अधिक भाते हैं।'

'कुश्ती!' सुन्दर ने अपने नेत्रों को जरा घुमाकर आश्चर्य प्रकट किया।

मनू के होठों पर सहज मुस्कराहट आई। बोली, 'हाँ कुश्ती भी। यह बहुत आवश्यक है। फिर किसी समय बतलाऊँगी। अभी अवसर नहीं है।'

इतने में कुछ और स्त्रियाँ पास आने को हुईं परन्तु कुछ दूर ठिठक गईं। मनू ने उनको उस समय अपने पास बुला लेने की जरूरत नहीं समझी।

मनू कहती गई, 'पुरुषों को पुरुषार्थ सिखलाने के लिये स्त्रियों को मलखम्भ, कुश्ती इत्यादि सीखना ही चाहिये। खूब तेज दौड़ना भी। नाचने-गाने से भी स्त्रियों का स्वास्थ्य सुधरता है, परन्तु अपने को मोहक बना लेना ही तो स्त्री का समग्र कर्तव्य नहीं है।'

चौदह वर्ष की मनू अपने से अधिक वय वाली लड़कियों से जो कह गई, वह पास ठिठकी हुई उन स्त्रियों ने भी सुन लिया।

सुन्दर, मुन्दर और काशी यह सब सुनकर जरा झेंपी। उनकी मुस्कराहट चली गई। परन्तु मनू अब भी मुस्करा रही थी। वह मुस्करा-हट उन लड़कियों को, उन स्त्रियों को जीवन के कोष में से कुछ दे सा रही थी। उन लड़कियों का सहमा हुआ जी शीघ्र ही लहलहा गया। अन्य लड़कियों तथा स्त्रियों को भी मनू ने अपने निकट बुला लिया। ये स्त्रियां उन तीन लड़कियों की अपेक्षा अधिक सहमी हुई थीं।

मनू ने उनको अपना मन खोलने के लिये उत्साहित किया। स्त्रियों की ओर से प्रस्ताव, गायन इत्यादि द्वारा अपने हर्ष को प्रदर्शित करने का हुआ। उसने बिना किसी विशेष उत्साह के स्वीकार किया।

जो और लड़कियाँ उन स्त्रियों के साथ थीं, उनके विषय में मनू ने प्रश्न किये। वे सब दासियों के रूप में मनू के पास रहने के लिये नियुक्त कर दी गई थीं क्योंकि विवाह का मुहूर्त आ रहा था। उसके बाद भी उनको मनू के पास ही रहना था।

ये लड़कियाँ अब्राह्मण जातियों में से रूप-रस इत्यादि के पैमानों से तौल कर चुनी जाती थीं और उनको आजन्म अपनी रानी के साथ कुमारी होकर रहना पड़ता था। यदि वे विवाह कर लेतीं तो उनको महल की नौकरी छोड़नी पड़ती थी। दहेज में दासियों और दासों का देना महाराष्ट्र में नहीं था। शायद राजपूताने के कुछ रजवाड़ों से वहाँ पहुंचा हो। शायद इसका प्रारम्भ भिक्षुणी और देवदासी प्रथा से निसृत हुआ हो। इन दासियों के जीवन कितने कुतूहलों और कितने कोलाहलों से भरे रहते होंगे और इनके जीवन कितने दुःखान्त होते होंगे उसकी कल्पना की जा सकती है। इनको जन्म देने वाले लगभग उसी प्रकार के माता-पिता, केवल धन-लोभ से इनको महलों के सुपुर्द कर देते थे। फिर, या तो वे अपने सौन्दर्य के जमाने में राजा के विलास की सामग्री बनी रहती थीं या जीवन के स्वाभाविक मार्ग पर जाकर महल से अलग हो जाती थीं।

मनू ने दासियों के इस चित्र की कल्पना की।

उसने अपनी उसी सहज मुस्कराहट से कहा, 'मैं तुमको दासियाँ बनाकर नहीं रक्खूंगी। तुम मेरी सखा-सहेली बनोगी। केवल एक शर्त है।'

मनू ने अपने विशाल नेत्रों की दृष्टि को उन पर बिखेरा. बोली, 'जानती हो क्या ?'

उन सबों ने 'नाहीं' के सिर हिलाये।

मनू ने कहा, 'जो मेरे साथ रहना चाहें, उसको घोड़े की सवारी

अच्छी तरह आनी चाहिये। तलवार, बन्दूक, बर्छा, छुरी-कटार, तीर-

तमञ्चा इत्यादि का चलाना—अच्छी तरह चलाना सीखना पड़ेगा। दोनों हाथों से हथियार एक से चलाना सीख जावें तो और भी अच्छा।'

पुरुषों जैसे काम सीखने की बात सुनते ही स्त्रियों के चेहरों पर लाज की हल्की लाली दौड़ गई। परन्तु मन के हर्ष और उत्साह ने लाज को दबा दिया।

काशी ने स्थिर दृष्टि और स्थिर स्वर में कहा, 'हम लोगों को जो कुछ सिखलाया गया है उतना ही हम जानती हैं। अब जो कुछ सरकार की आज्ञा होगी उसको हम लोग जी लगाकर दृढ़ता के साथ सीखेंगे। परन्तु कुश्ती–मलखम्भ कौन सिखलावेगा ?

मनू ने तुरन्त बतलाया, 'जितना मैं जानती हूँ, मैं सिखलाऊँगी। बाकी बिठूर के प्रसिद्ध आचार्य बाला गुरू। उनको यहां बुला दूंगी।'

बाला गुरू का नाम सुनते ही लड़कियां शरमा गईं। और उनसे बड़ी उम्र की लड़कियां हँस पड़ीं। उस हँसी पर मन के मन में क्षोभ उठा परन्तु मनू ने उसको नियन्त्रित कर लिया।

फिर उसी मुस्कराहट के साथ बोली, 'बाला गुरू देवता हैं और न भी हों तो तुमको क्या डर। स्त्रियां दृढ़ता का कवच पहिने तो फिर संसार में ऐसा पुरुष कोई हो ही नहीं सकता जो उनको लूट ले। बाला गुरू के साथ लड़कर कुश्ती सीखने की जरूरत नहीं पड़ेगी। वह बतलाया भर करेंगे। अखाड़े में उतर कर सिखलाऊँगी मैं।'

गणेश मन्दिर पास ही था। वाद्य बज रहे थे। उनमें होकर कभी-कभी मीठी शहनाई की चहक भी सुनाई पड़ जाती थी। स्त्रियां मनू से शृङ्गार-रस की बात करने आई थीं। अपने आदर के झरोखे में होकर, मनू के मन की धारा गङ्गाधरराव की सवारी बाजों-गाजों और झांसी निवासियों के हर्षोन्माद से संघर्ष पाकर दूसरी ओर चली गई थी।

सब स्त्रियां, लड़कियां भी अपने अच्छे से अच्छे वस्त्र और आभूषण पहिने हुये थीं। केश खूब संवारे गये थे और उनमें रंग बिरंगे और

सुगन्धित फूल गुँथे। मनू के केशों में भी फूल थे। मनू ने हँसकर कहा, 'तुम लोग यदि कुश्ती सीखने के लिये इसी समय अखाड़े में उतरो तो क्या हो ?'

सुन्दर मुस्कराकर बोली, 'तो इन फूलों से सारा अखाड़ा भर जावेगा।'

मनू ने हँसकर कहा, 'और तुम्हारे बालों में अखाड़े की मिट्टी भर जावेगी।'

वे सब खिलखिला पड़ीं।

मनू बोली, 'परन्तु वह मिट्टी तुम्हारे केशों पर इन फूलों से कहीं अधिक सुहावनी लगेगी।'

मुन्दर बोली, 'सरकार बालों की शोभा मिट्टी से !'

मनू ने मुन्दर का कन्धा हिलाकर कहा, 'ये फूल कहाँ से आये ? कहाँ जायेंगे ? ये क्या मिट्टी से बढ़कर हैं ?'

मनू की बात में, अपनी दादियों से सुनी हुई संसार की अस्थिरता की भाईं सुनकर वे सब सहम गईं।

मनू समझ गई। बोली, 'नहीं फूलों से नाता बनाये रक्खो, परन्तु मिट्टी से सम्बन्ध तोड़ कर नहीं।'

स्त्रियों के मन पर एक दार्शनिक झकोर ठोकर दे गई। उन्होंने ऊँचे स्वर में 'हाँ, हाँ' कही, परन्तु आँखों से ऐसा जान पड़ता था, मानों उसका आनन्द कहीं भाग गया, उन्हें अपनी असङ्गत अवस्था में क्लेश होने लगा, मानों मनू ने उनके फूलों की भर्त्सना की हो और उनके आदर का अपमान।

मनू ने उन सब स्त्रियों से कहा, 'तुम गणेश मन्दिर में जाकर देखो, क्या होना है। मैं तब तक इन तीनों से बात करती हूं। परन्तु एक बात सुनती जाओ। मुझको तुम्हारे फूल बहुत अच्छे लगे इनको फेंक मत देना।'

इस बात पर प्रसन्न होकर वे सब चली गईं। केवल सुन्दर, मुन्दर और काशी रह गईं।

मनू बोली, 'मैं सुनती हूं झाँसी के लोग फूलों को बहुत प्यार करते हैं। अच्छा है। मुझको भी पसन्द हैं, परन्तु क्या दुवले-पतले घोड़े पर सोने-चांदी का जीन अच्छा लगता है?'

सुन्दर ने उमंग के साथ तुरन्त कहा, 'सरकार, मैं आपकी बात अब समझी।'

सीमन्ती आदि की प्रथायें पूरी होने के उपरान्त गणेश मन्दिर में गायन-वादन और नृत्य हुये और, एक दिन विवाह का भी मुहूर्त आया।

विवाह के उत्सव पर आस-पास के राजा भी आये।

कोठी कुआं वाले भवन में भांवर पड़ने को थी। बाहर गायन-वादन और नृत्य हो रहा था। सामने वाले मकान में मोतीबाई, जूहीबाई इत्यादि अभिनेत्रियां झरपों के पीछे वस्त्राभूषणों और पुष्पों से लदी बैठी थीं। सोने के वर्कों से लिपटे पान और बढ़िया इत्र एक सरदार लाये। उन्होंने कहा कि भांवर शुरू हो गई। उसी समय भीतर एक घटना हुई।

पुरोहित ने मनूबाई की गांठ गंगाधरराव से जोड़ने के लिये चादर और वधू की साड़ी के छोर हाथ में पकड़े। वृद्धावस्था के कारण हाथ कांप रहा था। गांठ लगाने में ज़रा सा विलम्ब हुआ। गांठ अच्छी तरह नही बंध पा रही थी। बार-बार हाथ काँप जाता था।

मनू ने सोचा, 'मैं ही क्यों न इसको बाँध दूं?'

परन्तु उसने विचार को नियन्त्रित कर लिया। गांठ तो पुरोहित ने बांध ली, लेकिन वह काँपते हुये हांथों से गांठ का फन्दा कसने में कुछ क्षणों का विलम्ब कर रहे थे। मनू से न रहा गया। बिना मुस्कराहट के और दृढ़ स्वर में बोली, 'ऐसी बांधिये कि कभी छूटे नहीं।'

गङ्गाधरराव सिकुड़ गये। मोरोपन्त मन ही मन क्षुब्ध हुये। होंठ सिकोड़ लिया। परन्तु पुरोहित खिलखिला कर हँस पड़ा। उसके पास वाले सब स्त्री पुरुष हँस पड़े। कह-कहे लग गये। मनू पुलकित हो गई।

आंखें नीची करके उसने थोड़ा सा मुस्करा भर दिया। इस क़ह-कहे की आवाज़ बाहर पहुँची और मनू की कही हुई बात भी वहां भी। कह-कहे लगे। चारों ओर उस वाक्य की चर्चा हो उठी।

सामने वाले मकान में भी समाचार पहुँचा। जूही ने कहा, 'मैं तो नाचना चाहता हूँ। ऐसे अवसर पर चुपचाप बैठे-बैठे थक गई हूं। इतनी खुशी के समय भी न नाचें तो कब नाचेंगे ?'

मोतीबाई में बाहरी गम्भीरता थी परन्तु मन आल्हाद में फुदक रहा रहा था। बोली, 'नाचो कोई हर्ज नहीं। मैं भी नाचना चाहती हूं परन्तु घुँघरू बांध कर नहीं। बाहर बड़े-बड़े राजे-महाराजे बैठे हैं। शोरगुल सुनेंगे तो क्या कहेंगे ?'

जूही बोली, 'तबला घुँघरू हमको कुछ नहीं चाहिये, शोरगुल न होगा। इस पर भी महाराज अगर कुछ कहेंगे तो मैं भुगत लूँगी। आखिर नाटक होगा। हम लोग रंगशाला में नाचें और गावेंगे ही। राजे महाराजे नाटक-शाला में पास से सब कुछ देखेंगे ही। मैं नहीं मानूंगी।'

उन दोनों ने मनमाना नृत्य किया और नर्तकियों ने ताल दिया।

थोड़ी देर में भाँवर की रस्म पूरी हो गई। अन्य रस्मों के पूरा होने पर गङ्गाधरराव वर की सजधज में पांवड़ों पर, फूलों और चावलों की बरसा में, बाहर आये। सबने ताज़ीम दी। गाना-बजाना थोड़ी देर के लिये बन्द हो गया। गङ्गाधरराव एक ऊँची मसनद पर जा बैठे और इधर-उधर बारीकी के साथ देखने लगे कि मनू के वाक्य का असर भद्दे-पन की किस हद तक हुआ है। उसकी आंख कहीं जम नहीं रही थी। आंखों के लाल डोरों में, रौब की जगह को संकोच ने पकड़ लिया था।

वहां के उपस्थित लोगों के जी में वही वाक्य बार-बार और ज़ोर के साथ चक्कर काट रहा था। आंखें सबकी गङ्गाधरराव के दूल्हा वेश पर जा रही थीं और मन के मना करने पर भी आंखें उसी वाक्य को दुहरा रही थीं।

उस मकान की झरप के भीतर का नृत्य बन्द हो गया था। उन अभिनेत्रियों की आँख पर भी वही वाक्य सवार था।

जूही ने धीरे सें मोतीवाई से कहा, 'असली राजा तो झांसी को अब मिला, वाई जी।'

मोतीवाई ने आंख तरेर कर जूही का हाथ दवाया, 'राजा सुनेंगे तो गर्दन काटकर फिकवा देंगे, खबरदार।'

'मैंने तो आप से कहा', जूही बोली, 'आपके हाथ जोड़ती हूं, किसी को मेरी बात मालूम न होने पावे।'

उस युग की प्रथा के अनुसार उस दिन सबको कुछ न कुछ दिया गया। रात को नाटक हुआ।

विवाह की समाप्ति पर दरबार हुआ। नजर-न्योछावरें हुईं। पुरस्कार बँटे।

[६]

विवाह होने के पहिले गङ्गाधरराव को, शासन का अधिकार न था। उन दिनों झाँसी का नायब पोलिटिकल एजेण्ट कप्तान डनलप था। वह राजा के पास आया-जाया करता था। लोग कहते थे कि दोनों में मैत्री है।

गङ्गाधरराव अधिकार प्राप्त करने का प्रयत्न पहले से कर रहे थे। विवाह के उपरान्त उनको अधिकार मिल गया परन्तु अधिकार मिलने के पहले कम्पनी सरकार के साथ फिर एक अहदनामा हुआ। पुरानी बातें पुष्ट की गईं।

केवल एक बात नई हुई—झाँसी में एक अंग्रेज़ी फ़ौज रक्खी जावेगी। अंग्रेज़ी हुकूमत में, पर खर्चा झाँसी राज्य देगा। गङ्गाधरराव को मानना पड़ा। मनको खटका। उन्होंने नगद खर्चा न देकर कम्पनी सरकार का आग्रह निभाने के लिये झांसी के राज्य से २ लाख २७ हजार चार सौ अठ्ठावन रुपये वार्षिक आय का एक इलाका इन राज्य लोलुपों को दे दिया। जब यह सब हो गया तब गंगाधरराव को शासन का अधिकार मिल पाया। इसके बाद दरबार हुआ। खुशियाँ मनाई गईं। खेल-कूद, नाटक इत्यादि हुये परन्तु अनेक झांसी निवासियों को उनमें खोखलापन ही दिखलाई पड़ा। उनको अपने प्रदेश का खण्डित होना कसका।

स्वयं राजा को नाटकशाला से यथेष्ठ मनोरंजन नहीं मिल सका। वे शीघ्र वहां से चले आये और रङ्गमहल में रानी के पास पहुँचे।

रानी क़िले वाले महल में ही प्रायः रहती थीं। बाहर बहुत कम निकल पाती थीं। जब निकलतीं तब पर्दे की क़ैद में। इसलिये सवारी व्यायाम इत्यादि क़िले वाले महल के इर्दगिर्द आड़-ओट से कर पाती थीं। तो भी वे काफ़ी समय इन बातों में लगाती थीं और अपनी समग्र सहेलियाँ तथा क़िले के भीतर रहने वाली स्त्रियों को सवारी, शस्त्र प्रयोग मलखम्भ, कुश्ती का अभ्यास कराती थीं। बचे हुये समय में धार्मिक ग्रन्थों

का थोड़ा-सा परन्तु नियमपूर्वक अध्ययन करतीं। भगवद्गीता पर उनकी परम श्रद्धा थी। बाल्यावस्था को पार कर यौवन में पदार्पण करने को थीं परन्तु नये नये वस्त्र, कीमती आभूषणों का शौक न करके उनकी धुन ऊपर लिखी बातों सी ओर अधिक रहती थी।

झाँसी आने के बाद चपल, सुखी मनू में एक परिवर्तन धीरे-धीरे घर करता जा रहा था—अब उतना नहीं बोलती थीं। रानी लक्ष्मीबाई में गम्भीरता घर करती जा रही थी और क्रुद्ध हो जाने की वृत्ति तो और भी अधिक शीघ्रता के साथ घुलती चली जा रही थी। व्यङ्ग करने की इच्छा जरूर कुछ बढ़ती पर थी परन्तु वह सहज, सरल, भव्य, दिव्य मुस्कान सदा साथ रही। और चित्त की दृढ़ता तो पूर्व जन्मों से सञ्चित होकर मानों छठी के दिन ही ब्रह्मा ने पूरी समूची उनके हिस्से में रख दी थी।

रङ्गमहल में आने पर रानी ने गङ्गाधरराव का सत्कार जैसा कि हिन्दू-नारी—और रानी—कर सकती है, किया।

राजा अपने भावों को छिपाने में असमर्थ थे। उनको इसका अभ्यास न था। चेहरे पर रुखाई थी और आँखों में उदासी।

रानी ने कहा, 'आज आप नाटकशाला से जल्दी लौट आये। खेल अच्छा नहीं हुआ क्या ?'

राजा बोले, 'खेल तो सदा अच्छा होता है। मन नहीं लगा। एक नये खेल की तैयारी के लिये कह आया हूँ।'

रानी--'कौन सा ?'

राजा—'मृच्छकटिक।'

रानी—'यह क्या है ?'

राजा—'शूद्रक कवि ने संस्कृत में लिखा है। मैंने हिन्दी में उल्था करवाया है। चारुदत्त ब्राह्मण और वसन्त सेना के प्रेम की अद्भुत कहानी है। आप देखने चलोगी ?'

रानी—'न।'

राजा—'घोड़े की सवारी, कुश्ती, मलखम्भ के सिवाय आपको और भी कुछ पसन्द है या नहीं ?'

रानी—'अवश्य। सहेलियों को अपनासा बनाना। उनको अवसर कुअवसर पड़े पुरुषों की सहायता करने में पीछे पैर न देने की सीख देना, घर की सफाई, स्वच्छता इत्यादि बनाये रखना काफ़ी काम हैं।'

राजा—'इन सबों को मोटा-तगड़ा बना कर आप क्या करने जा रही हैं ?'

रानी—'अभी तो मुझको भी नहीं मालूम। पर देह और मन को सबल बना लेना क्या कोई कम महत्व का काम है ?'

राजा—'व्यर्थ है। घर का ही इतना काफ़ी काम स्त्रियों के लिये संसार में है कि उनको घुड़सवारी इत्यादि की ओर खींच ले जाना फूहड़ बनाना है।'

रानी—'और नाचना-गाना ?'

राजा—'अकेले में सभी स्त्रियां नाचती-गाती हैं। परन्तु यदि वे इन विद्याओं को ढङ्ग से सीखें तो शरीर और मन दोनों के लिये काफ़ी कसरत पा सकती हैं।'

रानी—'हाँ स्वराज्य स्थापित है। अब सिवाय हँसते-खेलने के नर-नारियों के लिये और काम ही क्या बचा है ? देखिये न किस आराम के साथ झाँसी राज्य का पञ्चमांश से अधिक अंग्रेजों के हाथ में दे दिया गया। आपका वह मित्र गार्डन भी नाटकशाला में आता होगा ?'

राजा—'अङ्गरेज़ लोग खूब हँसते-खेलते और नाचते-गाते हैं…'

रानी—'और नाचते-गाते ही पूरे हिन्दुस्थान को रोंदते चले जाते हैं। खेल तो बढ़िया है।'

राजा—'हमारे यहां फूट है। गांव-गांव में उपद्रवी, डाकू और बटमार भरे हुये हैं। अंग्रेजों के पास हथियार अच्छे हैं। इसलिये उन्होंने राज्य कायम कर लिया।

रानी—'नाटकशाला में जो हथियार बनते हैं, उनसे क्या अङ्गरेज नहीं हराये जा सकते हैं ?'

राजा को यह व्यङ्ग अखर गया। पर जिस मुस्कान के साथ वह निसृत हुआ था वह आकर्षक थी। साथ ही मोतीवाई, जूही इत्यादि कल्पना में बिजली की तरह कोंध गईं और आगे आने वाले मृच्छकटिक नाटक के अभिनय ने एक उमङ्ग पैदा की। रानी की मुस्कान का आकर्षण उसी क्षण तिरोहित हो गया और उसके साथ ही उठता हुआ क्षोभ। बोले, 'आप कभी-कभी वहुत कड़ी चोट कर बैठती हैं।'

रानी ने अदम्य भाव से कहा, 'आपके यहां के भाट क्या केवल प्रशंसा और यशगान ही करते हैं या कभी-कभी कड़खा भी सुनाते हैं ?'

राजा का क्षोभ उभड़ा परन्तु उन्होंने उसको वहां का वहीं दबाने का प्रयत्न किया और विषयान्तर करते हुये बोले, 'हमारे यहाँ कवि, चित्रकार इत्यादि अनेक कलाकार हैं।'

रानी ने भी बात न बढ़ाते हुये पूछा, 'कवि कौन हैं और क्या करते हैं ?'

राजा ने उत्तर दिया, 'एक हृदयेश है। अच्छा कवि है। एक पजनेश है। रङ्गीन है। कहता अच्छे ढङ्ग से है।'

'ये लोग क्या लिखते हैं ?'

'राधागोविन्द का प्रेम-वर्णन, नखशिख, नायिकाभेद।'

'नखशिख, नायिकाभेद क्या ?'

'राधा या गोपियों की चोटी से लेकर एड़ी तक का कोमल वर्णन यह नखशिख हुआ। नाना प्रकार की सुन्दर स्त्रियों की वृत्तियों का विविध वर्णन, यह नायिकाभेद है।'

'अर्थात् स्त्रियों के पूरे शरीर की सूक्ष्म जाँच-पड़ताल और इस काम के लिये इन लोगों को इनाम-पुरस्कार भी दिये जाते होंगे ?'

राजा जरा झेंपे परन्तु सहमे नहीं। बोले, 'इस प्रकार की कविता करने में बहुत विद्वत्ता और मिहनत खर्च करनी पड़ती है। इसलिये

उनको पुरस्कार दिया जाता है। वे लोग राज-दरबारों की शोभा हैं।'

रानी ने फिर उसी मुस्कराहट के साथ पूछा, 'भूषण को छत्रपति शिवाजी क्या इसी तरह की कविता के लिये बढ़ावा दिया करते थे? भूषण तो दरबार की शोभा रहे न होंगे?'

राजा इस व्यंग से कुढ़ गये और क्षोभ को दबा न सके।

बोले, 'आप हमेशा छत्रपति और पन्त प्रधान बाजीराव और न जाने किन-किन का नाम दिन रात रटा करती हैं। मैंने कई बार कहा कि इन बातों की छेड़छाड़ में अब कोई सार नहीं।'

रानी ने कहा, 'मैं भी तो विनती किया करती हूँ कि उन बातों को बतलाइये जिनमें सार हो।'

राजा—'आप राज्य का प्रबन्ध करना सीखिये। मैं भी इस ओर ध्यान देता हूँ। अच्छी व्यवस्था बनी रहेगी तो राज्य बचा रहेगा अन्यथा अङ्गरेज फिर इसको अपनी देख-रेख में ले लेंगे—या शायद राज्य को खत्म करके अपना अधिकार बर्तने लग जावें।'

रानी—'उस समय क्या नाटकशाला वाले किसी काम न आवेंगे?'

राजा के हृदय में आग सी लग गई। कुछ कहना चाहते थे कुछ कह गये, 'आपके मन में हठ, नगर-कोट बाहर घोड़े पर घूमने का है और सखी सहेलियाँ भी जङ्गल-टौरियों पर साथ में घोड़े कुदायें तो इससे बढ़कर न राज्य है, न राज्य प्रबन्ध और न बिचारी नाटकशाला। ठीक है न?'

रानी के ऊपर उनके क्रोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। बोलीं, 'मेरे आपके—दोनों के—लिये यह विशाल महल क्या कम है?'

राजा पर इस व्यङ्ग की चोट पड़ गई, पर गुस्से को पीने लगे।

कुछ सोच कर पूछा, 'क्या सचमुच आपको नाटकशाला का मेरा मनोरञ्जन नापसन्द है?'

रानी ने तुरन्त उत्तर दिया, 'इन दिनों अब इससे अधिक और हो ही क्या सकता है ? राज्य का काम चलाने के लिये दीवान है। डाकुओं का दमन करने और प्रजा को ठीक पथ पर चालू रखने के लिये अङ्गरेजी सेना है ही। इस पर भी यदि कोई गलती हो गई तो कम्पनी के एजेण्ट की खुशामद करली। बस सब काम ज्यों का त्यों मनमाना चलता रहा।'

रानी मुस्कराने लगी।

इस बात में रानी की विलक्षण बुद्धि का आभास पाकर राजा को जरा विस्मय हुआ और उनके होठों पर बरबस हँसी आई।

छुटपन की छबीली मनू, लक्ष्मीबाई के विशाल आदर्शों में विलीन हो गई।

[१०]

राजा गङ्गाधरराव पुरातन पन्थी थे। वे स्त्रियों की उस स्वाधीनता के हामी न थे जो उनको महाराष्ट्र में प्राप्त रही है। दिल्ली लखनऊ की पर्दा के बन्धेज को वे जानते थे! उतना बन्धेज वे अपने रनवास में उत्पन्न नहीं कर सकते थे यह भी उनको मालूम था। जनता की स्त्रियां मुँह उघाड़े फिरें, चाहे घूँघट डाले फिरें, इसमें उनको उपेक्षा थी, परन्तु अपने महल में काफ़ी पर्दा वर्तने के वे दृढ़ पक्षपाती थे।

इसलिये लक्ष्मीबाई क़िले के बाहर घोड़े पर नहीं जा सकती थीं। क़िले में भी उनकी स्वतन्त्रता पर काफ़ी बन्धन था। तीर्थ यात्रा से लौटने पर क़िले के भीतर वाले महल के मैदान के चारों ओर ऊँची-ऊँची कनातें लगवा दी गईं जिससे उनको घोड़े की सवारी इत्यादि में बहुत अड़चन होने लगी। मलखम्भ और कुश्ती का प्रबन्ध उनको अपने कक्ष के भीतर ही मोटे और नरम क़ालीनों की पर्तों पर करना पड़ा। उन्होंने अभ्यास छोड़ा नहीं। गङ्गाधरराव ने उनकी सहेलियों को बदलने का प्रयत्न किया परन्तु सुन्दर, मुन्दर और काशी को वे नहीं हटा सके।

अन्तर्द्वन्द्व के कारण गङ्गाधरराव के मन में क्रोध की मात्रा बढ़ गई और अपराधियों को दण्ड देने के लिये वे बिलकुल नये नये साधन काम में लाने लगे।

मृच्छकटिक नाटक के खेल का दिन आया। मोतीबाई ने बसन्तसेना का अभिनय किया और जूही ने उसकी सखी का। राजा ने उस दिन नाटकशाला को खूब सजवाया। कप्तान-गार्डन भी निमन्त्रित हुआ। खेल अच्छा हुआ। नृत्य गायन, अभिनय सभी की गार्डन ने प्रशंसा की।

खेल की समाप्ति पर गार्डन के मुंह से निकल पड़ा, 'महाराज साहब एक बात समझ में नहीं आती। आपकी संस्कृति में वेश्याओं को इतने आदर का स्थान क्यों दिया गया है?'

राजा ने हँसकर उत्तर दिया, 'क्योंकि हमारे पुरखे बहुत समझदार थे ।'

गार्डन को अपने देश के क्रामवेल के समय का कठमुल्लावाद (Purtanism) और उसके तुरन्त ही बाद का, चार्ल्स द्वितीय के समय का मनमौजवाद याद आ गया। बोला, 'नहीं महाराज कुछ और बात है। असल में हिन्दुस्थान कई बातों में बहुत गिरा हुआ है।'

गङ्गाधरराव ने कहा, 'फिर कभी बात करूँगा।'

गार्डन चलने को हुआ कि राजा ने एक कोने में खुदाबख्श नामक अपने एक सरदार को जिसको राजा ने एक बहुत छोटे अपराध पर देश-निकाला दे दिया था, देख लिया। तुरन्त अपने अङ्गरक्षक से पूछा, 'यह कौन है ?'

उसने उत्तर दिया, 'खुदाबख्श।'

'यहाँ कैसे आया ?' राजा ने प्रश्न किया।

अङ्गरक्षक उत्तर नहीं दे पाया। खुदाबख्श ने समझ लिया और वह तुरन्त भीड़ में विलीन होकर निकल गया।

गार्डन ने पूछा, 'क्या बात महाराजा—साहब ?'

राजा ने कहा, 'कुछ नहीं—यों ही। एक आदमी को आज बहुत दिनों के बाद नाटकशाला में देखा है।'

गार्डन चला गया। राजा ने नाटकशाला के प्रहरी को कैद में डलवा दिया और सवेरे पेश किये जाने की आज्ञा दी।

खुदाबख्श को बहुतेरा ढुंढ़वाया परन्तु पता नहीं लगा।

दूसरे दिन मोतीबाई नाटकशाला से बरखास्त कर दी गई। नाटकशाला के पात्रों को कोई कारण समझ में नहीं आ रहा था। वे लोग आशा कर रहे थे कि इतना अच्छा अभिनय इत्यादि करने के उपलक्ष में बधाई और पुरस्कार मिलेंगे परन्तु हुआ उलटा। उनकी सब से अच्छी

अभिनेत्री निकाल दी गई। झांसी में जिन लोगों ने मोतीबाई के नृत्य को देखा था अथवा उसका गायन सुना था, सब क्षुब्ध थे।

सवेरे नाटकशाला के प्रहरी की पेशी हुई। राजा ने स्वयं मुकद्दमा सुना।

राजा ने खिसियाकर पूछा, 'क्यों रे नमकहराम, यह खुदाबख्श नाटकशाला में कैसे आ गया ?'

उसने घिघियाकर उत्तर दिया, 'श्रीमन्त सरकार, मैं भूल गया। मुझको याद नहीं रहा कि विना आज्ञा के नहीं आ सकता था।'

'तू यह भूल गया कि मैं उसको देश-निकाला दे चुका हूं ?' राजा ने कड़क कर कहा।

प्रहरी अत्यन्त विनीत भाव से बोला, 'इस बात को श्रीमन्त सरकार, बहुत दिन हो गये इसलिये मुझको सुध नहीं रही।'

इस उत्तर से राजा का क्रोध घटा नहीं, जरा और बढ़ गया। रोते हुये प्रहरी को सजा दी कई बिच्छू से डसवाने की।

गङ्गाधरराव ने एक विशेष वर्ग के अपराधों के लिये बिच्छू से कटवाने का विधान कर रक्खा था। कट्ठे में पैर का डालना-भांजना एक साधारण बात थी। गहन अपराधों में हाथ-पाँव कटवा डालने की जनसम्मत प्रथा जारी थी परन्तु दबे-दबे और थोड़ी-थोड़ी। दहकते अङ्गारों से डाकुओं के अङ्ग जलवाना इस विधान में शामिल था परन्तु बिच्छुओं से कटवाना जन-वृत्ति की सहन-शक्ति से बाहर हो गया था।

बिच्छू से कई जगह काटे जाने के कारण प्रहरी बेहद सन्तप्त हुआ। अन्त में बेहोश हो गया। राजा समझे मर गया, तब उनका क्रोध ठण्डा पड़ा। प्रहरी वहाँ से हटवा दिया गया।

[११]

वसन्त आ गया। प्रकृति ने पुष्पाञ्जलियाँ चढ़ाईं। महकें बरसाईं। लोगों को अपनी श्वास तक में परिमल का आभास हुआ। क़िले के महल में रानी ने चैत्र की नवरात्र में गौर की प्रतिमा की स्थापना की। पूजन होने लगा। गौर की प्रतिमा आभूषणों और फूलों के शृङ्गार से लद गई और धूप-दीप तथा नैवेद्य ने कोलाहल सा मचा दिया। हरदी-कूं कूं (हलदी कुंकुम) के उत्सव में सारे नगर की नारियां व्यग्र, व्यस्त हो गईं।

परन्तु उनमें से बहुत थोड़ी गले में सुमन-मालायें डाले थीं। उनको भ्रम था कि राजा-रानी हम लोगों के इस शृङ्गार को पसन्द नहीं करते। इसलिये जब वे स्त्रियां, जो पूजन के लिये रनवास में आईं—चढ़ाने के लिये तो अवश्य फूल ले आईं परन्तु गले में माला डाले कुछेक ही आईं।

क़िले में जाने की सब ज़ातियों को आज़ादी थी। क़िले के उस भाग में जहाँ महादेव और गणेश का मन्दिर है और जिसको शङ्कर क़िला कहते थे, सब कोई जा सकते थे। अछूत कहलाने वाले चमार, बसोर और भङ्गी भी। जहाँ अपने कक्ष में रानी ने गौर को स्थापित किया था, वहाँ इन जातियों की स्त्रियाँ नहीं जा सकती थीं। परन्तु कोरियों और कुम्हारों की स्त्रियाँ जा सकती थीं कोरी और कुम्हार कभी अछूत नहीं समझे गये थे।

सुन्दर ललनाओं को आभूषणों से सजा हुआ देखकर रानी को हर्ष हुआ परन्तु अधिकाँश के गलों में पुष्पमालाओं की त्रुटि उनको खटकी। उन्होंने स्त्रियों से कहा, 'तुम लोग हार पहिनकर क्यों नहीं आईं। गौर माता को क्या अधूरे शृङ्गार से प्रसन्न करोगी ?'

स्त्रियों के मन में एक लहर उद्वेलित हुई।

लाला भाऊ बख्शी की पत्नी उन स्त्रियों की अगुआ बनकर आगे आई। वह यौवन की पूर्णता को पहुंच चुकी थी। सौन्दर्य मुखमण्डल

पर छिटका हुआ था। बख्शिनजू कहलाती थी। हाथ जोड़कर बोली, 'जब सरकार के गले में माला नहीं है तब हम लोग कैसे पहिनें ?'

रानी को असली कारण मालूम था। बख्शिनजू के बहाने पर उनको हँसी आई। पास आकर उसके कन्धे पर हाथ रक्खा और सबको सुना कर कहने लगी, 'बाहर मालिनें नाना प्रकार के हार गूँथे बैठी हुई हैं, एक मेरे लिये लाओ। मैं भी पहिनूंगी। तुम सब पहिनो और खूब गा-गाकर गौरमाता को रिझाओ। जो लोग नाचना जानती हों, नाचें। इसके उपरान्त दूसरी रीति का कार्य होगा।'

स्त्रियाँ होड़ाहींसी में मालिनों के पास दौड़ी परन्तु मुन्दर पहले माला ले आई। बख्शिन जरा पीछे आई। मुन्दर माला पहिनाने वाली ही थी कि रानी ने उसको मुस्कराकर बरज दिया। मुन्दर सिकुड़ सी गई।

रानी ने कहा, 'मुन्दर एक तो तू अभी कुमारी है, दूसरे तेरे हाथ के फूल तो नित्य ही मिल जाते हैं। बख्शिनजू के फूलों का आशीर्वाद लेना चाहती हूँ।'

बख्शिन हर्षोत्फुल्ल हो। मुन्दर को अपने दासीवर्ग की प्रथा का स्मरण हो आया—विवाह होते ही महल और किला छोड़ना पड़ेगा, उदास हो गई। रानी समझ गईं। बख्शिन ने पुष्पमाला उनके गले में डालकर पैर छुये। रानी ने उठाकर अङ्क में भर लिया। फिर मुन्दर का सिर पकड़कर अपने कन्धे से चिपटा कर उसके कान में कहा, 'पगली क्यों मन गिर दिया ? मेरे पास से कभी अलग न होगी।'

मुन्दर उस स्थिति में हाथ जोड़कर धीरे से बोली, 'सरकार मैं सदा ऐसी ही रहूँगी और चरणों में अपनी देह को इसी दशा में छोड़ूंगी।'

फिर अन्य स्त्रियों ने भी रानी को हार पहिनाये, इतने कि वे ढक गईं, और उनको सांस लेना दूभर हो गया। सहेलियाँ उसके हार उतार उतार कर रख देती थीं और वह पुनः ढाक दी जाती थीं।

अन्त में कोने में खड़ी हुई एक लावण्यमयी ... लिये बढ़ी। उसके

कपड़े बहुत रंग-बिरंगे थे। चांदी के जेवर पहिने थी। सोने का एक गोष

ही था। सब ठाठ सोलह आना बुन्देलखण्डी। पैर के पैजनों से ले सिर की दाउनी (दामिनी) तक सब आभूषण स्थानिक। रंग सांवला बाकी चेहरा रानी की आकृति, आँख-नाक से बहुत मिलता जुलता! रानी को आश्चर्य हुआ और स्त्रियों के मन में काफी कुतूहल। वह डरते डरते रानी के पास आई।

रानी ने पूछा, 'कौन हो ?'

उत्तर मिला, 'सरकार हौं तो कोरिन।'

'नाम ?'

'सरकार, झलकारी दुलैया।'

'निसस्सन्देह जैसा नाम है वैसे ही लक्षण हैं। पहिना दे अपनी माला।'

झलकारी ने माला पहिना दी और रानी के पैर पकड़ लिये।

रानी के हठ करने पर झलकारी ने पैर छोड़े।

रानी ने उससे पूछा, 'क्या बात है झलकारी ? कुछ कहना चाहती है क्या ?'

झलकारी ने सिर नीचा किये हुये कहा, 'मोय जा विनती करनें— मोय माफी दई जाय तो कओं।'

रानी ने मुस्कराकर अभयदान दिया।

झलकारी बोली, 'महाराज, मोरे घर में पुरिया पूरवे की और कपड़ा बुनबे की काम होत आओ है। पै उनने अब कम कर दओ है। मलखम्भ, कुश्ती और जाने काका करन लगे। अब सरकार घर कैसे चले ?'

रानी ने पूछा, 'तुम्हारी जाति में और कितने लोग मलखंब और कुश्ती में ध्यान देने लगे हैं ?'

'काए, मैं का घर-घर देखत फिरत ?' झलकारी ने बड़ी-बड़ी कजरारी आंखें घुमाकर, मुस्कराकर तीक्ष्ण उत्तर दिया।

रानी हँस पड़ीं, 'यह तो तुम्हारे पति वहुत अच्छा काम करते हैं। तुम भी मलखम्भ, कुश्ती सीखो। इनाम दूँगी। घोड़े की सवारी भी सीखो।'

झलकारी लम्वा घूँघट खींचकर नव गई। घूँघट में ही वेतरह हँसी। रानी भी हँसी और अन्य स्त्रियों में भी हँसी का स्रोत फूट पड़ा।

लगभग सभी उपस्थित स्त्रियों ने ज़रा चिन्ता के साथ सोचा, 'हम लोगों से भी मलखम्भ, कुश्ती के लिये कहा जावेगा। बड़ी मुश्किल आइ।',

उन लोगों ने उन फूलों और ढेरों और आभूषणों में होकर अखाड़ों और कुश्तियों को झांका तथा परम्परा की लज्जा और संकोच में वे ठिठुर सी गईं। उनकी हँसी को एक जकड़-सी लग गई।

झलकारी वोली, 'महाराज, मैं चकिया पीसत हों, दो–दो तीन–तीन मटकन में पानी भरभर लैं लाउत, रांटा*कातत...'

रानी ने कहा, 'तुम्हारे पति का क्या नाम है ?'

झलकारी सिकुड़ गई।

बख्शिन ने तपाक से कहा, 'आज हम लोग आपस में कुँकुम रोरी लगाते समय एक दूसरे के पति का नाम पूछेंगे ही। झलकारी को भी वतलाना पड़ेगा उस समय। परन्तु......' वह नखरे के साथ दूसरी स्त्रियों की ओर देखने लगी।

रानी ने हँसकर पूछा, 'परन्तु क्या वख्शिनजू ?'

बख्शिन ने उत्तर दिया, 'सरकार बड़े काम पहले राजा से आरम्भ होते हैं। आज के उत्सव की परिपाटी में रिवाज के अनुसार सबको अपने-अपने पति का नाम लेना पड़ेगा परन्तु प्रारम्भ कौन करेगा ? क्या यह भी हम लोगों को वतलाना पड़ेगा ?'

---

*चरखा। चरखा चलाने की प्रथा वुन्देलखण्ड में, ऊँचे घरानों तक में घर-घर थी।

कुछ स्त्रियां हँस पड़ीं। कुछ ताली पीट कर थिरक गईं। रानी की सहेलियां मुस्करा-मुस्कराकर उनका मुंह देखने लगीं। रानी के गौर मुख पर ऊषा की अरुण स्वर्ण रेखायें-सी खिच गईं। वह मुस्कराईं जैसे एक क्षण के लिये ज्योत्सना छिटक गई हो। ज़रा सिर हिलाया मानो मुक्त-पवन ने फूलों से लदी फुलवारियों को लहरा दिया हो।

रानी ने बख्शिन से कहा, 'तुम मुझसे बड़ी हो, तुमको पहले बतलाना होगा।'

'सरकार हमारी महारानी हैं। पहले सरकार बतलावेंगी। पीछे हम लोग आज्ञा का पालन करेंगे।' बख्शिन ने घूंघट का एक भाग होठों के पास दबाकर कहा।

हरदी कूंकूं के उत्सव पर सधवा स्त्रियां एक दूसरे को रोरी का टीका लगाती हैं और उनको किसी न किसी वहाने अपने पति का नाम लेना पड़ता है।

रानी ने कहा, 'बख्शिन जू अपनी बात पर दृढ़ रहना। आज्ञा पालन में आगा-पीछा नहीं देखा जाता।'

'परन्तु धर्म की आज्ञा सबके ऊपर होती है, सरकार।' बख्शिन हठपूर्वक बोली।

रानी के गोरे मुख-मण्डल पर फिर एक क्षण के लिये रक्तिम आभा झाँई सी दे गई। बोलीं, 'बख्शिनजू, याद रखना मैं भी बहुत हैरान करूँगी। मेरी बारी आयगी तब मैं तुम्हें देखूंगी।'

बख्शिन ने प्रश्न किया, 'अभी तो मेरी बारी है, सरकार। बतलाइये, महादेव जी के कितने नाम हैं ?'

रानी ने अपने विशाल नेत्र ज़रा झुकाये। गला साफ़ किया, बोलीं, शिव शङ्कर, भोलानाथ, शम्भु, गिरजापति...'

'सरकार को तो पूरा कोष याद है। अब यह बतलाइये कि महादेव जी के जटा-जूट में से क्या निकला है ?'

'सर्प, रुद्राक्ष...'

'जी नहीं, सरकार—किसकी तपस्या करने पर किसको महादेव बाबा ने अपनी जटाओं में छिपाया और कौन वहां से निकल कर, हिमाचल से वहकर इस देश को पवित्र करने के लिये आया ? ब्रह्मावर्त के नीचे किसका महान सुहावनापन है ?'

'गङ्गा का', यकायक लक्ष्मीबाई के मुँह से निकल पड़ा।

उपस्थित स्त्रियां हर्ष के मारे उन्मत्त हो उठीं। नाचने लगीं, गाने लगीं। झलकारी ने तो अपने बुन्देलखण्डी नृत्य में अपने को विसरा सा दिया। रानी उस प्रमोद में गौर की प्रतिमा की ओर विनीत कृतज्ञता की दृष्टि से देखने लगीं। आमोद की उस थिरकन का वातावरण जब कुछ स्थिर हुआ, रानी ने आनन्दविभोर बख्शिन का हाथ पकड़ा।

कहा, 'बख्शिनजू, सावधान हो जाओ। अब तुम्हारी वारी आई।'

बख्शिन के मुंह पर गुलाल सा विखर गया।

नत मस्तक होकर बोली, 'सरकार, अभी यहां बड़े-बड़े मन्त्रियों और दीवानों की स्त्रियां और बहुयें हैं। हम लोग तो सरकार की सेना के केवल बख्शी ही हैं।'

रानी ने मुस्कराते-मुस्कराते दांत पीसकर, विशाल नेत्रों को तरेरकर, जिनमें होकर मुस्कराहट विवश झरी पड़ रही थी—कहा, 'बख्शी सेना का आधार, तोपों का मालिक, प्रधान सेनापति के सिवाय और किसी से नीचे नहीं। राजा के दाहिने हाथ की पहली उँगली और तुम यहां उपस्थित स्त्रियों में सबसे अधिक शरारतिन ! मेरे सवालों का जवाब दो।'

बख्शिन ने अपनी मुखमुद्रा पर गम्भीरता, क्षोभ और अनमनेपन की छाप बिठलानी चाही। परन्तु लाज से बिखेरी हुई चेहरे की गुलाली में से हँसी बरबस फूटी पड़ रही थी।

बख्शिन बोली, 'सरकार की कलाही इतनी प्रबल है कि मेरा हाथ टूटा जा रहा है।'

रानी ने कहा, 'तुम्हारी कलाही भी इतनी ही मजबूत वनवाऊँगी, वात न बनाओ। मेरे सवाल का जवाव दो। बोलो, 'मेरे पुरखों के नाम याद हैं ?'

बख्शिन संभल गई। उसने सोचा, 'मारके का प्रश्न अभी दूर है।'

बोली, 'हां सरकार। जिनकी सेवा में युग बीत गये उनके नाम हम लोग कैसे भूल सकते हैं ?'

'वतलाओ मेरे ससुर का नाम।' रानी ने मुस्कराते हुये दृढ़तापूर्वक कहा।

चतुर बख्शिन गड़वड़ा गई। उसके मुंह से निकल गया—'भाऊ साहव।'*

बख्शिन के पति का नाम लाला भाऊ था।

रानी ने हँसकर बख्शिन का हाथ छोड़ दिया।

उपस्थित स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं। बख्शिन को अपने पति का नाम वतलाना तो जरूर था परन्तु वह रानी को थोड़ा परेशान करके ही वतलाना चाहती थी, लेकिन रानी ने अनायास ही बख्शिन को परास्त कर दिया।

इसके उपरान्त रानी ने चुलवुली झलकारी को वुलाया। उसके पति का वहां किसी को नाम नहीं मालूम था। इसलिये वहानों की गुञ्जाइश न थी।

रानी ने सीधे ही पूछा, 'तुम्हारे पति का नाम ?'

झलकारी के पति का नाम पूरन था। पति का नाम वतलाने के लिये व्यग्र थी परन्तु उत्सव की रङ्गत वढ़ाने के लिये उसने ज़रा सोच-विचार कर एक ढङ्ग निकाला।

बोली, 'सरकार, चन्दा पूरनमासी को ही पूरौ पूरौ दिखात है न ?'

रानी ने हँसकर कहा, 'ओहो! पहले ही अरसट्टे में फिसल गई ? पूरन नाम है ?'

---

* शिवराव भाऊ गङ्गाधरराव के पिता थे।

झलकारी झेंप गई। चतुराई विफल हुई। हँस पड़ी।

इसी प्रकार हँसते-खेलते और नाचते-गाते स्त्रियों का वह उत्सव अपने समय पर समाप्त हुआ।

अन्त में रानी ने स्त्रियों से एक भीख सी मांगी, 'तुम में से कोई बहिनों के बराबर हो, कोई काकी हो, कोई माईं, कोई फूफी। फूल सदा नहीं खिलते, उनमें सुगन्धि भी सदा नहीं रहती। उनकी स्मृति ही मन में बसती है। नृत्य-गान की भी स्मृति ही सुखदायक होती है। परन्तु इन सब स्मृतियों का पोषक यह शरीर और इसके भीतर आत्मा है। उनको पुष्ट करो और प्रबल बनाओ। क्या मुझे ऐसा करने का वचन दोगी?'

उन स्त्रियों ने इस बात को समझा हो या न समझा हो परन्तु उन्होंने हाँ-हां की। उन लोगों को डर लगा कि वहीं तत्काल, कहीं मलखम्भ और कुश्ती न शुरू कर देनी पड़े! इत्र-पान के उपरान्त चली गईं।

एक बात लेकिन स्पष्ट थी—जब वे चली गईं तब वे किसी एक अदृश्य, अवर्ण्य तेज से ओत-प्रोत थीं।

उसके उपरान्त फिर झांसी नगर की स्त्रियां संध्या समय थालों में दीपक सजा-सजाकर और गले में बेला, मोतिया, जाही, जुही इत्यादि की फूल-मालायें डाल-डालकर मन्दिरों में जाने लगीं। स्त्रियों को ऐसा भान होने लगा जैसे उनका कोई सतत संरक्षण कर रहा हो, जैसे कोई संरक्षक सदा साथ ही रहता हो, जैसे वे अत्याचार का मुकाबिला करने की शक्ति का अपने रक्त में सञ्चार पा रही हों।

[१२]

राजा गङ्गाधरराव को पुत्र हुआ जो तीन महीने की आयु पाकर मर गया। राजा के मन और तन पर इस दुर्घटना का स्थायी कुप्रभाव पड़ा। वे बराबर अस्वस्थ रहने लगे। रानी भी अस्वस्थ रहीं परन्तु उनका स्वास्थ्य शीघ्र सँभल गया।

लगभग दो वर्ष राजा और रानी के काफ़ी कष्ट में बीते।

राजा की खीज बढ़ गई। उन्होंने सनकों में काम करना शुरू कर दिया।

एक दिन उनको मालूम हुआ कि खुदाबख्श नवाब अलीबहादुर के यहाँ कभी कभी आता है। इस जरा से अपराध पर उन्होंने नवाब साहब का महल जब्त कर लिया। केवल बाहर वाली हवेली उनके रहने के लिये छोड़ी।

सन् १८५३ के शारदीय नवरात्र का महोत्सव हुआ। उस दिन उनका स्वास्थ्य अच्छा जान पड़ता था, केवल कुछ कमजोरी थी। राजवैद्य प्रतापशाह मिश्र का उपचार था।

राजा ने सोचा किसी सुपात्र को गोद ले लूँ। रानी सहमत हो गईं।

एक सजातीय बालक को गोद ले लिया जिसका नाम आनन्दराव था। गोद के उपरान्त उसका नाम दामोदरराव रक्खा गया।

उत्सव हुआ। झांसी की जनता के पञ्चों, सरदारों और सेठ-साहूकारों को, जो इस पर निमन्त्रित किये गये थे, इत्र-पान भेंट इत्यादि से सम्मानित करके बिदा किया गया। केवल मेजर एलिस, कप्तान मार्टिन, मोरोपन्त और प्रधान मन्त्री वहां रह गये। निकट ही पर्दे के पीछे रानी लक्ष्मीबाई बैठी हुई थीं। राजा ने एक खरीता गोद को स्वीकार कराने के हेतु कम्पनी सरकार को लिखवाया।

राजा ने खरीता अपने हाथ से एलिस को दिया। राजा का गला रुद्ध हो गया और आँखों में आंसू भर आये। पर्दे के पीछे रानी की सिसक सुनाई पड़ी, मानो उस ख़रीते पर इस सिसक की मुहर लगी हो।

राजा बोले, 'देखो मेजर साहब, दामोदरराव कितना सुन्दर है। यह बड़ा होनहार है। मेरी रानी-सी माता पाकर झाँसी को चमका देगा। मेरी झांसी को ये दोनों बड़ा भारी नाम देंगे...'

पर्दे के पीछे सिसकी सुनाई दी। एलिस ने आँख के एक कोने से उस ओर देखकर मुँह फेर लिया।

राजा ने पर्दे की ओर मुँह फेर कर रुद्ध स्वर में, मुश्किल से कहा, 'यह क्या है ? रोती हो ? मैं अच्छा हो रहा हूँ। पर मुझे अपनी बात तो कह लेने दो।'

रानी ने धीरे से खाँसकर अपना कण्ठ संयत किया।

राजा स्थिर होकर बोले, 'मेजर साहब, हमारी रानी स्त्री जरूर है परन्तु इसमें ऐसे गुण हैं कि संसार के बड़े बड़े मर्द इसके पैरों की धूल अपने माथे पर चढ़ावेंगे।'

बहुत प्रयत्न करने पर भी राजा अपने आँसुओं को न रोक सके।

एलिस ने कहा, 'महाराज थोड़ी बात करें, नहीं तो तबियत देर में अच्छी हो पावेगी।'

रानी ने जरा जोर से खाँसा, मानो राजा को निवारण कर रही हों।

दुर्बल हाथों से राजा ने आंसू पोंछे। गले को नियंत्रित किया।

राजा बोले, 'रानी बहुत अच्छी व्यवस्था करेगी। आप लोग दामोदरराव की नाबालगी के कारण परेशान मत होना।'

राजा के हृदय में पीड़ा हुई।

किसी प्रकार उसको काबू में करके उन्होंने कहा, 'मुझे झाँसी के लोग बहुत प्यारे हैं। मै चाहता हूं मेरी जनता सुखी रहे। मैंने

जिसको जो कुछ दिया है, वह सब उसके पास बना रहना चाहिये।

राजा के फिर खाँसी आई और साथ ही रक्त। दवा दी गई। राजा को कुछ चैन मिला। पर वे जान गये कि यह क्षणिक है।

राजा के होठों पर एक क्षीण मुस्कराहट आई।

'मैं चाहता हूं कि मेरी नाटकशाला में चाहे खेल हों या न हों, परन्तु पात्रों के लिये जो वेतन खजाने से दिया जाता है वह उनको मिलता रहे।'

राजा फिर खाँसे। अबकी बार ज्यादा खून आया।

राजा की आकृति विगड़ी। सब लोग चिन्तित और भयभीत हुये। राजा बहुत कष्ट के साथ बोले, 'मेजर साहब, एक अन्तिम प्रार्थना—बस एक—झांसी अनाथ न होने पावे...।'

कराहने लगे। आंखें फिरने लगीं।

कप्तान मार्टिन एक ओर चुप बैठा हुआ था। उसने एलिस को चल देने का संकेत किया। एलिस उठना ही चाहता था कि राजा बोले, 'चित्रकार सुखलाल, हृदयेश कवि......'

एलिस उठा उसने प्रणाम करके राजा से कहा, 'सरकार, हम लोग जाते हैं। समाचार मिलते ही तुरन्त हाजिर होंगे।'

राजा ने आंखें स्थिर कीं। परन्तु बोल न सके, वेसुध हो गये।

एलिस और मार्टिन चले गये।

लक्ष्मीबाई तुरन्त पर्दे से बाहर निकल आईं। पति की उस दशा को देखकर बहुत दुखी हुईं। मोरोपन्त ने दामोदरराव को बुलवा लिया। नाना भोपटकर लेकर आये। रानी कुछ शान्त हुईं।

राजा गंगाधरराव को पल-पल पर बेहोशी आ रही थी।

ज्यों-त्यों करके वह दिन कटा।

दूसरे दिन उनकी अवस्था असाध्य हो गई। अन्त में मुँह से केवल यह निकला, 'गंगाजल।'

उनको तुरन्त गंगाजल दिया गया।

एक क्षुण के लिये उनको ऐसा जान पड़ा मानो रोगमुक्त हो गये हों।

तत्क्षरण सचेत होकर बोले, 'मैंने बहुत अपराध किये हैं। बहुतों को सताया है···सब क्षमा कर···ओमहरि···'

कुछ क्षरण उपरान्त राजा का देहान्त हो गया।

महल में हाहाकार मच गया। जिस रानी को कभी किसी ने विह्वल नहीं देखा था, वह करुरणा के बांध तोड़े जा रही थीं। मोरोपन्त और नाना भोपटकर ने क्रन्दन करते हुये दामोदरराव को रानी की झोली में रख दिया।

[१३]

जिस दिन गंगाधरराव का देहान्त हुआ, लक्ष्मीबाई १८ वर्ष की थीं। इस दुर्घटना का उनके मन और तन पर जो आघात हुआ वह ऐसा था जैसे कमल को तुषार मार गया हो। परन्तु रानी के मन में एक भावना थी, एक लगन थी, जो उनको जीवित रक्खे थी। वह छुटपन के खिलवाड़ में प्रकट हो-हो जाती थी। इस अवस्था में वह उनके मन के किस कोने में पड़ी हुई थी, इसको बहुत ही कम लोग जानते थे। जो जानते थे, उनमें से एक तात्या टोपे था। दूसरा नाना धोंडू पन्त।

राजा गंगाधरराव के फेरे के लिये बिठूर से नाना धोंडूपन्त, अपने दोनों भाइयों सहित आया। तात्या भी साथ था। वे सब जवान हो गये थे। पैंशन के जब्त हो जाने के कारण संतप्त थे और रोष भरे। गंगाधर-राव के देहान्त के कारण उनको बड़ी ठेस लगी। जालौन का राज्य समाप्त हो चुका था। महाराष्ट्र की एक गद्दी झाँसी की बची थी। उनको भय था कि यह भी विलीन होने जा रही है।

रानी किले वाले महल में ही रहती थीं। वहीं उनकी सहेलियां और सिपाही-प्यादे भी। नीचे का महल, हाथीखाना, सेना, घोड़े, हथियार इत्यादि सब हाथ में थे।

नगर का शासनसूत्र भी अधिकार में था। राज्य को माल, दीवानी भी उनके मन्त्रियों के हाथ में थी परन्तु कम्पनी सरकार झांसी की छावनी में अपनी सेना और तोपें बढ़ाने में व्यस्त थी। इससे मन में कुछ खुटका उत्पन्न होता था।

शोक समवेदना के उपरांत नाना के दोनों भाई बिठूर चले गये। नाना और तात्या रह गये।

बिकट ठण्ड थी। ठिठुरा देने वाली, दीन-दरिद्रों के दांत से दांत बजाने वाली। उस पर संध्या से ही बादल घिर आये। आंधी चल उठी और पानी बरस पड़ा। नाना और तात्या रानी से बातचीत करने संध्या

के पहले ही किले के महल में गये। भोजन के उपरांत बातचीत होनी थी और फिर डेरे को लौटना था। परन्तु ऋतु की कठोरता के कारण उनके विश्राम का वहीं प्रवन्ध करवा दिया गया।

दीवान खास में बैठक हुई। सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई भी रानी के साथ थीं।

रानी का मुख दुर्बल हो जाने के कारण जरा लम्बा जान पड़ता था तो भी उस सतेज सौन्दर्य के आतङ्क में वही आदर उत्पन्न करने वाला ओज था। विशाल आंखों की ज्योति और भी ज्वलन्त थी। रानी कोई आभूषण नहीं पहिने थीं—केवल गले में मोतियों की एक माला और हाथ में हीरे की एक अँगूठी। श्वेत साड़ी पर एक मोटा श्वेत दुशाला ओढ़े थीं। सहेलियाँ भी जेवरों का त्याग करना चाहती थीं परन्तु रानी के आग्रह से उन्होंने ऐसा नहीं कर पाया था।

रानी—'बुन्देलखण्ड के रजवाड़े बुझे हुये दीपक हैं! उनमें तेल है परन्तु लौ नहीं।'

नाना—'क्या उनमें लौ पैदा नहीं की जा सकती?'

रानी—'कह नहीं सकती। तुमने ढूंढ़-खोज की? मैं तो बाहर आने-जाने से विवश रही हूं और हूं।'

तात्या—'मैं यों ही घूमा-फिरा हूं। विशेष तौर पर यहां के किसी राजा से प्रसङ्ग नहीं छेड़ा परन्तु वातावरण बिलकुल ठस जान पड़ा। राजाओं को अपने सरदारों और प्रजा से प्रणाम लेने में सुख की इति अनुभव होती है। हास-विलास और सुरापान में मस्त रहते हैं।'

रानी—'वीरसिंहदेव, छत्रसाल और दलपति के बुन्देलखण्ड का हाल कुछ और होना चाहिये था।'

नाना--'लखनऊ और दिल्ली का हाल कुछ अच्छा है।'

तात्या—'बहुत दिन हुये, जब मैं रानी साहब को लखनऊ, दिल्ली की परिस्थिति सुना गया था।'

रानी—'तुम लोग मुझसे रानीसाहब मत कहा करो। अच्छा नहीं लगता।'

तात्या—'बाईसाहब कहूंगा।'

नाना—'दिल्ली का हाल मैं सुनाता हूँ। बादशाह वृद्ध है। अपनी स्थिति से बहुत दुखी है। मन के महाकष्ट को कविता में होकर घटाता रहता है।'

रानी—'ग्वालियर ?'

नाना—'राजा का लड़कपन है। अङ्गरेज प्रवन्ध कर रहे हैं।'

रानी—'इन्दौर ?'

तात्या--'इन्दौर मैं गया था। वहां का तो कचूमर ही निकल गया है।'

रानी—'हैदराबाद ?'

तात्या—'वहाँ नहीं गया परन्तु इतना निर्विवाद समझिये कि हैदराबाद अङ्गरेजों का परम भक्त है। जनता अपने साथ है।'

रानी—'पञ्जाब की सिक्ख रियासतें ?'

नाना—'वहां मैं कहीं-कहीं गया। सिक्खों में अङ्गरेजों को पछाड़ने की शक्ति होते हुये भी, फूट इतनी विकट है और राजा इतने स्वार्थान्ध हैं कि अङ्गरेज उस ओर से विलकुल निश्चिन्त रह सकते हैं।'

रानी—'और झांसी में तो अब कुछ है ही नहीं। जो कुछ है भी, सम्भव है कि हाथ में न रहे।'

नाना—'झांसी में ही तो हम लोगों का सब कुछ है। मनू-बाईसाहब झांसी ही तो हम लोगों की एक आशा है।'

लक्ष्मीबाई के फीके होठों पर वही विलक्षण मुस्कराहट क्षीण रूप में आई।

बोली, 'क्या आशा है ?'

तात्या ने कहा, 'दामोदरराव की गोद स्वीकार की जावेगी, ऐसा विश्वास है। एलिस ने गोलमोल अवश्य लिखा है परन्तु कलकत्ते में अपने कुछ मित्र हैं। वे लोग कुछ सहायता करेंगे।'

रानी ने कहा, 'एलिस, मालकम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। ये लोग अपने लाट की नेत्रकोर के संकेत पर चलते हैं।'

तात्या ने सहेलियों की ओर देखा।

रानी समझ गईं। बोलीं, 'ये तीनों मेरी अत्यन्त विश्वासपात्र हैं। बिना किसी हिचक के बात किये जाओ।'

नाना ने कहा, 'बाईसाहब, यह लाट और इसके भाई बन्द 'यावचन्द्र दिवाकरौ' वाली संधि को समूचा ही पचा गये हैं। झांसी वाली संधि में न तो दिवाकर की सौगन्ध है और न चन्द्रमा की। इनकी लिखतम का, इनकी बात का कोई भरोसा नहीं। हमारी पैन्शन के छीनने के समय कहा था—तीस—बत्तीस साल में आठ लाख रुपया साल के हिसाब से तीन करोड़ रुपया बैठता है। वह सब कहां डाला? इनका विश्वास नहीं करना चाहिये।'

रानी ने वैसे ही मुस्कराकर पूछा, क्या ये लोग सीधे-साधे गणित को भी धोखा देते हैं?'

नाना जरा हँसा।

तात्या ने उत्तर दिया, 'बाईसाहब ये लोग अपने स्वार्थ पर अचल रूप से डटे रहते हैं। जब तक स्वार्थ को ठोकर लगने का अन्देशा नहीं रहता तब तक हरिश्चन्द्र और युधिष्ठिर का सा बर्ताव करते हैं परन्तु जहां देखते हैं कि स्वार्थ को धक्का लग जावेगा, तुरन्त पैंतरा बदल देते हैं और इतने धूर्त हैं कि इनमें से कुछ न्याय करने-करवाने का ढोंग बनाते हैं और दूसरे उसी ढोंग की ओट में स्वार्थ की सिद्धि करते हैं। जैसे, हेस्टिंग्स ने अवध की बेगमों को लूटा। कुछ अंग्रेज़ों ने उस पर मुकद्दमा चलाया। बाक़ी ने इनाम देकर उसको छोड़ दिया। इधर बिचारा नन्दकुमार बङ्गाली फांसी पर चढ़ा दिया गया।'

रानी ने प्रश्न किया, 'लखनऊ का अब क्या हाल है ?'

नाना ने उत्तर दिया, 'पहले का हाल तात्या बतला गया था। अब तो वहाँ शून्य है। जनता निसन्देह जीवट वाली है।'

रानी ने ज़रा सोचकर कहा, 'मैं इन सब बातों को सुनकर इस निष्कर्ष पर पहुंची हूँ कि जनता के चित्त का पता अभी पूरा नहीं लगाया गया है। जनता असली शक्ति है। मुझको विश्वास है कि वह अक्षय है। छत्रपति ने जनता के भरोसे इतने बड़े दिल्ली सम्राट को ललकारा था। राजाओं के भरोसे नहीं। मावले कुणभी किसान थे और अब भी हैं। उनके हलों की मूठ में स्वराज्य और स्वतन्त्रता की लालसा बँधी रहती है यहां की जनता को भी मैं ऐसा ही समझती हूं। उसको छत्रपति ने नेतृत्व दिया था, यहां की जनता को तुम दो।'

वे दोनों सिर नीचा करके सोचने लगे।

रानी ने अपनी सहेलियों की ओर देखकर कहा, 'तुम लोग क्या कहती हो ?'

सुन्दर ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मैं सरकार कुणभी हूं। और क्या कहूं ? आपकी आज्ञा का पालन करते हुये मरने के समय आगा-पीछा नहीं सोचूंगी।'

नाना ने कहा, 'तुम ठीक कहती हो बाईसाहब, अभी हम लोग जनता के पास नहीं पहुंचे हैं। आशा है जनता शीघ्र जाग्रत हो जावेगी परन्तु वह बिना नेता के कुछ नहीं कर सकती।'

'नेता को नेता नहीं ढूंढ़ना पड़ता।' रानी बोलीं, 'समर्थ रामदास का आशीर्वाद नेता को तो बिना विलम्ब उत्पन्न कर देता है।'

नाना—'मैं समझ गया। निराशा का कोई कारण नहीं।'

रानी—'हाँ, जो साधन, जहां मिले उसका उपयोग करना चाहिये। जनता मुख्य साधन है। राजा और नवाब की पीढ़ी, दो पीढ़ी ही योग्य होती है। परन्तु जनता की पीढ़ियों की योग्यता कभी नहीं छीजती।'

नाना—'अब एक प्रश्न और है—यदि तुम्हारा अधिकार लाट के यहां से मान्य रहा तो हमको स्वराज्य प्राप्ति के उपायों के जुटाने में सुविधा रहेगी परन्तु यदि लाट ने न माना, जैसी कि मुझको आशङ्का है, तब किस प्रकार कार्य साधन होगा ?'

रानी—'मैं ऐसा क्षण भर भी नहीं सोचती कि लाट नहीं मानेगा। नहीं मानेगा तो मैं मनवाऊँगी। झांसी राज्य की जनता सोलह आना मेरे साथ है। और यहां की जन संख्या महाराष्ट्र के मालवा से अधिक ही है, कम नहीं है। बुन्देलखण्ड में ब्राह्मण से लेकर भङ्गी तक हथियार चलाना जानते हैं और हथियार चलाने की हौंस रखते हैं।'

[१४]

सवेरे की उस कपकपाती ठण्ड में जब सूर्य भी बदली में मुंह छिपाये था, नवाब अलीबहादुर अपने नौकर पीरअली को साथ लिये हाथी पर सवार एलिस की कोठी पर पहुँचे। जिस भवन में आजकल डिस्ट्रिक्ट जज की कचहरी है, उसी में एलिस रहता था।

अभिवादन और कुशल-क्षेम प्रश्नोत्तरी के उपरान्त उन दोनों में बातचीत होने लगी।

अलीबहादुर ने कहा, 'रानी साहब की अर्जी का कुछ जवाब नहीं आया। शायद खारिज हो जावेगी।'

एलिस विचार की मुद्रा बनाकर बोला, 'कह नहीं सकता। आपका ऐसा ख्याल क्यों है?'

अलीबहादुर ने कहा, 'रियासतों के बुरे इन्तजाम को देखकर और जनता की भलाई की नजर से, सरकार ने कई रजवाड़ों में अपना अदल-अमन और इन्साफ चालू किया है। इसलिये शायद झाँसी में भी सरकारी बन्दोबस्त किया जावे।'

भोलेपन के साथ एलिस बोला, 'मुझको मालूम नहीं नवाब साहब, पर अगर ऐसा हो तो यहां की जनता सरकारी हुकूमत और कानून पसन्द करेगी?'

अलीबहादुर ने बड़े मीठे स्वर में जवाब दिया, 'दोनों हाथों से जनाब। स्वर्गीय राजा साहब के जमाने में जो जुल्म हुये हैं उनको आसानी से नहीं भुलाया जा सकता।'

एलिस सचाई का ढोंग करते हुये बोला, 'कुछ मैंने भी सुने हैं जैसे साधारण से अपराधों पर लोगों को बिच्छुओं से कटवाना। लेकिन, मरने के करीब के जमाने की कोई शिकायत मेरे कान तक नहीं आई।'

एलिस, नवाब साहब जैसे हिन्दुस्थानियों की आंतों तले की बात को निकालने का केंड़ा जानता था। उनकी ओर देखने लगा।

बहुत मुस्कराकर, बड़े मिठास के साथ अलीबहादुर ने कहा, 'एक मेरी जाती विनती है।'

एलिस ने प्रसन्नता प्रकट करते हुये कहा, 'जरूर कहिये, नवाब साहब।'

अलीबहादुर वास्तव में जिस प्रयोजन से एलिस से भेंट करने आये थे, उन्होंने प्रकट किया।

'जनाब को मालूम है, मिसलों में लिखा पड़ा है, मेरे स्वर्गीय पिता राजा रघुनाथराव साहब ने मुझको ८५ गाँव जागीर में लगाये थे। सरकारी बन्दोबस्त होने पर वह जागीर मेरे पास से निकाल ली गई और पाँच सौ रुपया माहवारी वसीका लगा दिया गया। बड़ा कुटुम्ब है। सफेदपोशी साथ लगी है। गुजर नहीं होती। राजा साहब गङ्गाधरराव से प्रार्थना की थी। उन्होंने कहा था एजेण्ट साहब से सलाह करके जवाब देंगे। फिर उनका लड़का मर गया और वे बीमार पड़ गये। बात अधूरी रह गई। अब शासन बदला है। शायद सरकारी बन्दोबस्त हो जाय। इसलिये मेरी उचित विनती पर ध्यान दिया जाना चाहिये।'

एलिस बोला, 'नवाब साहब, आप मेरे मित्र हैं। मुझसे जो कुछ सहायता बनेगी करूँगा। आप अर्जी दीजिये। उसमें सब हाल ब्योरेवार लिखिये। अर्जी चाहे एजेण्ट साहब बहादुर के पास वाला-वाला भेज दीजिये, चाहे मेरी मार्फत।' 'बहादुर' शब्द पर उसने जरा ज्यादा जोर लगाया।

नवाब साहब खुश होकर बोले, 'मैं बहुत धन्यवाद देता हूं।' परमात्मा आपको लाट साहब करे।' फिर मिठास में घुलकर कहा,

'जनाब को मालूम है कि महाराज रघुनाथराव वाला महल मेरे कब्जे में रहा है। मुझको महाराज दे गये थे। उसको राजा गंगाधरराव ने यों ही छीन लिया। किसी काम में नहीं आ रहा है। ताले पड़े हैं।'

एलिस ने कहा, 'मुझको मालूम है। वह जगह आपकी है आपको मिलेगी, ज़रा सा इन्तज़ार करिये।'

नवाब साहब ने सलाम करके धन्यवाद दिया। चलने की आज्ञा माँगने लगे।

एलिस ने हँसकर कहा, 'थोड़ा-सा और बैठिये, नवाब साहब।'

नवाब साहब को घर पर काम ही क्या था ? सट से जम गये।

एलिस ने फुसलाहट के ढङ्ग पर पूछा, 'आपके पास तो बस्ती के बहुत लोग आते-जाते हैं। क्या हाल है ?'

'बहुत अच्छा हाल तो नहीं है। लोग परेशान हैं। सच पूछिये तो वे लोग चाहते हैं कि कम्पनी सरकार का बन्दोबस्त हो जाय।'

लोगों से ज़रा और ज़्यादा मिलते रहिये और जनता के सुख-दुख की बातें मुझको बतलाते रहिये।'

'ऐसा ही करूँगा। लगभग दूसरे-तीसरे दिन हाज़िरी दिया करूँगा ?'

'रानी साहब का क्या हाल है ? उनका स्वभाव किस तरह का है ?'

'रानी साहब रंज में रहती हैं। चाल-चलन अव्वल दर्ज़े का खरा है। अपने धर्म की पाबन्द हैं। घुड़सवारी हथियार चलाना, लिखने-पढ़ने की योग्यता...'

'यह साहब मुझको मालूम है, नवाब साहब मैं उनकी बहुत इज्ज़त करता हूं। मैं केवल यह जानना चाहूंगा कि कोई इधर-उधर के लोग उसको बहकाते तो नहीं हैं।'

'अभी तो उनके नाते-गोते के लोग फेरे के लिये आ-जा रहे हैं। हाल में बिठूर के कुछ लोग आये थे। वे चले गये।

'कृपा होगी यदि आप इन आने जाने वालों का भी पता देते रहें।'

'बहुत अच्छा जनाब। पीरअली मेरा बहुत भरोसे का नौकर है। उसको इस काम पर तैनात कर दूंगा। मेरे साथ ही हाथी पर आया है। आप फरमायें तो सामने पेश कर दूँ।'

'नहीं नवाब साहब, जरूरत नहीं। आपको यक़ीन है तो मुझको भी है।

इसके बाद अलीबहादुर चले गये। घर जाते समय मार्ग में ही पीरअली को उन्होंने उसका कर्तव्य सुझा दिया।

खुदाबख्श हवेली पर मिला। उससे अर्जी देने को कहा। बोले, 'साहब जरा मुश्किल से माने। वह तुम्हारी अर्जी पर विचार करेंगे।'

खुदाबख्श ने कहा, 'मैंने रानी साहब से अर्ज करवाई थी। उन्होंने झांसी में रहने की आज्ञा दे दी है। जागीर के बारे में उन्होंने हुक्म दिया है कि लाट साहब के यहां से अधिकार मिलने पर, खुलासा कर दी जावेगी। इसलिये सोचता हूँ, अभी बड़े साहब या छोटे साहब, किसी को भी अर्जी न दूँ।

'अच्छी बात है', नवाब ने कहा। मन में कुढ़ गये।

एक क्षण उपरान्त पूछा, 'किसकी मार्फत अर्ज की थी ?'

'मोतीबाई अपनी तनख्वाह की फरियाद करने गई थीं। अपनी बात के सिलसिले में उन्होंने मेरी विनती भी कर दी।'

'कब ?'

'कल। और आज सवेरे रानी साहब का जवाब आ गया। बहुत नेक हैं।'

'मोतीवाई आई हैं ?'

'नहीं, उन्होंने खबर भेजी है।'

'मुझको खुशी हुई। मेरे लायक तुम्हारा जो काम होगा करूँगा।'

'आपकी कृपा है।'

अलीवहादुर ने सोचा, 'एलिस साहव के कान में इस वात के डालने की जरूरत नहीं है।'

खुदाबख्श शहर में रहने लगा।

[१५]

पति के देहान्त के बाद रानी की दिनचर्या इस प्रकार हो गई—

वह नित्य प्रातःकाल चार बजे स्नान करके आठ बजे तक महादेव का पूजन करतीं और उसी समय गवैये भजन-गायन सुनाते। फिर ग्यारह बजे तक महल के समीपवर्ती खुले आंगन में घोड़े की सवारी, तीरन्दाजी, नेजा चलाना, दौड़ते हुये घोड़े पर चढ़े-चढ़े, दांतों से लगाम पकड़ कर दोनों हाथों से तलवार भांजना, बन्दूक से निशाना लगाना, मलखम्भ, कुश्ती इत्यादि करती थीं और अपनी सहेलियों तथा नगर से आने वाली कुछ स्त्रियों को ये सब काम सिखलाती थीं। इनमें भाऊबख्शी की पत्नी प्रमुख थी और बहुधा आने वालों में झलकारी कोरिन।

ग्यारह बजे के उपरान्त रानी फिर स्नान करतीं और भूखों को खिलाकर तथा कुछ दान-धर्म करके तब भोजन करतीं। भोजन के उपरान्त थोड़ा सा विश्राम। फिर तीन बजे तक ग्यारह सौ राम नाम लिख कर आटे की गोलियां मछलियों को खिलातीं। उस समय वे किसी से बात-चीत नहीं करती थीं और न कोई उस समय उनके पास बैठ सकता या आ सकता था। वे किसी गूढ़ चिन्ता, किसी गूढ़ विचार में निमग्न रहती थीं। तीन बजे के उपरान्त सन्ध्या तक फिर वे ही व्यायाम और कसरतें—शरीर को फौलाद बनाने की क्रियायें।

सन्ध्या के उपरान्त आठ बजे तक कथावार्ता, पुराण, भगवद्गीता का अठारहवां अध्याय और भजन सुनतीं। इसके बाद एक घण्टा आगन्तुकों को भेंट के लिये दिया जाता था। तीसरी बार स्नान करतीं। इसके बाद थोड़े समय तक इष्टदेव का एकान्त ध्यान। फिर ब्यालू-भोजन। पश्चात सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई के साथ थोड़ा सा वार्तालाप और फिर ठीक दस बजे शयन। वे समय की बहुत पाबन्द थीं। शिथिलता तो छूकर नहीं निकली थी।

राज्य मिलेगा या न मिलेगा—इन दोनों के व्यवधान में वे महीने चले जा रहे थे। मोरोपन्त ताम्बे और अन्य कर्मचारी यथावत् कार्य कर रहे थे। एलिस वर्ग अपना पाया मज़बूत बनाने की तैयारी करता चला जा रहा था—बहुत सतर्कता बड़ी सावधानी के साथ।

सन् १८५४ के आरम्भ में कम्पनी सरकार के बड़े लाट ने गोद को अस्वीकार किया, और झांसी को कम्पनी के राज्य में मिलाने की घोषणा करदी परन्तु मालकम ने इस घोषणा को बहुत छिपा-लुका कर एलिस के पास भेजा और उसको हिदायत की कि बहुत सावधानी के साथ काम किया जावे, क्योंकि उसे मालूम था कि रानी जन-प्रिय हैं, कहीं झाँसी की जनता दङ्गा-फ़साद न कर बैठे। इसलिये एलिस ने सेना द्वारा झांसी का कठोर प्रबन्ध किया।

एलिस ने होशियारी के साथ उस घोषणा को एक जेब में रक्खा और दूसरी में पिस्तौल। सशस्त्र अङ्गरक्षकों को साथ लेकर रानी के पास क़िले वाले महल में पहुँचा। रानी को सूचना दे दी गई थी कि छोटे साहब के पास बड़े लाट की आज्ञा आ गई है, उसी को सुनाने आ रहे हैं मोरोपन्त इत्यादि बहुत दिन से आशा लगाये बैठे थे। दीवान खास में नियुक्त समय पर आ गये। रानी पर्दे के पीछे बैठीं। दीवानखास में एक ऊँची कुर्सी पर दामोदरराव।

एलिस दृढ़ पद और अदृढ़ हृदय के साथ दीवान खास में प्रविष्ट हुआ। मोरोपन्त इत्यादि ने बहुत विनीत भाव के साथ अभिवादन किया। दीवान खास में इत्र-पान इत्यादि सजे-सजाये रक्खे थे। बुरजों पर तोपों में सलामी दागने के लिये बारूद डाल दी गई थी। एलिस होठ से होठ सटाये आया और अपने माथे की शिकनों को समेट कर अभिवादन का उत्तर देता हुआ बैठ गया।

मोरोपन्त ने विनीत भाव के साथ कहा, 'साहब आपको यहां तक आने में बहुत कष्ट हुआ होगा।'

मुश्किल से एलिस का कण्ठ मुखरित हुआ, 'मेरा कर्तव्य है। दुःखदायी कर्तव्य है।'

सब लोग सन्नाटे में आ गये।

एलिस ने कहा, 'महारानी साहब आ गई हैं ?'

दीवान ने उत्तर दिया, जी साहब, पर्दे के पीछे विराजमान हैं।

एलिस ने जेब से मालकम वाली घोषणा निकाली। दरबारियों के कलेजे धक-धक करने लगे।

कलेजा थाम कर उन लोगों ने घोषणा को सुन लिया। गुलामगौस खाँ तोपची अनुकूल घोषणा की आशा से दीवान खास के एक दर के पीछे की तरफ कान लगाये खड़ा था। प्रतिकूल घोषणा को सुनकर मुँह लटकाये चुपचाप चला गया।

जब घोषणा पढ़ी जा चुकी—मोरोपन्त के मुंह से निकला, 'ओफ़ !'

दीवान के मुंह से, 'हाय !'

और दरबारियों के मुंह से—'अनहोनी हुई।'

दामोदरराव समझने की कोशिश कर रहा था, उसको आभास मिल गया कि कुछ बुरा हुआ।

यकायक ऊँचे परन्तु मधुर स्वर में रानी ने पर्दे के पीछे से कहा, 'मैं अपनी झांसी नहीं दूँगी।*

इन शब्दों से दीवान खास गूँज गया। वायुमण्डल ने उनको अपने भीतर निहित कर लिया।

भारत के इतिहास में वे शब्द पिरो दिये गये। झांसी की कलगी में वे शब्द मणि-मुक्ता बनकर चिपक गये।

अब एलिस का धड़कता हुआ हृदय कुछ स्थिर हुआ।

बोला, 'मुझको गवर्नर जनरल साहब की जो आज्ञा मालकम साहब के द्वारा मिली उसको मैंने पेश कर दिया। कुछ मेरे सामर्थ्य में था, मैंने किया। हम सब गवर्नर जनरल साहब की

*परिशिष्ट देखिये।

आज्ञा में बँधे हुये हैं। परन्तु मैं समझता हूँ कि असन्तोष का कोई कारण नहीं है। पाँच हजार रुपया मासिक वृत्ति महारानी साहब और उनके कुटुम्ब के लिये काफी है। यह मानना पड़ेगा कि गवर्नर जनरल साहब ने बहुत उदारता का बर्ताव किया है।'

एलिस का वाक्य समाप्त नहीं हुआ था कि पर्दे के पीछे से रानी ने उसी ऊँचे मधुर स्वर में कहा, 'मुझको यह वृत्ति नहीं चाहिये। न लूँगी।

एलिस ने अधिक ठहरना उचित नहीं समझा। दीवान से कहता गया, 'आप तुरन्त मेरे पास आइये।'

दीवान ने पान खानें का आग्रह किया। वह पान खाकर चला गया।

मुन्दर रानी के पास पर्दे में बैठी थी जब घोषणा सुनाई गई वह मूर्छित हो गई थी। एलिस के चले जाने पर वह होश में आई।

रानी ने कहा, 'क्यों री, मूर्छित होना किससे सीखा। क्या इस छोटे से राज के लिये ही हम लोग जीवित हैं?'

मुन्दर रोने लगी। रानी ने पुचकारा। मोरोपन्त इत्यादि ने समझाया।

दीवान ने रानी से पूछा, 'मैं एलिस साहब के पास जाऊँ? वह बुला गये हैं।'

रानी अनुमति देकर रनिवास में चली गईं।

कुछ क्षणों में ही समाचार सारे नगर में फैल गया। उस समय झांसी निवासियों के क्षोभ का ठिकाना न था। रानी की सेना तुरन्त युद्ध छेड़ देना चाहती थी परन्तु रानी ने निवारण किया। कहलवाया, 'अभी समय नहीं आया है।'

झलकारी ने जब सुना, अपने पति पूरन से कहा, 'छाती बर जाय इन अङ्गरेजन की, गटक लई झांसी।'

[१६]

एलिस ने झांसी का 'अङ्गरेजी बन्दोवस्त' आरम्भ कर दिया !

दीवान से दफ्तरों की चाभियाँ लीं। थाने पर अधिकार किया और शहर में अङ्गरेजी राज्य और अपने अधिकार की डौंड़ी पिटवा दी। तहसीलों में तुरन्त समाचार भेजा और वहां भी कड़े प्रबन्ध की व्यवस्था कर दी।

दीवान रानी को सब बातों की सूचना देकर अपने घर उदास चला गया। रानी के नित्य नियम में कोई अन्तर नहीं आया। अपने कार्य-क्रम के अनुसार जब वे विश्राम के लिये बैठीं तब मुन्दर, सुन्दर और काशी-बाई उनके पास आ गईं। वे अपने आभूषण उतार आई थीं।

रानी ने कहा, 'आभूषण क्यों उतार आई हो? क्या इसी समय रणभूमि में चलना है?'

मुन्दर सिसकने लगी। सुन्दर और काशी के नेत्र तरल हो गये।

रानी बोलीं, 'ये चिन्ह तो असमर्थता और अशक्ति के हैं। अपने सब आभूषण पहिनो और इस प्रकार रहो मानो कुछ हुआ ही नहीं है।'

मुन्दर ने रानी के पैर पकड़ लिये। उसकी हिलकी नहीं समाती थी।

रानी का कण्ठ भी थोड़ा रुद्ध हुआ। उन्होंने भौहें सिकोड़ीं। एक ओर देखने लगीं।

काशीबाई रुदन करती हुई बोली, 'बाईसाहब, बाईसाहब!'

मुन्दर ने करुण स्वर में कहा, 'सरकार अब क्या होगा?'

रानी ने अपने को सहज ही संयत कर लिया। मुन्दर के सिर पर हाथ फेरा। उसकी आँखें आंसुओं से भरी हुई थीं। सुन्दर और काशी की भी। बिखरे आंसुओं में होकर उन तीनों ने रानी के तेजस्वी रूप को

देखा। कई-कई लक्ष्मीबाइयां, कई-कई सतेज नेत्र दिखाई पड़े। उन्होंने अपनी आंखें पोंछी।

रानी ने कहा, 'ये आंसू बल का क्षय करेंगे। अभी तो अपने कार्य का प्रारम्भ भी नहीं हुआ है। सोचो, जब छत्रपति के उपरान्त शम्भू जी मारे गये, साहू समाप्त, राजाराम गत, तब ताराबाई की गांठ में क्या रह गया था? इतने बड़े मुगल सम्राट को ताराबाई कैसे परास्त कर सकी। उसने स्वराज्य की बागडोर को कैसे बढ़ाया? रो-रोकर? कपड़े और गहने फेंक-फेंककर? भूखों मर-मर कर? और सोचो, जीजाबाई को पति का सुख नहीं मिला। उन्होंने छत्रपति को पाला। काहे के लिये? किस आशा से? गद्दी पर बिठलाने के लिये? उन्होंने इतना तप, इतना त्याग अपने पुत्र को केवल हाथी की सवारी और नरम-नरम गद्दी पर विराजमान कराने के लिये किया था?'

वे सहेलियाँ सचेत हुईं।

रानी कहती गईं, 'हमको जो कुछ करना है उसकी दिशा निश्चित है। मार्ग में विघ्न-बाधायें तो आती ही हैं। खरीते का स्वीकृत न होना केवल एक बाधा ही है। स्वीकृत हो जाता तो क्या हम लोग केवल सो जाने के लिये ही जीवित रहतीं? भगवान कृष्ण की आज्ञा को याद रक्खो कि हमको केवल कर्म करने का अधिकार है। कर्म के फल का नहीं। देखो, छत्रपति के उपरांत जिन लोगों ने स्वराज्य के आदर्श को आगे बढ़ाया और उसकी जड़ें प्रबल बनाईं, वे बाधाओं का डटकर प्रतिरोध करते रहते थे। जिन लोगों की लालसा अपने लिये फलों की ओर गई, वे गिर गये और स्वराज्य की धारा धीमी पड़ गई; परन्तु वह सूखी कभी नहीं। दादा बाजीराव पेशवा हतप्रभ होकर बिठूर चले आये परन्तु हम लोगों को वे स्वराज्य की शिक्षा देने से कभी नहीं चूके। यदि हिन्दुस्थान में कोई भी उस पवित्र काम को अपने हाथ में न ले, तो भी, मैंने अपने कृष्ण के सामने, अपनी आत्मा के भीतर उसका बीड़ा उठाया

है। करूँगी और अवश्य करूँगी। चाहे मेरे पास खड़े होने के लिये हाथ भर भूमि ही क्यों न रह जाय। मान लो कि मैं सफल न हो पाई, तो भी जिस स्वराज्य धारा को आगे बढ़ा जाऊँगी, वह अक्षय रहेगी। उसी महावाक्य को सदा याद रक्खो—हमको केवल कर्म करने का 'अधिकार है, फल का कभी नहीं। हमको एक बड़ा सन्तोष है। जनता हमारे साथ है। जनता सब कुछ है। जनता अमर है। इसको स्वराज्य के सूत्र में बाँधना चाहिये। राजाओं को अङ्गरेज भले ही मिटा दें परन्तु जनता को नहीं मिटा सकते। एक दिन आवेगा जब इसी जनता के आगे होकर मैं स्वराज्य की पताका फहराऊँगी।'

सहेलियों की आंखों में भी चमत्कार उत्पन्न हो गया।

रानी बोलीं, 'मुझ से आज एक भूल हो गई है। मुझको एलिस के सामने कुछ नहीं कहना चाहिये था। मेरे उस वाक्य से वह अपने संगी अङ्गरेजों सहित चौकन्ना हो जायगा। वृत्ति भी अस्वीकृत नहीं करनी चाहिये थी।'

काशी ने स्थिर स्वर में प्रश्न किया, 'अब क्या करना है ?'

रानी ने कहा, 'अङ्गरेज जाति बहुत धूर्त है। उसका सामना चाणक्य नीति ही से हो सकता है। मैं वृत्ति को स्वीकृत करूँगी और आगे सावधानी के साथ काम करूँगी।'

रानी को पांच हजार रुपये महीने की मासिक वृत्ति और रहने के लिये झांसी नगर का महल मिला। क़िला खाली करा लिया गया।

रानी की सेना को छः महीने का वेतन देकर अपदस्थ कर दिया गया। हिन्दुस्थान उस ओर चलाया जाने लगा जिसको एक कवि के इस पद्य ने प्रकट किया है—

महफ़िल उनकी साक़ी उनका,
आंखें अपनी बाक़ी उनका।

[१७]

कप्तान गार्डन डिप्टी कमिश्नर 'वहादुर' का 'बन्दोवस्त' वहादुरी के साथ चला, जागीरें ज़ब्त हुईं, जिमीदारियाँ कायम हुईं। मन्दिरों की सेवा-पूजा के लिये जो जायदादें लगी थीं वे खत्म हुईं। पुजारियों को, पूजकों को यह बहुत अखरा। अर्जी-पुर्जियाँ कीं। बङ्गलों पर माथे रगड़े, एक न चली। गार्डन की दृढ़ता ने चोर-डाकुओं से लेकर पुजारियों तक के होश ठिकाने लगा दिये। हर बात में अर्जी और अर्जीनवीस का दौर-दौरा बढ़ गया। कानून की प्रतिष्ठा के लिये वकीलों को आदर मिला। पहले कोई परीक्षा इस पेशे के लिये जारी नहीं की गई थी। वकालत की सनद डिप्टी-कमिश्नर 'अता' किया करता था—ठीक उसी तरह जैसे जिमीदारी या नौकरी 'अता' होती थी। होशियार लोगों ने झटपट अँग्रेजी कानून, अदब, ढङ्ग सीखा और आगे चलकर बिना उनके अदालत का पत्ता भी न हिला। इस वर्ग ने उस युग में सब प्रकार की निष्ठाओं के ऊपर कानून की निष्ठा को बिठलाने में जाने—अनजाने सहायता की। केवल यह एक ऐसा अँग्रेजी संस्कार है जिसके प्रति हिन्दुस्थानियों की आत्मगत भावनाओं में श्रद्धा होनी चाहिये थी, परन्तु जिस प्रेरणा और जिस वातावरण में होकर और जिन उपकरणों के साथ न्याय का यह साधन आया था, वे सब हिन्दुस्थानियों को कतई अच्छे नहीं लगे। और इसलिये कानून भी अखरा।

परोपकार की वृत्ति से प्रेरित होकर अँग्रेजों ने कानून की प्राण प्रतिष्ठा हिन्दुस्थान के न्याय-मन्दिर में की हो सो बात नहीं थी।

देश में पूर्ण शान्ति हो, अङ्गरेजों का अधिकार सदा-सर्वदा इस देश में बना रहे और अङ्गरेजी व्यापार, व्यवसाय निर्बाध चलते रहें, बस इसी वृत्ति से प्रेरित होकर कानून बनाये गये और चलाये गये। गवर्नर जनरल से लेकर पटवारी और चौकीदार तक कायदा—कानून में बंधकर अपना-अपना काम करते चले जायं, अनुशासन में शिथिलता न आने पावे। तभी

तो अंग्रेंजी राज्य निर्विघ्न चल सकता था। उन लोगों ने हिन्दू नरेशों और मुसलमान बादशाहों के उत्थान-पतन के इतिहास पढ़े–सुने थे, इसलिये वे अपने शासन को उन सब गड्ढों से बचाना चाहते थे जिनमें नरेशों और बादशाह के सूबेदार और अन्य कर्मचारी मौक़ा पाते ही उसको ढकेल दिया करते थे।

समय-समय पर गार्डन शहर के बड़े आदमियों को मुलाकात के आकर्षण देता रहा। चिरौरी करना तो वे जानते ही थे, इसको भी करते थे परन्तु जब वे इसके सामने झुकते थे उनकी रीढ़ में दर्द हो उठता था और माथे पर बल पड़ जाते थे। घर आकर लाभ-हानि को आंकने के साथ वे साहब की हेकड़ी पर जलते थे और अपनी चिरौरी पर हँसते थे।

रानी को भी समाचार दे आते थे। वे चुपचाप सुन लेती थीं और उनके बाल-बच्चों के समाचार विस्तृत ब्यौरे के साथ पूछ लेती थीं। अन्य कोई बात न कहने का उन्होंने अपने मन पर बन्धेज कर रक्खा था।

शहर वाले महल के ठीक सामने राजकीय पुस्तकालय था। वह उन्हीं के हाथ में था। पुस्तकालय के पीछे एक ढाल था और ढाल के नीचे उनका सुन्दर बाग।* इस बाग में वह घुड़सवारी इत्यादि व्यायाम किया करती थीं। नगर की जो स्त्रियां उनके पास आती थीं उनको वह बड़ी निष्ठा के साथ इसी बाग में कसरतें सिखलाती थीं। अब तो सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई इतना सीख गई थीं कि दूसरों को सिखाने में रानी को इनसे बड़ी सहायता मिलने लगी। फिर भी रानी सोचती थीं कि अश्वारोहण और शस्त्र–चलाने में मैं सर्वश्रेष्ठ नहीं हुई हूं।

पुरानी लड़ाइयों के नक्शे उनके महल में थे। वे उनका बारीकी के साथ अध्ययन करती थीं। बनावटी लड़ाइयों के नक्शे काग़ज पर बनातीं और बिगाड़तीं। अपनी सहेलियों के साथ भिन्न-भिन्न प्रकार की अनेक

*यह बाग अब हार्डीगंज हो गया।

युद्ध-परिस्थितियों पर वाद-विवाद करतीं। उनको पहाड़ियों पर अश्वारोहण का शौक हुआ। झाँसी के आसपास पहाड़ियाँ हैं ही, उस समय जंगल और विषम स्थल भी थे। रानी तेजी के साथ सहेलियों सहित इन पर अश्वारोहण करतीं। झाँसी के आसपास की भूमि का उनको राई-रत्ती परिचय प्राप्त हो गया। इस भौगोलिक परिचय के क्षेत्र को वे निरन्तर, अनवरत बढ़ाती रहती थीं। जो स्त्री-पुरुष उनके पास भेंट के लिये आते उन सबसे कहतीं—

'शरीर को इतना कमाओ कि फौलाद हो जावे, तभी मन दृढ़तापूर्वक भगवान की ओर जायगा।'

उनका कसरतों का शौक शीघ्र विख्यात हो गया। बाला गुरू बिठूर से आये और मल्लविद्या के सूक्ष्मतम दांव-पेच बतला कर चले गये। नरसिंहराव की टौरिया के नीचे दक्षिणियों के मुहल्ले में, वे एक अखाड़ा जारी कर गये। रानी कुश्ती का अभ्यास अपनी सहेलियों के साथ करती थीं। तीर, बन्दूक, छुरी, बिछुआ, रैकला इत्यादि चलाने में पहले दर्जे की श्रेष्ठता उन्होंने अमीरखां, वजीरखाँ के निर्देशन से प्राप्त की। रानी का बाह्य रूप प्रचण्ड तेजपूर्ण था परन्तु अन्तर बहुत कोमल और उदार था।

इसी प्रकार महीनों बीत गये। एक दिन तात्या टोपे आया। जब रानी के पास पहुंचा, वे तीनों सहेलियां उनके साथ थीं। अब की बार तात्या ने जो रानी को देखा, तो बहुत सतेज पाया।

कुशलवार्ता के बाद बातचीत हुई। तात्या ने भारत की तत्कालीन राजनैतिक अवस्था का ब्योरे के साथ कथन किया।

सुनकर रानी ने कहा, 'तात्या, तुम बहुत चतुर हो। अपनी वार्ता सुनाते जाओ। मैं ध्यान दिये हूँ।'

तात्या मुस्कराकर बोला, 'मराठा रियासतों के राजाओं का जो हाल पहले देखा था, वही अब भी है। केवल एक अन्तर है। जनता सजग

है और सिपाही स्वाभिमानी हैं। महाराष्ट्र की जनता अब भी स्वराज्य-मत्त है। दरिद्र और धनाढ्य किसान, मजदूर और जागीरदार लगभग सब एक संकेत पर खड़े हो सकते हैं।'

'और एक बार फिर' रानी ने सहसा कहा, 'वे पर्वतमालायें और मैदान, वे घाटियां और उपत्यकायें 'हर हर महादेव' से गूंज उठेंगीं, कांप उठेंगी।'

रानी का सतेज मुख और भी तेजमय हो गया। परन्तु वे तुरन्त मुस्करा उठीं।

बोलीं, 'तात्या, मुझको तुम्हारे सामने तक नियंत्रण के साथ बोलना चाहिये। कभी-कभी मैं वाक्संयम की कमी के कारण अपने ऊपर खीज उठती हूं।'

तात्या ने दृढ़ स्वर में कहा, 'बाईसाहब, मेरे हृदय में, इनके हृदय में और सब जनता के हृदय में जो बात गड़ी हुई है वही आपके मुंह से निकल पड़ी।'

रानी बोलीं, 'तात्या अभी कुछ विलम्ब और है। तब तक महत्वपूर्ण स्थानों के भूगोल का बारीकी के साथ अध्ययन कर लो। कहां किस प्रकार सेनाओं को ले जाना पड़ेगा, कहां आसानी के साथ युद्ध किया सकता है और अपने अभीष्ट स्थान पर किस प्रकार शत्रु को एकत्र करके लड़ाई के लिये विवश किया जा सकता है, इन विषयों पर काफी समय और परिश्रम खर्च करने की आवश्यकता है। इसके सिवाय बारबरदारी के जानवरों और अच्छे घोड़ों के इकट्ठा करने की योजना पर विचार करते रहने को भी मन में बहुत स्थान मिलना चाहिये। तोपें, बन्दूकें, बारूद, गोला, गोली इत्यादि युद्ध सामग्री के बनाने वाले कारीगरों को भी हाथ में ले लो। अङ्गरेजी कारखानों में अपने आदमी नौकर रखवाओ। वे लगन के साथ सब क्रियायें सीखें। अपनी पुरानी बागी युद्ध परिपाटी* को तो गांठ ही में बांध लो।

*Guirella warfare.

हमारा देश उस परिपाटी को छोड़कर अङ्गरेज़ों से लड़ा, इसीलिये भी हारा।'

तात्या—'मैंने नाना साहब और रायसाहब के प्रोत्साहन और आज्ञा से इन सब बातों का ध्यान रक्खा है और आपकी भी आज्ञा मिली। पूरा ध्यान दूंगा। मैं इतने महीने पैदल अधिक फिरा हूं इसलिये मुझको देश का भूगोल बहुत अच्छी तरह याद हो गया है। किसी न किसी तरह बहुत से आदमी सामान और जानवर लेकर कहीं का कहीं पहुंच सकता हूं।'

रानी—'लड़ाइयों के नकशों का अध्ययन किया ?'

तात्या—'अच्छी तरह। पञ्जाब में जो लड़ाइयाँ अंग्रेज़ों से सिक्ख लड़े हैं उनका भी मैंने अध्ययन किया। व्यर्थ ही सिक्खों ने इतनी वीरता ख़र्च की। इतनी युद्ध सामग्री ऐसी अच्छी सीखी-सिखाई फ़ौज अदि अच्छे नायकों के हाथ में होती तो अङ्गरेज सिक्खों को कभी न हरा पाते। परन्तु कदाचित् उनकी हार देशद्रोहियों के कारण हुई है।'

रानी—'वे कहते होंगे कि भाग्य ने हरा दिया ?'

तात्या—'निस्संदेह यही कहते हैं।'

रानी—'मैं सिक्खों की लड़ाइयों के नकशों का अध्ययन करना चाहती हूं।'

तात्या ने कागजों पर मानचित्र बनाकर समझाया। रानी ने और उनकी सहेलियों ने भी समझा।

तात्या ने अनुरोध किया, 'हमको एक अपने विश्वसनीय जासूसी विभाग की बड़ी आवश्यता है।'

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'मैंने आज स्थापना करदी है।'

तात्या ने उत्सुक होकर पूछा, 'कैसे ? कहाँ ?'

रानी ने उत्तर दिया, 'यहीं। मेरी ये तीनों सहेलियां काम सीख रही हैं और कर रही हैं। मैं और स्त्रियों को भी तैयार कर रही हूं परन्तु काम सावधानी का है, इसलिये धीरे-धीरे कर रही हूँ।'

तात्या प्रसन्न हुआ।

बोला, 'झांसी में एक विलक्षण बात देखी। जो जहां निवास करता है वहां आपका भक्त है ही किन्तु यहां का निवासी जो बाहर चला गया है, वह भी झांसी के लिये अपना तन मन बलिदान करने के लिये प्रस्तुत है।'

रानी—'तुमको, जान पड़ता है, अकेले ही बहुत करना पड़ता है।'

तात्या—'नहीं बाईसाहब, नाना साहब, राव साहब इत्यादि बहुत लोग काम में जुटे हुये हैं। दिल्ली और मेरठ आदि प्रदेशों के अनेक मुसलमान भी प्राणों की होड़ लगाकर निरत हैं।'

रानी—'मुझको ऐसा लगता है कि शीघ्र ही कुछ हो बैठे परन्तु मैं सोचती हूँ कि अधिकचरी तैयारी में कुछ भी न किया जाना चाहिये। बहुत दिन हुये, मदरास की ओर सिपाहियों ने अचानक उपद्रव कर डाला था वह व्यर्थ गया। फल यह हुआ कि मदरासी अब सेना में कम भर्ती किये जाते हैं और अङ्गरेज़ों ने अपनी सावधानी को कस कर बढ़ा लिया है।'

तात्या—'कैसी भी सावधानी, कुटिलता और बुद्धि से अङ्गरेज़ लोग काम लें, हमारी विशाल, असंख्य जनता, उनका राज्य नहीं चाहती। इसलिये राजाओं और नवाबों का साथ न पाते हुये भी हमको अपने उत्साह में कमी प्रतीत नहीं होती।'

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'मैं जानती हूं।'

तात्या बोला, 'बाईसाहब, अब आपके शयन का समय आने को है—भोजन तो अभी हुआ ही नहीं है, जाता हूं। वहां एकाध दिन रह कर चला जाऊँगा। शीघ्र ही फिर सेवा में उपस्थित होऊँगा अर्थात् जैसे ही कोई महत्व की बात सामने आई, मैं आऊँगा।'

तात्या चला गया।

[१८]

दूसरे दिन रानी के पास आठ बजे के लगभग तात्या, रघुनाथसिंह और जवाहरसिंह आये। रघुनाथसिंह पुष्ट देह का बड़ा बलशाली पुरुष था। जवाहरसिंह ज़रा छरेरे शरीर का परन्तु काफी बलवान।

प्रणाम करके तीनों बैठ गये।

रानी ने पूछा, 'दीवान जवाहरसिंह को क्या कटीली से ले आये तात्या ?'

हाथ जोड़कर जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'दीवान रघुनाथसिंह का एक सांड़िनी सवार लिवा लाया। उसने प्रातःकाल के बहुत पहले ही सोते से जगाया था।'

तात्या ने कहा, 'मैं स्वयं नहीं गया। दीवान साहब से प्रार्थना की और इन्होंने तुरन्त रात को ही सांड़िनी-सवार भेज दिया। घुड़सवार जाता तो दीवान साहब को भी घोड़े पर ही आना पड़ता। शायद कोई सन्देह करता, इसलिये ऊँट भेजा।'

जवाहरसिंह बोला, 'श्रीमन्त सरकार, मुझे किसी का भी डर नहीं है। उस दिन के लिये तरस रहा हूं जब झांसी और अपने स्वामी के लिये अपना शरीर त्याग दूँ।'

रघुनाथसिंह झूमने लगा।

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'आप ही लोगों का बल भरोसा है। एक दिन आवेगा जब आप लोगों के जौहर का उपयोग होगा। तात्या ने कुछ बतलाया होगा ?'

रघुनाथसिंह—'बतलाया है सरकार। थोड़े में समझ लिया। हम लोगों को ज्यादा सुनने-समझने की दरकार ही नहीं। अपनी माता के दर्शन करने थे इसलिये चले आये।'

जवाहरसिंह—'हम लोगों को सरकार के हाथों अपनी तलवार पर गङ्गाजल छिटकवाना है।'

रघुनाथसिंह—'और अपनी माता का आशीर्वाद प्राप्त करना है।'

रानी मुस्कराईं। बोलीं, 'आप लोगों को मैं अच्छी तरह जानती हूं। आप लोग सहज ही प्राणों की होड़ लगा सकते हैं, परन्तु मैं चाहती हूँ कि प्राणों को सहज ही न खोया जाय। अवसर आने पर ही तलवार म्यान से बाहर निकले। छोटी-छोटी सी बात पर न खिच जावे।'

तात्या—'इन लोगों को लाट की आज्ञा पर बहुत क्षोभ हुआ और ये तुरन्त कुछ जवाब देना चाहते थे।'

रानी—'अङ्गरेजों के अन्याय बढ़ते जावें तो अच्छा ही है। फिर भगवान हमारी जल्दी सुनेंगे। असल में अभी इन छोटी बातों पर खीझ-कर कसर का निकालना, अच्छा नहीं है।'

उन दोनों ठाकुरों ने स्वीकार किया।

फिर उन दोनों ने अपनी चमचमाती हुई तलवारें, रानी के पैरों के पास रख दीं और हाथ जोड़ कर खड़े हो गये।

रानी ने मुन्दर से कहा, 'गंगाजल ला।'

मुन्दर गंगाजल ले आई। रानी ने पहले जवाहरसिंह की तलवार पर छीटे दिये और फिर रघुनाथसिंह की तलवार पर।

उन दोनों ने रानी के चरण स्पर्श करके तलवारें म्यान में डाल लीं।

रानी पुलकित हुईं।

एक क्षण में अपने को संयत करके बोलीं, 'गंगाजल की पवित्रता को निभाना। आपस की कलह में इसका प्रयोग मत करना और न किसी कलुषित काम में।'

उन दोनों ने मस्तक नवाये।

रघुनाथसिंह ने कहा, 'सरकार, अब आशीर्वाद मिलना चाहिये।'

रानी का गला भर आने को हुआ। उन्होंने नियन्त्रण कर लिया। बोलीं, 'तुम्हारे हाथों स्वराज्य के आदर्श का पालन हो। सुखी रहो और अपने पीछे ऐसा नाम छोड़ जाओ कि आने वाली अनन्त पीढ़ियां, तुम्हारे स्मरण से अपने को शुद्ध करती रहें।'

जवाहरसिंह ने कहा, 'माता का यह आशीर्वाद और वह पवित्र गंगाजल सदा हमारे साथ रहेगा।'

[१९]

ब्रिटिश सरकार के शासन की गतिविधि में अफसरों का जिले भर में दौरा करने, प्रत्येक दफ्तर के काम को बारीकी के साथ देखने-भालने, थानों, तहसीलों और जेलखानों का निरीक्षण करने का महत्वपूर्ण स्थान था। ग्राम्य-पंचायतों का स्थान अँग्रेजी अदालतें दौरे के साधन द्वारा आसानी के साथ ले सकती थीं। इसके सिवाय दौरे का जीवन शिकार देता था, नवीन-नवीन प्राकृतिक दृश्यों के दर्शन कराता था और सम्पूर्ण देहात के सम्पर्क में इन लोगों को ले आता था। शासन की जड़ें मजबूत बनती थीं।

गार्डन के पास दौरे पर झांसी से एक हरकारा कमिश्नर स्कीन की चिट्ठी लेकर आया। स्कीन ने उसको समाचार दिया था कि सागरसिंह नामक डाकू पकड़ा गया है, जेल में बन्द है। जेल का निरीक्षण करना चाहता हूँ। एक दिन के लिये जल्दी आ जाओ।'

उसके दूसरे दिन जेल का मुआइना हुआ। स्कीन और गार्डन साथ थे। बख्शिशअली जेल का दरोग़ा था। बड़े विनम्र भाव से सलामें झुकाता हुआ, उन दोनों के सामने आया। दोनों प्रसन्न हुये। उनको इस प्रकार का शाही अदब कायदा पसन्द था।

जेल के भीतर जाकर सागरसिंह को देखा। तगड़ा फुर्तीला आदमी था—आंख तीक्ष्ण और चमत्कारपूर्ण, दाढ़ी कानों पर चढ़ी हुई, हथकड़ी-बेड़ी से जकड़ा हुआ।

स्कीन ने पूछा, 'क्या नाम है ?'

'क्या आपको मालूम नहीं ?'

'तुम्हारे मुँह से सुनना चाहता हूं।'

कुंवर सागरसिंह।'

'कहाँ के रहने वाले हो ?'

'रावली के—वरुआसागर से कुछ दूर।'

'तुमने यह पेशा क्यों अपनाया ?'

'क्योंकि इससे बढ़िया कुछ और मिला नहीं।'

'हमारी फौज में नौकरी क्यों नहीं की ? अच्छा वेतन मिलता।'

'हमारे घराने में अफसरी होती आई है। हम कोरी सिपाहीगीरी कैसे करते ?'

'तुम धीरे-धीरे नायक, हवलदार और फिर सूबेदार तक हो सकते थे।'

'हमारे पुरखों की मातहती में पाँच—पाँच हजार सिपाहियों ने काम किया है। सेनापतियों के घराने के होकर हवलदारी सूबेदारी करेंगे ?'

'ओ ! जनरल बनना चाहता था ?'

'क्यों, जन्डैल बनना कोई बड़ी बात है ?'

'डाकू से जनरल ! हिन्दुस्थान में सब अजीब ही अजीब होता है। जनरल से डाकू हो जाता है तब डाकू से जनरली की तरक्की मामूली बात है ! तुमको मालूम है सागरसिंह।'

'कुँवर कहिये—मुझको अकेले नाम से कोई नहीं पुकारता।'

'अच्छा कुँवर सागरसिंह, तुमको मालूम है कि इसी जेलखाने में फांसी घर है और मुझको अकेले फाँसी देने का अधिकार है और तुम्हारे जो कारनामे सुने गये हैं, वे साबित भी होंगे और साबित होने पर तुमको फांसी की सजा दी जावेगी। मैं कल—परसों में तुम्हारा मुकद्दमा करके उसी दिन फांसी दे दूँगा।'

'मुझ अकेले कुँवर सागरसिंह को ?'

'तुम्हारे साथ और कौन-कौन हैं ?'

'बहुत से हैं।'

'नाम बतलाओगे ?'

'क्यों बतलाऊँ ? क्या पड़ी है ? मुझको कोई फ़ायदा हो, तो नाम बतला दूंगा ।'

'फ़ायदा होगा । यदि सच-सच कहोगे, तो सरकारी गवाह बना लिये जाओगे और छोड़ दिये जाओगे ।'

बतलाऊँगा परन्तु इन हथकड़ियों और बेड़ियों के बोझ के मारे और भूखों-प्यासों अकल बिगड़ गई है । आज ज़रा आराम मिल जाय तो कल अवश्य बतला दूँगा, पर अपने वचन पर पक्के रहना ।'

'हां ।'

स्कीन ने जेल-दरोगा को सागरसिंह का बोझ हलका करने की आज्ञा दी और अच्छे भोजन की व्यवस्था के लिये भी कह दिया ।

बख्शिशअली ने उस आज्ञा का यह अर्थ समझा कि कैदी के साथ पूरी रियायत की जावे ।

स्कीन और गार्डन उधर गये और इधर बख्शिशअली ने कुँवर सागरसिंह की हथकड़ी-बेड़ी खोल दीं । केवल साधारण पहरा रहने दिया ।

सागरसिंह ने कहा, 'दरोगा साहब, बहुत भूख लगी है । किसी ब्राह्मण के हाथ अच्छा खाना पकवा दीजिये ।'

बख्शिशअली बोला, 'कुँवर साहब, मैं तो पूड़ी-मिठाई से आपका थाल भर देता परन्तु इन अफसरों के मारे मजबूर हूं । अब लीजिये, कोई दिक्कत नहीं रही, हुकुम हो गया है ।'

अच्छा खाना बनवाया गया । आदर के साथ परोसा गया । पहरेदारों के मन पर भी कुँवर साहब का आतङ्क छा गया ।

शाम हुई । रात हुई । पहरे वाले जागते-जागते सो गये । बख्शिशअली को दिन भर के परिश्रम के मारे थकावट आई । वह भी चैन से सो गया ।

कुँवर सागरसिंह को सुअवसर प्राप्त हुआ। चन्दवरदाई का दोहार्द्ध याद आया—'फेर न जननी जन्म है, फेर न खेंच कमान।' और चुपचाप दीवार लांघकर नौ-दो ग्यारह हुआ और सवेरा होते-होते ऐसे जंगल में पहुँच गया, जहां उसके विश्वास के अनुसार स्कीन और गार्डन के फरिश्ते भी नहीं पहुंच सकते थे।

प्रात:काल जेल भर में गड़बड़ी फैल गई। बख्शिशअली का होश काफूर हो गया। कभी जेल हड़बड़ाकर पहुँचता और कभी घर में बीबी-बच्चों के पास आकर सिर पीटता।

स्कीन और गार्डन के पास भी खबर पहुंची। वे दोनों तुरन्त आये। क्रोध में डूबते-उतराते।

बख्शिशअली ने अत्यन्त विनम्र प्रणाम किया और अत्यन्त कातर स्वर में कहा, 'हुज़ूर हकुम दे गये थे कि हथकड़ी—बेड़ी खोल दो और अच्छा खाना दो। मैंने वैसा ही किया। उस पर पहरा रक्खा। फिर भी रात को वह मौका निकाल कर भाग गया।'

'बेवकूफ, गधे, नालायक।' स्कील पागल-सा होकर बोला, 'हमने यह हुकुम दिया था?' और तड़ाक से बख्शिशअली को चढ़े जूते की ठोल दी। वह गिर पड़ा। वैसी हालत में भी स्कीन ने उसको कई ठोकरें और लगाईं।

तब कहीं उसका क्रोध शान्त हुआ।

गार्डन ने कहा, 'बख्शिशअली, गनीमत समझो कि तुमको साहब बहादुर ने इतने से ही छोड़ दिया। तुमको हम बरखास्त करना चाहते हैं। बख्शिशअली रोने लगा। स्कीन ने इशारा किया। बख्शिशअली ने नहीं देखा।

गार्डन बोला, 'अच्छा तुमको बरखास्त नहीं करता हूं, मगर उस पहरे वाले को बरखास्त किया जावेगा, जिसके पहरे में से कैदी छूट कर भागा है।'

वह सिपाही बरखास्त कर दिया गया।

बख्शिशअली का अपमान पहरेदारों और कैदियों के सामने हुआ था। मार-पीट से ज्यादा वह घोर अपमान उसको खला। सीधा घर गया और बहुत रोया। बीबी-बच्चे भी रोये।

बख्शिशअली ने कहा, 'जी चाहता है कि तलवार से तुमको सबको कतर डालूं और गोली मार कर मैं मर जाऊँ। राजा गङ्गाधरराव ने या रानी लक्ष्मीबाई ने कभी तू-तड़ाक नहीं किया। आज इन गोरों ने मेरे बुज़ुर्गों की इज्ज़त खाक़ में मिला दी।'

बीबी ने रो-रोकर समझाया। मुश्किल से अपने अपमान और क्षोभ को पीकर, बख्शिशअली ने वह दिन भूखों काटा।

'कैसे मुंह दिखलाऊँगा ?' वह बार-बार कहता था, 'कहाँ तो मैं आठों फाटकों का कोटपाल था और कहाँ आज यह हालत हुई !' बार-बार आत्मघात की, बीबी-बच्चों को मार डालने की प्रतिक्रिया मन में उठती थी परन्तु उनकी रोती हुई बेबस सूरतों को देख-देखकर सहम जाता था।

अन्त में आत्मघात का निश्चय उसके मन के किसी कोने में जाकर लीन हो गया। बख्शिशअली फिर यथावत काम करने लगा।

जब कभी स्कीन या गार्डन जेल-निरीक्षण के लिये आता, बख्शिश-अली को लगता मानो कोई जल्लाद आया हो।

[२०]

नवाब अलीबहादुर गार्डन और स्कीन के पास आया-जाया करते थे। परन्तु गार्डन के पास बहुधा पैंशन बढ़ने की आशा अभी शीर्ण नहीं हुई थी। उनको इधर-उधर की खबर पीरअली दिया करता था। वे इन खबरों को गार्डन के पास पहुंचा देते थे।

पीरअली ने दीवान जवाहरसिंह के आने का समाचार नवाब साहब को दिया; परन्तु वह और तात्या जब चले गये तब।

नवाब ने कहा, 'कुछ दाल में काला है। जवाहरसिंह कटीली वाले राजा की फौज के एक बड़े अफसर रहे हैं। बिठूर से उस आदमी का इन्हीं दिनों आना इल्लत से खाली नहीं है। क्या कर्नल जमाखां भी इन लोगों से मिले ?'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'कह नहीं सकता। अनुमान करता हूँ। कि जरूर मिले होंगे। कर्नल साहब की हवेली में ही तो वह बिठूर-वाला ठहरा था। उसको टोपे कहते हैं।'

'इन लोगों में क्या बातचीत हुई या किस प्रसङ्ग की चर्चा हुई यह जानने की जरूरत है।'

'मैंने जानने की कोशिश की; लेकिन वे लोग दीवान रघुनाथसिंह के यहाँ ऐसी जगह बैठे थे कि वहां से सुनाई नहीं पड़ सकता था।'

ये लोग रानी साहब के पास भी गये ?'

'जी हां गये। और हँसते, खुश होते हुये लौटे।'

'कर्नल साहब के यहां वह टोपी या टोपे क्या करता था ?'

'कर्नल साहब की हवेली के नजदीक नाटकशाला वाली जूही रहती है। मुझको मालूम होता है कि उस टोपे के लिये वह चुम्बक है।'

'हो सकता है। और इसीलिये शायद वह कर्नल साहब के यहां ठहरता है। मगर जवाहरसिंह की और इस टोपे का रघुनाथसिंह की

भीतरी बैठक में देर तक बातचीत करना इस मतलब से हुआ होगा ? खुदाबख्श कहां है ?'

'वह तो मोतीबाई के पीछे दीवाने हो रहे हैं।'

'मोतीबाई रानी साहब के पास कभी जाती है ?'

'जी हां, कभी कभी।'

'उससे काम नहीं निकाला जा सकता है ?'

'कोशिश करूंगा।'

नवाब साहब सोचने लगे, 'मोतीबाई को मेरे पास लिवा लाओ। गाने के बहाने से।'

पीरअली—'लेकिन वह कहीं भी नहीं गाती। बहुत कम बाहर निकलती है।'

नवाब—'मेरे यहां गायगी। लेकिन खुदाबख्श को खबर न हो। खुदाबख्श से बाद में बातचीत की जावेगी।'

पीरअली अपने घर गया। देखा, मोतीबाई मौजूद है। पीरअली ने सोचा, बहुत अच्छा सकुन हुआ।

आवभगत के बाद उसने मोतीबाई से बातचीत की।

'मैं तो आपके यहां आने वाला था।' प्रसन्न होकर पीरअली ने कहा।

मोतीबाई ने मधुर मुस्कान के फूल बरसाये। साड़ी का घूंघट खींचा। गर्दन मोड़ी। बोली, 'मैं खुद आ गई। आप किस लिये कष्ट कर रहे थे ?'

नवाब साहब को गाने का शौक हुआ है। कहा, 'अकेले में सुन लूंगा। महफिल न होगी।'

'और मैं भी यही सोच कर आई हूं। अब पर्दे में गुजर नहीं हो सकती ! खुलेआम तो नाचना-गाना मुझसे न होगा, चाहे भूखे

भले ही मर जाऊँ। मगर नवाब साहब सरीखे बड़े आदमियों को सुना आने में मुझको कोई उज्र न होगा।'

'नवाब साहब भी यही फरमाते थे, वह महफिल नहीं जोड़ेंगे।'

'आप भी सुना करिये।'

'मैं तो फर्ज और शौक दोनों के लिये मौजूद रहूंगा। उस्ताद मुगलखां के धुरपद से जब जी भर जाये तब आपका ख्याल और नाटक के गीत ही मौज पैदा कर सकते हैं। सच पूछिये तो न दिन भर का समय हो और न मुगलखां साहब को सुना जा सके।'

'तो मैं कितने बजे आऊँ ?'

'मेरे ख्याल में शाम का वक्त अच्छा रहेगा।'

'जी हां, लेकिन मैं आठ बजे चली आऊँगी।'

'हां ठीक है। दो घण्टे क्या कम हैं।'

मोतीबाई समय नियुक्त करके चली गई।

पीरअली ने सोचा, 'उमर कुछ बढ़ गई है, मगर अब भी झूमती फुलवारियों का सा मदमाता यौवन है।'

पीरअली ने नवाब साहब को सूचना दी।

सन्ध्या के छः बजे मोतीबाई आ गई।

पर्दे की आड़ टूट गई, प्रारम्भ में जरा शरमाते-शरमाते। अलीबहादुर ने सोचा स्वाभाविक है। उनको आश्चर्य यही था कि रङ्गमंच पर बिना किसी शील-संकोच के नृत्य-गान करने और हावभाव दिखलाने वाली अभिनेत्री इतने दिनों और ऐसा पर्दे का ढोंग क्यों किये रही।

नवाब ने रसीलेपन से कहा, 'मैंने रङ्गशाला में आपकी कला का कमाल देखा है। समझ में नहीं आता था कि इतना लाज संकोच और मेरे घर आकर भी आप क्यों करती रही हैं।'

'हुजूर' मोतीवाई वोली, 'आदत पड़ गई थी। अब भी बिलकुल नहीं छूटी है। गुजर के लिये पर्दे को कम कर दिया है, लेकिन बिलकुल तो न छोड़ सकूंगी। वहुत लोगों ने अङ्गरेज सरकार की नौकरी कर ली है। मुझे तो कोई नौकरी मिल नहीं सकती, इसलिये गाने-बजाने से पेट भरना तै कर लिया है। आप सरीखे कुछ रईसों को खुश करना ही मेरी गुजर के लिये काफी होगा।'

नवाव ने सोचा मोतीवाई शोख हो गई है। उसकी वह शोखी उनको भली मालूम हुई।

मोतीवाई ने लगभग एक घण्टा गाया-नाचा परन्तु इसके बाद न तो नवाब साहव का मन लगा और न मोतीबाई का।

नवाब साहव ने कहा, 'जरा सुस्ता लीजिये। फिर देखा जायगा, तब तक बात करें। पीरअली पान लाना।'

पीरअली ने पान दिये।

नवाव ने पूछा, 'कभी आप महलों में जाती हैं? काम ही क्या पड़ता होगा?'

'जाती हूं', मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'रानी साहव भजन सुनती हैं। उनको मीरा के भजन बहुत पसन्द हैं। रोज तो नहीं जाती। कभी-कभी सुना आती हूं। वहां थोड़ा बहुत मिल जाता है।'

'रानी साहव की पैंशन में से वहुत लोगों को सहारा मिलता है इसीलिये बिचारी को मुश्किल का सामना करना पड़ता होगा।'

'जरूर, मगर वे वहुत उदार हैं। उनका निजी खर्च तो बहुत कम है। दान-पुण्य में वहुत दे डालती हैं।'

'वहुत नेक हैं और फिर इधर-उधर के आने-जाने वाले नाते-रिश्ते के लोग, पुराने मुलाजिम लगे हैं; उनको भी कुछ न कुछ देना ही पड़ता होगा।'

मोतीबाई की एक आँख के कोने पर सजगता आई। दरवाज़े से सटा हुआ पीरअली कान खड़े करके सुनने लगा।

मोतीबाई ने मुस्कराकर कहा, 'आते तो बहुत लोग हैं पर उनको लेते-देते मैंने नहीं देखा।'

'यही क्या कम है कि रानी साहब उनको बातचीत ही के लिये काफ़ी समय देती होंगीं।'

अलीबहादुर ने सुझाव दिया, 'पूजा-पत्री और सवारी कसरत में भी कई घण्टे निकल जाते हैं।'

मोतीबाई ने तुरन्त कहा, 'न मालूम कहां से दुनियां भर के कामों के लिये वे समय निकाल लेती हैं। सवारी, कसरत कुश्ती करती हैं, औरतों को सिखलाती हैं, पूजा करती हैं, गीता जी को सुनाती हैं और न जाने कितने स्त्री-पुरुषों से बातचीत करती हैं। इसी बीच में, कभी-कभी मेरा गाना भी सुन लेती हैं।'

'तुम्हारा गाना तो बाईजी देवताओं को भी लुभा लेगा', अलीबहादुर ने दाढ़ी पर हाथ फेरते हुये कहा।

मोतीबाई मुस्कराई। झेंप का अभिनय किया। फिर भोलेपन के साथ बोली, 'उन्होंने एक काम ज़रूर बहुत कम कर दिया है। शायद छोड़ ही दिया हो। रामनामी गोलियों का बनाना और अकेले में बैठकर मछलियों को खिलाना। यह काम अब उनकी सहेलियाँ करती हैं।'

'दासियाँ, बाई जी ?'

'वह उनको दासियां नहीं कहतीं। सहेलियाँ कहती हैं।'

'वह बड़ी नेक हैं, बाई जी। अब तो उन्होंने पर्दा छोड़ दिया है! मैंने भी दर्शन किये हैं। न मालूम पहाड़ों और नदियों के घूमने में उनको क्या मजा आता है।'

'मुझसे भी घोड़े की सवारी के लिये कहा था।'

'सचमुच ? आपने सीखी ?'

'पहले तो बहुत डर लगा, पर अब थोड़ा-थोड़ा सीख गई हूं। उनकी सहेली मुन्दर बड़ी अच्छी सवार है। वह सब औरतों को सिखलाती है।'

'क्या औरतों को हथियार चलाना सिखलाया जाता है।'

'वह तो लाजमी है।'

'आपने भी सीखा है ?'

'सीख रही हूं।'

'किस मतलब से ?'

'मैं तो, अपने हाथ-पैर अभी बरसों अच्छी हालत में रखना चाहती हूं। इसलिये सीखती हूं। सेवल इसी मतलब से रानी साहब सवारी कसरत इत्यादि करती हैं। और मतलब मुझको मालूम नहीं।'

'आपको घोड़े पर सवार देखकर मुझको बड़ा अच्छा लगेगा। शायद फरेरू आ जाय। आपकी तन्दुरुस्ती, रूप, रङ्ग सब पहले से बहुत अच्छे हैं—कारण यही कसरत, सवारी वगैरह है।'

अलीबहादुर ने सोचा—स्त्री को पराजित करना हो तो उसकी प्रशंसा करो।

मोतीबाई पराजित सी जान भी पड़ी। मुस्कराकर, झेंपकर सिमट-कर उसने आंखों में मादकता उड़ेली।

बोली, 'हुज़ूर ने तो यों ही बहुत तारीफ कर डाली।'

नवाब ने कहा, 'मैंने झूठ नहीं कहा।'

फिर हँसने लगे। पान खाया और खिलाया! सतर्कता के साथ पूछा, 'कौन कौन लोग रानीसाहब के पास आते हैं, या आये हैं ?'

मोतीबाई ने अविलम्ब उत्तर दिया, 'हाल में बहुत लोग आये हैं। बिठूर से तात्या टोपे, कटीली से दीवान जवाहरसिंह, एक कोई दूल्हाजू,

कोई—क्या विनय करूं बहुतों के नाम ही याद नहीं आ रहे हैं। आगे याद रक्खा करूंगी।'

'जरूर और मुझको बतला दिया करो। रुपये पैसे की सकुच मत करना आप। जो कुछ थोड़ा सा मेरे पास है, वह अपना समझो।'

'आपकी बहुत कृपा है। मैं अहसानों को कभी नहीं भूलूंगी।'

'और आने-जाने वाले लोग जो कुछ बात किया करें वह भी मुझको सुना जाया करिये। अभी हाल में कोई खास बात हुई हो तो······'

'हां कुछ बातें तो मुझको मालूम हैं। निवेदन करूं ?'

'अवश्य, मैं ध्यान से सुनूंगा।'

'रानी साहब गोद लिये राजकुमार का जनेऊ करना चाहती हैं। उसी का मश्विरा हो रहा है।'

'दीवान जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से ?'

'जी हां। वे सब पुराने नौकर और सब नातेदारों को तथा शहर और देहात के रईसों को उस मौके पर बुलवायेंगी। चूंकि रानी साहब को अपने पुराने आदमियों के सही पते नहीं मालूम इसलिये जो लोग आते हैं उनके साथ इसी प्रसंग की चर्चा करते हैं। वे राजकुमार के जनेऊ पर बहुत खर्च करेंगी।'

'आगे कोई और बात मालूम पड़े तो मुझको आप जरूर बतलाना।'

'अपना कर्तव्य और सौभाग्य समझूंगी', कहकर मोतीबाई चलने को हुई। उसने मुस्कराकर एक कटाक्ष किया।

नवाब साहब ने पान दिया।

मोतीबाई ने कहा, 'मैं सीधी रानी साहब के पास महल जाऊंगी। उनको एकाध भजन सुनाकर फिर घर पहुंचूंगी। यदि कोई खास बात पड़ी तो सेवा में आकर अर्ज करूंगी।'

पीरअली ने अनुरोध किया, 'मैं आपको महल तक पहुंचा आऊं ?'

मोतीबाई ने इनकार नहीं किया।

मार्ग की चहल-पहल कम हो गई थी परन्तु बन्द नहीं हुई थी।

मोतीबाई ने अवसर पाकर पीरअली से कहा, 'नवाब साहब के सामने का पर्दा तोड़ दिया अब और लोगों के सामने भी निकलने लगूंगी।'

पीरअली समझ गया। बोला, 'खुदाबख्श साहब मेरे दोस्त हैं। उनसे कहूँगा तो वह मेरा मुंह मीठा करा देंगे।'

'जी नहीं, अभी नहीं। वे बहुत दिक़ करते हैं। आपका जैसा मिजाज और क़ायदा उन्होंने नहीं पाया है।'

पीरअली प्रसन्न भी हुआ और सहमा भी। 'क़ायदा' शब्द उसको खटका।

वह मोतीबाई को महल के फाटक तक पहुंचाकर लौट आया।

रानी कथावार्ता का सुनना समाप्त कर चुकी थीं। मोतीबाई ने आकर प्रणाम किया। जब सब लोग चले गये रानी ने उससे पूछा, 'क्या हाल है मोती ?'

मोती ने अनुनय के साथ कहा, 'सरकार को मीरा का एक पद सुना दूं तब कुछ निवेदन करूँगी।'

मोती ने तम्बूरे पर मीरा का एक पद सुनाया। फिर तम्बूरा जहाँ का तहां रख कर बोली।

'सरकार के विरुद्ध एक जासूस और पैदा हो गया है।'

रानी ने शान्त भाव से कहा, 'कौन है मोती ?'

'नवाब अलीबहादुर।'

'मुझको सन्देह तो नवाब साहब पर पहले से था। क्या बात हुई ?'

मोतीबाई ने ओर से छोर तक सब सुनाया।

जनेऊ के सम्बन्ध की बात को सुनकर रानी बोलीं, 'मुझको तेरी बुद्धि पर अचरज होता है मोती। मेरे मन में दामोदरराव का जनेऊ करने की और अपने लोगों को निमन्त्रित करके समारोह करने की बात कुछ दिन से उठ रही है। पर मैंने उसको प्रकट किसी पर नहीं किया। तूने कैसे जान लिया ?'

'सरकार' मोतीबाई ने उत्तर दिया, एक दिन राजा भैया से आपने कहा था—तुम्हारा जनेऊ होगा। इतना याद था। उसी को मैं काम में ले आई।'

रानी ने मुस्कराकर प्रस्ताव किया, 'तुमको खुदाबख्श की भी जाँच करनी है।'

मोतीबाई ने ज़रा सा सिर नवाया। फिर दृढ़ स्वर में बोली, 'सरकार, यदि काम के निकले तो फ़र्द में नाम रहने दीजियेगा, नहीं तो—काट कर अलग कर दीजियेगा।'

'मुझको विश्वास है मोती', रानी ने कहा, 'लोहा, लोहा ही सिद्ध होगा।'

रानी ने पूछा, 'जूही और दुर्गा कुछ कर रही हैं ?'

मोतीबाई ने उत्तर दिया, 'हाँ सरकार। दुर्गा फ़ौज के हिन्दुस्थानी अफ़सरों को नाचना-गाना प्रदर्शित करती है और उनसे भेद लेती है। जूही की परीक्षा बाक़ी है।'

'मेरा सम्बन्ध तो प्रकट नहीं होता ?' रानी ने प्रश्न किया।

'नहीं सरकार', मोती ने उत्तर दिया।

रानी ने कहा, 'मुझको तुम्हारी बुद्धि और अभिनय-कला का भरोसा है।'

मोतीबाई ने उत्साह के साथ आश्वासन दिया।

'यदि मेरा अभिनय श्री चरणों की कुछ भी सेवा कर सका, तो अपने जन्म को सार्थक मानूंगी।'

मोतीबाई अपने घर चली आई।

[२१]

रानी जब से घुड़सवारी के लिये बाहर निकलने लगीं, तब से वह प्रायः मर्दानी पोशाक करने लगी थीं—सिर पर लोहे का कुला, ऊपर साफा, उसका एक खूंट पीछे फहराता हुआ। कंचुकी के ऊपर सटा हुआ अङ्गरखा। पैजामा, अङ्गरखे और पैजामे पर कसी हुई पेटी। दोनों बग़लों में पिस्तौलें और दोनों ओर परतलों में तलवारें। कभी-कभी इतने सब हथियारों के अलावा नेज़ा भी हाथ में साध लेती थीं। इस पर भी घोड़े को बहुत तेज़ चलाने में कसर नहीं लगाती थीं। उनको कठियावाड़ी घोड़े अधिक पसन्द थे और सफेद रङ्ग के खास तौर पर। घोड़ों की उनको विलक्षण पहिचान थी।

उन्हें कुला लगा कर साफ़ा बांधने में एक असुविधा अवगत होती थी—लम्बे केशों की। विधवा थीं इसलिये महाराष्ट्र की प्रथा के अनुसार बाल मुड़वाने में कोई बाधा न थी। अपने केशों का कोई मोह था ही नहीं। सोचा काशी जाकर मुण्डन करा लें। पर्यटन हो जावेगा और काशी में बैठकर उस ओर की राजनैतिक परिस्थिति का आभास मिल जावेगा। एक भावना और थी—जिस घर में माता ने जन्म दिया था उसके दर्शन भी मिल जायेंगे।

खोज करने पर मालूम हुआ कि बिना डिप्टी कमिश्नर की अनुमति के काशी यात्रा के लिये नहीं जा सकतीं।

अनुमति के लिये गार्डन को अर्ज़ी दी गई। उसके पास दीवान जवाहरसिंह इत्यादि के रानी के पास आने-जाने की खबरें पहुंच चुकी थीं। वह चिढ़ा हुआ था। दूसरे अपने अधिकार को करारे रूप में लाने का अभ्यासी था। काशी यात्रा के लिये जो अर्ज़ी दी गई थी वह उसने अस्वीकृत करदी।

जिसने सुना उसी के जी को चोट लगी।

रानी के प्रण किया, 'मैं केश मुण्डन तभी कराऊँगी, जब हिन्दुस्थान को स्वराज्य मिल जावेगा, नहीं तो स्मशान में अग्निदेव मुण्डन करेंगे।'

उनकी यह भीषण प्रतिज्ञा उनकी सहेलियों को मालूम थी। वे सब इस प्रतिज्ञा पर प्रसन्न थीं—उनको पसन्द न था कि ऐसे सुन्दर बालों का कुसमय क्षय हो।

दामोदरराव रानी के प्रगाढ़ स्नेह में पल रहा था, बढ़ रहा था। कोई निज माता अपने गर्भ-प्रसून को इतना प्यार न करती होगी जितना वह दामोदरराव को चाहती थीं।

समय अपनी प्राकृतिक गति से चला जा रहा था। इसी में रानी की योजना भी संवृद्धि और पुष्टि होती जा रही थी। कहाँ क्या हो रहा है, इसके समाचार उनको निरन्तर मिलते रहते थे। वह युद्ध सामग्री तैयार करने वाले कारीगरों को एकत्र करने की योजना पर, बहुत ज़ोर देती थीं—और यह हो रहा था।

इस ओर रानी के जासूस और विश्वसनीय सहायक काम कर रहे थे। उस ओर नाना और राव के तथा बहादुरशाह और अवध के साथ सहानुभूति रखने वालों के लोग, अपने-अपने काम में जुटे हुये थे।

रानी ने देखा कि लोगों को इकट्ठा करने का समय आ गया है। वह जानती थीं कि ऐन मौक़े पर तुरन्त इकट्ठा करना दुष्कर होगा, इसलिये वे सबको एक बार एकत्र करके, तब योजना को आगे बढ़ाना चाहती थीं, हर काम की योजना वे पहले बना लेती थीं, तब व्यवस्था के साथ उसको व्यवहार का रूप देती थीं।

इसलिये उन्होंने दामोदरराव का जनेऊ करना निश्चित किया और उसके समारोह में जगह-जगह से प्रमुख लोगों का, जमाव करके आगे के क़दम की बाबत परामर्श करना तै किया।

इस काम के लिये एक लाख रुपये की ज़रूरत थी। नक़द रुपया उनकी गांठ में न था।

दामोदरराव छः वर्ष का हो चुका था। सातवीं लग गई। इस वर्ष में जनेऊ होना ही चाहिये। योजना भी इस स्थिति में आ गई थी कि इस वर्ष में एक महान सम्मेलन का किया जाना जरूरी था।

मोतीबाई इत्यादि ने समाचार दिया कि अङ्गरेजों की हिन्दुस्थानी सेना में, काफी असन्तोष फैल गया है।

रानी ने पुरोहित को बुलाकर मुहूर्त सुधवाया। मुहूर्त निकलने पर गार्डन को अर्जी दी कि दामोदरराव के नाम से जो छः लाख रुपया खजाने में जमा है, उनमें से उसके जनेऊ के लिये एक लाख रुपया दे दिया जावे।

पहले तो गार्डन की इच्छा अर्जी को तुरन्त खारिज कर देने की हुई। फिर सोचा हिन्दुओं की यह कोई जरूरी रस्म है, इसलिये अन्तिम निर्णय को स्थगित कर दिया।

उसने लोगों से पूछ-तांछ शुरू कर दी। अलीबहादुर से खोजा। उन्होंने कहा, 'ब्राह्मणों में यह रस्म लाजमी है।'

सेठ साहूकारों से पूछा। उन्होंने कहा, 'अनिवार्य है।'

अन्त में फैसले को अपने पेशकार की सम्मति पर छोड़ा।

पूछने पर पेशकार ने कहा, 'हुजूर ऊँची जाति के हिन्दुओं, विशेषकर ब्राह्मणों में यह रस्म किसी प्रकार भी नहीं टाली जा सकती।'

गार्डन ने कमिश्नर से. कमिश्नर ने लैफ्टिनेण्ट गवर्नर से पूछा। अन्त में गार्डन की मर्जी इस शर्त पर छोड़ा गया कि अगर झांसी शहर के चार भले आदमी जमानत दें तो रुपया दे दिया जाय।

गार्डन ने रानी को सूचना दी, 'खजाने में जो रुपया जमा है वह दामोदरराव नाबालिग का है। यदि बालिग होने पर दामोदरराव ने सरकार पर दावा कर दिया तो सरकार को रुपया अपनी थैली में से देना पड़ेगा, इसलिये झांसी शहर के ऐसे चार आदमियों की जमानत दीजिये, जिनमें मेरा मन भरे।'

रानी को इस अपमान पर जितना क्षोभ हुआ उसकी मात्रा का माप उस मानसिक बल से लग सकता है, जिसकी सहायता से रानी ने उस क्षोभ को दबाया। अपने ही रुपये के लिये 'ऐसे चार भले आदमियों की जमानत जिनमें मेरा मन भरे !'

झाँसी में चार क्या बावन बड़े-बड़े आदमी थे। रानी की जमानत देने के लिये सब तैयार हो गये।

कुछ ने तो खुदाबख्श और दीवान रघुनाथसिंह से यहां तक कहा, 'अर्जी देने की क्या अटक पड़ी थी ? इतना रुपया तो हमी लोग नजर कर सकते हैं।'

परन्तु रानी को अपने रुपये के लिये हठ था। उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। चार भले आदमी जमानत के लिये आ गये।

नियुक्त समय पर समारोह हुआ। दूर-दूर के लोग इकट्ठे हुये। झाँसी की जनता की ही बहुत बड़ी संख्या थी। नवाब अलीबहादुर भी शरीक हुये।

शुभ मुहूर्त में दामोदरराव का जनेऊ हो गया। लोगों ने खुशी-खुशी नजर भेंट की। काफी रुपया जमा हुआ।

दावत-पङ्गत हुई। गायन-वादन। इसके बाद चुने हुये लोगों की बैठक रानी लक्ष्मीबाई सफेद साड़ी पहिने एक जरा ऊँचे आसन पर बैठीं आस-पास उनकी खास सहेलियां। जरा फासले पर नाना साहब और उनके भाई, तात्या टोपे, जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह, खुदाबख्श इत्यादि।

रानी ने कहा, 'जिस सफलता के साथ लोगों के सहयोग से यह छोटा सा यज्ञ हुआ, उसी सफलता के साथ उस बड़े यज्ञ की पूर्ति होनी चाहिये।'

नाना बोला, 'अच्छे कारीगरों और बढ़िया सामान का प्रबन्ध हो गया। यज्ञ की सामग्री ढोने वाले पशुओं और अश्वमेघ के घोड़ों का भी इन्तजाम कर लिया गया है।

तात्या—'मैं ज़रा सीधी भाषा में बात करना चाहता हूं।'

रानी—'कर सकते हो, सब अपने ही अपने हैं। बाहर स्त्रियों का कठोर पहरा है। काम की बात करके अधिवेशन को समाप्त कर दिया जावेगा।'

तात्या—'उत्तरी और पूर्वी हिन्दुस्थान में अथक काम हो रहा है। अङ्गरेज़ों ने जिन कारतूसों को आरम्भ में जारी किया था, प्रतिवाद को देखकर लगभग बन्द कर दिया। परन्तु उनके कारण जो घृणा उत्पन्न हुई थी, वह बिलकुल कम नहीं हुई है। अब अँग्रेज़ हिन्दू सिपाहियों को तिलक टीका लगाये हुये परेड में नहीं आने देते, इस कारण हिन्दू सिपाहियों में घोर खिन्नता फैल गई है।'

खुदाबख्श—'यहां की फ़ौज के मुसलमान सिपाहियों में भी बहुत जोश है। उनके दीन को बरबाद करने का जो काम चर्बी वाले क़ारतूसों ने जारी किया था, वह ऐसा नहीं है कि क़तई तौर पर बन्द हो गया हो।'

रघुनाथसिंह—'हम लोग बुन्देलखण्ड से आरम्भ करने को तैयार हैं।'

रानी—'अभी नहीं। ओरछा, अजयगढ़ और छत्रपुर के राजा बालक हैं। इन राज्यों के प्रबन्ध पर अङ्गरेजों की छाप है। इसके सिवाय क्रांति का लग्गा लगवाते ही डाकू और बटमार बढ़ जावेंगे। हमारी जनता ही इन उपद्रवों से पीड़ित होगी। जब तक हमारे पास मज़बूत सेना नहीं हो गई है तब तक हम लोगों को प्रारम्भ नहीं करना चाहिये। अङ्गरेज़ों को परास्त करने के साथ-साथ इन जन पीड़कों का भी तो दमन करना पड़ेगा, अन्यथा जनता का क्षोभ अङ्गरेजों के सिर से टलकर हम लोगों के सिर आवेगा। हिन्दुस्थानी सैनिकों को अपनाने का क्रम जारी रखना चाहिये। जब मन भर जावे, तब हां कही जावेगी।

रानी की इस सम्मति से लोग सहमत हुये।'

इसके उपरान्त तात्या मोतीबाई, जूही से मिला। जूही यौवन के वसन्त में थी। बड़ी-बड़ी आँखों में चमक। नीचे देखने के समय लम्बी बरौनियाँ लाज के पांवड़े से उनके काली।

जूही केशों में फूल बांधे हुये थे। एक फूल नीचे गिर पड़ा। तात्या ने उठाकर उसके बालों में खोंस दिया।

जूही ने मुस्कराकर कहा, 'जाने दीजिये।'

तात्या हँसकर बोला, 'वह तो खोंस ही दिया जूही। मानता हूँ कि एक दिन आवे जब देश की मुक्ति और तुम्हारे फूलों की महक का सम्मेलन हो।'

जूही बोली, 'यदि इस काम के करने में मैं या मेरी तरह की और स्त्रियाँ मर जायें तो इस टूटे हुये फूल की महक और देश की मुक्ति के सम्मेलन की बात को भूल न जाइयेगा।'

तात्या हँसता चला गया।

[२२]

जूही का छावनी में आना-जाना बढ़ गया। उसके नृत्य-गान की कला में और भी मोहकता आ गई। परन्तु किसी सिपाही या अफसर में उसने अपने को बाल बराबर भी नहीं खोया। वे समझते थे कि जूही हृदय-हीन है।

बतलाये हुये काम के लिये जूही को हर पल्टन में उपयुक्त अफसर ढूंढ़ने में बहुत दिन नहीं लगे। उन अफसरों को यह भी मालूम हो गया कि हम लोगों को किसी दिन एक महान कार्य करना है परन्तु उनको ठीक-ठीक यह मालूम नहीं हुआ था कि कब। जूही स्वयं नहीं जानती थी कुछ और लोग जो पल्टनों के लिये इसी कर्तव्य पर नियुक्त थे उनको भी मालूम न था परन्तु वे जानते थे कि जूही का काम, उसी योजना का एक अङ्ग है, जिसका एक भाग उन लोगों का भी काम था। पर वे एक दूसरे से मिलते न थे। निषेध था।

एक दिन जूही के नृत्य-गान का आनन्द लेने के लिये कप्तान डनलप भी आ गया। एक क्षण के लिये जूही सकपकाई। परन्तु उसने अपना नियन्त्रण शीघ्र कर लिया और वह बहुत मजे में नृत्य-गान करती रही।

असल में डनलप को उसके जासूस ने खबर दी कि छावनी में नर्तकियाँ आती हैं और अफसरों से दीन-धर्म सम्बन्धी कुछ बातें भी किया करती हैं। इसलिये वह सहसा वहां आ गया था।

नृत्य-गान से उसका मन शीघ्र ऊब गया, क्योंकि अधिकाँश अङ्गरेजों की तरह उसको भारतीय कलाओं से उपेक्षा थी। परन्तु जूही बहुत सुन्दर थी। उसको सहज ही विश्वास न होता था कि ऐसा सौन्दर्य अपने परिधान में किसी छल-कपट को छिपाये होगा। तो भी उसने सवाल किये—

डनलप—'तुम छावनी में से कितना पैसा कमा ले जाती हो?'

जूही—'जब जो मिल जाय, हुजूर।'

डनलप—'नाचने गाने के सिवाय और कोई पेशा करती हो?'

जुही—'नहीं तो। अविवाहित हूँ। कुमारी।'

डनलप—'तुम लोगों में विवाह भी होते हैं?'

जूही—'जरूर। हम लोग तो केवल नाचने-गाने का ही पेशा करती हैं।'

डनलप—'तुम रानी साहब के यहां नाचने-गाने जाती हो? मैंने सुना है, उनको गाना सुनने और नाच देखने का शौक है।'

जूही—'मैं वहां नहीं जाती। कभी नहीं गई। उनको भगवान के भजन सुनने का शौक है। नृत्य का कोई शौक नहीं।'

डनलप—'रानी साहब गाती हैं?'

जूही—'बिलकुल नहीं। मुझको क्या मालूम।'

डनलप—'रानी साहब ने तुमको घोड़े की सवारी नहीं सिखलाई?'

जूही—'मैं उनके पास कभी जाती ही नहीं। घोड़े की सवारी क्यों सिखलातीं?'

डनलप—'और औरतों को तो सिखलाती हैं?'

जूही—'सुना है।'

डनलप—'मोती नाम की वेश्या को जानती हो?'

जूही—'वह वेश्या नहीं है आपसे किसने कहा?'

डनलप—'मुझसे सवाल करती है! जानती है कि धक्के देकर निकलवा दूंगा।'

जूही—'मैंने आपका क्या बिगाड़ा है?'

डनलप—'अच्छा हटो। आगे कभी छावनी में मत आना।'

जूही ने मुँह उदास बना लिया और वह चली गई। परन्तु डनलप के ओट होते ही उसके होठों पर, मुस्कराहट की छटा छा गई। उसको याद आ गया—'एक दिन आवेगा जब फूलों की महक और देश की मुक्ति का सम्मेलन होगा।'

नर्तकी चली गई परन्तु उसका सौन्दर्य डनलप के भीतर एक कोने में हलकी छाप, एक टीस छोड़ गया। उस टीस ने सिपाहियों के प्रति क्षोभ का रूप पकड़ा।

डनलप बोला, 'तुम लोग इन टके वाली औरतों के मोह में अपना पैसा नष्ट करते हो। इन औरतों का झूठा जादू ही तुमको ईसाई होने से रोक रहा है। इन शैतानों को छोड़कर सच्चे धर्म पर ईमान लाओ, तो मुक्ति भी मिलेगी और पैसा अलग।'

पैसा और मुक्ति का घनिष्ट सम्बन्ध सिपाही लोग बहुत दिनों से सुन रहे थे। पहले तो इस सम्बन्ध की बात पर उनको हँसी आया करती थी, अब वे खीजने लगे, जलने लगे। परन्तु सिपाहियों ने चुपचाप सुन लिया।

डनलप के जाते ही सारा सिपाही समाज व्यङ्ग और क्षोभ में प्रमत्त हो गया। सुरीली और रूपवाली नर्तकी के अपमान का उनको रंज था। अपने धर्म की अवहेलना पर उनको क्रोध था और अङ्गरेज के मुंह से रानी का नाम तक लेने पर, उनको क्षोभ था।

'उस बेचारी को धक्के देकर निकालने की धमकी दी! बड़ा हुआ है।'

'अरे पाजी है। कहता है, धर्म-ईमान छोड़ दो।'

'मेरी तबियत में तो आ गया था कि पौदों पर दुलत्ती कस दूं।

'जरा ठहरो। समय आ रहा है। फिलहाल मनाई है। सहते जाओ थोड़ी सी कसर रह गई है। हमारे मुखिया लोग इलाज सोच रहे हैं।'

'महीना, तारीख, वक्त कुछ मुकर्रर हुआ?'

'चुप, चुप, अभी नहीं। ठहरे रहने का हुक्म है। इन्तजार करने का।'

[२३]

वसन्त-पञ्चमी हो चुकी थी। फरवरी का महीना था। चाँदनी डूब चुकी थी। रात बिलकुल अन्धेरी। हवा ठण्डी मन्द-मन्द। तारे दमक रहे थे। कुछ बड़े-बड़े, असंख्य छोटे-छोटे जैसे चाँदनी अपनी चादर छितरा कर छोड़ गई हो। नीचे सघन अन्धकार। सब दिशाओं में गुलाई सी बांधे हुये। झींगुर झङ्कार रहे थे।

रानी को नींद नहीं आ रही थी। कठिन व्यायाम से तप्त देह को ठण्ड भली लग रही थी। खिड़की खुली हुई थी। उसमें से कई बड़े-बड़े तारे दिखलाई पड़ रहे थे। झींगुर की झनकार के ऊपर दूर से आने वाला किसानों और चरवाहों के फाग–गीत का स्वर सुनाई पड़ जाता था।

रानी बिस्तरों में बैठ गईं। निबिड़ अन्धकार में भी महल के सामने वाला ऊंचा पुस्तक–भवन अपनी थोड़ी सी रूप-रेखा प्रकट कर रहा था।

'क्या वेद-शास्त्र, गीता, पुराण, दर्शन, काव्य ये सब व्यर्थ हो जायेंगे?'

रानी ने होठ से होठ दबाया।

'कदापि नहीं। कभी नहीं। मैं लड़ूंगी। उन गरीबों के गीत की रक्षा के लिये। ऋषियों का रक्त ऐसा हीन और क्षीण नहीं हो गया है कि उनकी सन्तान तपस्या न कर सके। कीड़ों-मकोड़ों की तरह यों ही विलीन हो जाय।'

'नहीं, कृष्ण अमर हैं। गीता अक्षय है। हम लोग अमिट हैं। भगवान की दया से, शङ्कर के प्रताप से मैं बतलाऊँगी कि अभी भारत में कितनी लौ शेष है। और यदि मैं इस प्रयत्न में मारी गई तो क्या होगा? कोई दूसरा तपस्वी मुझसे अच्छा खड़ा हो जावेगा और इस भूमि का उद्धार करेगा। तपस्या का क्रम कभी खण्डित नहीं होगा।'

रानी फिर लेट गईं। निद्रा लाने की चेष्टा करने लगीं। इतने में पहरे वाली स्त्री-सैनिक ने द्वार के पास आकर खाँसा। रानी ने गनसुनी कर दी। वह फिर खांसी। रानी बैठ गईं।

पूछा, 'क्या है?'

पहरे वाली भीतर आई।

उसने कहा, 'श्रीमन्त सरकार, मोतीबाई दर्शन के लिये आई है। मैंने मना किया। नहीं मानी। हठ कर रही है। कहती है आधी घड़ी का तुरन्त समय दिया जाय। जैसी आज्ञा हो।'

रानी ने मोतीबाई को बुला लिया। पास काठ की एक चौकी पड़ी थी। मोतीबाई से उस पर बैठने को कहा। वह नहीं बैठी।

'बोली, 'सरकार इस चिट्ठी को पढ़ लें।'

मोतीबाई दीपक उठा लाई। चिट्ठी पर किसी के हस्ताक्षर नहीं थे। उसमें लिखा था—

'अब और नहीं सहा जाता। कब तक कलेजे में छुरी चुभोये रहें। उठो और धर्म के लिये कट मरो। थोड़े से विदेशियों ने इस विशाल देश को घेर रक्खा है। निकाल दो। देश को स्वतन्त्र करो। धर्म की रक्षा करो।'

रानी—'यह चिट्ठी कहाँ मिली?'

मोतीबाई—'इस प्रकार की कई चिट्ठियां छावनी में आई हैं। मुझको भरोसे के लोगों ने आज दिन में बतलाया था। इस चिट्ठी को सरदार तात्या साहब ने दिया है।

रानी—'तात्या टोपे! कहां हैं? झांसी कब आये?'

मोतीबाई—'सन्ध्या के समय आये और प्रातःकाल के पहले चले जायेंगे। इसी समय दर्शन करना चाहते हैं। बाहर खड़े हैं।'

रानी—'बाहरी कमरे में बिठलाओ। मैं आती हूँ।'

रानी ने सफेद साड़ी पर एक मोटा सफेद दुशाला ओढ़ा और वह बाहरी कमरे में तात्या के पास पहुँचीं। मोतीबाई को रानी ने उसी कमरे में बिठला लिया।

रानी ने पूछा—'इस चिट्ठी का क्या प्रयोजन ? मुझको तो असमय जान पड़ती है।'

'हां बाईसाहब', तात्या ने उत्तर दिया, 'इसीलिये ले आया हूं। मोतीबाई ने बतलाया कि इस प्रकार की चिट्ठियां यहां की छावनी में भी आई हैं। सिपाहियों में बेहद जोश फैला हुआ है, परन्तु न तो अभी कोई व्यवस्था हो पाई है और न काफी सङ्गठन हुआ है। समय के पहले यदि विस्फोट हो गया तो अनेक सिपाही व्यर्थ मारे जावेंगे। असफलता और निराशा देश को दबा लेगी और न जाने कितने समय के लिये यह देश विपदग्रस्त हो जावेगा।'

रानी—'इसको रोकना चाहिये और सङ्गठन शीघ्र कर लिया जाना चाहिये।'

तात्या—'रुपये पैसे की कोई असुविधा नहीं रही। काफी समय तक लड़ाई चलाते रहने के लिये धन इकट्ठा हो गया है। बारूद का और शस्त्रों का अच्छा प्रबन्ध है। इसलिये जल्दी से जल्दी की जो तारीख हो सकती थी नियुक्त कर ली गई है। दिल्ली, लखनऊ इत्यादि वाले सहमत हैं। आपकी सहमति लेकर सवेरे के पहले रवाना हो जाऊँगा।'

'कौन-सी तारीख ?' रानी ने प्रसन्न होकर पूछा।

'इकतीस मई रविवार, ११ बजे दिन', तात्या ने बतलाया।

रानी—'तीन-चार महीने हैं। मुझको यह तारीख पसन्द है। देश भर में सब जगह एक साथ ?'

तात्या—'सब जगह एक साथ। तब तक हम लोग मनाते हैं कि सिपाही और जनता, आत्म-नियन्त्रण से काम लें।'

[२४]

गरमी आ गई। सरोवरों में कमल खिल उठे। फसल भी कटकर घरों में आने लगी। स्वाधीनता-युद्ध के दो चिन्ह प्रकट हुये। एक कमल, दूसरा रोटी।

असंख्य कमल के फूल भारतवर्ष भर की छावनियों में फैल गये।

कमल फूलों का राजा है। सरस्वती की महानता, लक्ष्मी की विशालता उसके पराग और केसर में कहीं अदृष्ट रूप से निहित है। वह हिन्दुस्थान की प्रकृति का, संस्कृति के, मृदुल, मंजुल, मांगलिक और पावन प्रतीक है। उसका रङ्ग हलका लाल है। वह बिलकुल रक्त नहीं है। हिन्दुस्थान में होने वाली क्रांति खूनी जरूर थी, परन्तु उस पर खूनी क्रांति के गर्भ में मन्जुलता और पावनता गढ़ी हुई थी। इसलिये सन् ५७ की क्रांति का यह प्रतिविम्ब चुना गया। क्रांति करेंगे—मानवीयता की रक्षा के लिये, क्रांति होगी—मानवीयता लिये हुये।

कमल के साथ रोटी भी चलती! एक गांव से दूसरे गांव एक रोटी भेजी जाती थी! दूसरे गाँव में फिर ताजी रोटी बनी और तीसरे गांव भेज दी गई। हिन्दुस्थान की वह क्रांति हिन्दुस्थानियों की रोटी की रक्षा के लिये हुई थी। रोटी उस रक्षा के प्रयत्न का प्रतीक थी।

जिसने सोचा उसने कल्पना का कमाल कर दिया! यह हिन्दुओं और मुसलमानों, दोनों की थी।

कमल और रोटी का दौरा समाप्त नहीं हुआ था कि छः मई को मेरठ में विस्फोट हो गया। बारकपूर में इसके पहले ही एक उपद्रव हो चुका था।

मेरठ और दिल्ली की सम्मिलित हिन्दुस्थानी फौज ने दिल्ली के लाल किले पर अधिकार कर लिया। बादशाह बहादुरशाह को भारत

का सम्राट घोषित किया और २१ तोपों की सलामी दी। बादशाह ने क्रान्ति का नेतृत्व स्वीकार किया और उसने सबसे पहला जो काम किया, वह था गौ-वध का कतई बन्द कर देना।

मई के महीने में लगभग सारे उत्तर हिन्द में क्रान्ति की आग भड़क उठी—किसी दिन कहीं और किसी दिन कहीं।

[२५]

स्कीन, गार्डन, डनलप इत्यादि को झांसी में मई की खबरें मिल गईं और रानी को उनसे पहले ही ! रानी ने एक विशेष समय तक के लिये, लगभग सब आने-जाने वालों का महल आना बन्द कर दिया। जो थोड़े से लोग आते-जाते थे, उनमें एक मोतीबाई थी। उसी के द्वारा रानी सब महत्वपूर्ण समाचार लेती और देती थीं। मोतीबाई, खुदाबख्श और रघुनाथसिंह के सम्पर्क में थी। वह इन लोगों को सब बातें भुगता देती थी—स्वाभाविक था।

रानी की दृढ़ सावधानी के कारण, झांसी में असमय विस्फोट नहीं हो पाया।

चौथी जून को कानपूर में और उसी दिन झांसी में क्रांति के लक्षण प्रकट हुये। एक हवलदार कुछ सैनिकों को लेकर कम्पनी निर्मित छोटे से क़िले में, जो पुराने क़िले से एक मील शहर बाहर है और जिसे अङ्गरेज लोग उसकी बनावट के कारण 'स्टार फोर्ट' (तारा-गढ़) कहते थे, कुछ सिपाही घुस पड़े और लड़ाई का सब सामान और रुपया-पैसा उठवा कर ले आये। डनलप कुछ सेना लेकर मुकाबिले के लिये आया।

स्टार फोर्ट में कोई भी सामान न पाकर वह लौट गया। क़मिश्नर को सूचना मिली। उसकी सलाह पर छावनी के सब अंग्रेज़ अपने बाल-बच्चे लेकर क़िले में जाने को तैयार हुये।

अब इन लोगों को रानी की, रानी के शौर्य की, उनकी योग्यता की और उनकी तेजस्विता की याद आई।

गार्डन कई अँग्रेजों को लेकर रानी के महल पर पहुँचा।

गार्डन ने कहलवाया, 'अभी हमको भरोसा है कि फौज में जो थोड़ी सी गड़बड़ हुई है उसको दवा लेंगे परन्तु यदि कोई बड़ी विपद् आवे तो आप हमारी सहायता करियेगा।'

रानी ने उत्तर दिलवाया, 'इस समय हमारे पास न तो काफी शस्त्र हैं और न लड़ने वाले आदमी। देश में उपद्रव फैल रहा है। यदि आप सहमत हों तो मैं अपनी और जनता की रक्षा के लिये एक अच्छी सेना भरती कर लूँ।'

डनलप सहमत होकर चला आया।

दूसरे दिन छावनी में स्कीन, गार्डन और डनलप की बैठक हुई। उन लोगों को अब भी विश्वास था कि हिन्दुस्थानी का व्यक्तिगत रूप से अपमान करना किसी भी नुकसान का कारण नहीं बनता। वे समझते थे कि सारी फौज में कुछ व्यक्ति नाराज हो सकते हैं, सब नहीं।

इसी भरोसे डनलप एक और अंग्रेज को साथ लेकर पल्टन में पहुंचा। सिपाहियों ने, जिनमें रिसालदार कालेखाँ सबसे आगे था तुरन्त गोली से मार दिया।

अङ्गरेजों में भगदड़ मच गई।

गार्डन अकेला रानी के पास दौड़ा गया। मुन्दर के द्वारा बातचीत हुई।

गार्डन—'हम लोग पुरुष हैं। हमको अपनी चिन्ता नहीं। हमारी स्त्रियों और बच्चों को अपने महल में आश्रय दे दीजिये।'

मुन्दर ने रानी को आगा-पीछा सुझाया, 'सरकार, इस आफत से दूर रहिये। फौज के लोग हमारे महल पर टूट पड़ेंगे।'

रानी ने धीमे परन्तु दृढ़ स्वर में मुन्दर से कहा, 'हमारी लड़ाई अंग्रेज पुरुषों से है, उनके बाल-बच्चों से नहीं। यदि मैंने सिपाहियों का नियन्त्रण न कर पाया तो उनका नेतृत्व क्या करूँगी? कह दो गार्डन से कि स्त्रियों और बालकों को तुरन्त महल में भेज दो।'

मुन्दर ने सम्वाद दे दिया।

गार्डन तुरन्त स्त्रियों और बच्चों को छावनी से निकाल कर शहर ले आया और उनको महल में दाखिल कर दिया। रानी ने उनको भोजन करवाया और ढाढस दिया।

परन्तु स्कीन ने हठ किया, इसलिये ये सब महल से हटा लिये गये और क़िले में भेज दिये गये।

इस बीच में सिपाही छावनी के तहस-नहस में उलझे थे। फ़ारिग़ होकर वे क़िले पर धावा करने के लिये बढ़े। गार्डन इत्यादि ने सब फाटक बन्द कर लिये, लेकिन सिपाही बहुत थे। उनके पास तोपखाना था और क़िले में तोप न थी—युद्ध-सामग्री भी थोड़ी, खाने के लिये क़रीब-क़रीब कुछ नहीं।

नवाब अलीबहादुर ने उसी समय पीरअली को भेजा और कहलवाया कि हुक्म हो तो ओर्छा और दतिया से सेना बुला ली जावे।

अङ्गरेज़ इतने भयभीत हो गये थे या इतनी हेकड़ी में थे कि उन्होंने जवाब दिया, 'कोई ज़रूरत नहीं है। छोटा सा बलवा है दबा लेंगे।'

पीरअली ने नवाब साहब को वह उत्तर भुगता दिया। खुदाबख़्श मिल गया। उसको भी सुनाया। खुदाबख़्श ने मोतीबाई को रानी के पास भेजा और स्वयं रघुनाथसिंह के पास चला गया।

मोतीबाई ने कहा, 'सरकार, अब समय आ गया है।' और खुदाबख़्श की कही बात सुनाई।

रानी बोलीं, 'नियुक्त तारीख़ पर आरम्भ न होने के कारण कार्यक्रम का रूप बदल गया है। तो भी, अपनी सेना तुरन्त तैयार करने का प्रयत्न इसी समय किया जाना चाहिये। रघुनाथसिंह को समाचार दो कि कटीली से दीवान जवाहरसिंह को बुला लें और जितनी विश्वसनीय सेना इकट्ठी हो सके आठ मील पर, रकसा के निकट, जमा करें। घुड़सवार अधिक हों। जब तक मेरी आज्ञा न मिले, झांसी की ओर न आवें।

मोतीबाई ने दीवान रघुनाथसिंह को आज्ञा सुना दी। वह खुदाबख्श को लेकर चला गया।

उस दिन सिपाही किले पर बराबर आक्रमण करते रहे। परन्तु उनको गोलियों की बौछार से पीछे हटाते रहे।

दूसरे दिन भी लड़ाई चलती रही। दोपहर के उपरान्त अङ्गरेज़ों के पास खाने के लिये एक दाना भी न रहा। किले वाला महल दुबारा-तिबारा छाना कि कहीं कुछ रक्खा हो। वहाँ कुछ भी न मिला। शाम के बाद लड़ाई कुछ ढीली हुई अङ्गरेज़ों ने किसी प्रकार रानी के पास अपनी भूख का समाचार भेजा।

रानी ने दो मन रोटियां तत्काल बनवाईं। काशीबाई से कहा, 'तू इन रोटियों को किसी प्रकार अङ्गरेज़ों के पास पहुंचा दे। मुझको सारे गुप्त मार्ग मालूम हैं, सुन्दर और मुन्दर को साथ लेजा और कोई न जावे। जहाँ मशाल की अटक पड़े जला लेना।'

सहेलियां रानी की दया को जानती थीं परन्तु उसकी सीमा को नहीं देखा था।

काशी ने विनम्र शान्त स्वर में कहा, 'सरकार, यदि हम लोग इस परिस्थिति में पड़े होते तो क्या अङ्गरेज़ लोग हमको दाना-पानी देते?'

रानी ने उत्तर दिया, 'अङ्गरेज़ों जैसे बनकर हम अपने और उनके बीच के अन्तर को क्यों मिटायें? और फिर इन लोगों को भूखों मार कर आगे बढ़ना अनुष्ठान को कलुषित करना है।'

रानी मुस्कराईं। काशी का हृदय आभास-मय हो गया।

परन्तु फिर भी उसने सवाल किया, 'कब तक आप इनको इस प्रकार खिलायेंगीं?'

'जब तक मेरी निज की सेना तैयार नहीं हो गई', रानी ने कहा, 'जब सेना तैयार हो जावेगी, मैं उन लोगों के हथियार रखवा लूंगी और कहीं सुरक्षित स्थान में कैद कर दूंगी।'

उन तीनों सहेलियों ने रोटियों के गट्ठर पीठ पर लादे और गुप्त मार्ग में होकर किले में ले गईं। गार्डन इत्यादि ने उन लोगों को प्रणाम किया। उनमें एक व्यक्ति मार्टिन नाम का था। मार्टिन ने सुरङ्ग का रास्ता देख लिया। दूसरे दिन फिर ये तीनों क़िले में दो मन रोटियां दे आईं। मार्टिन चुपचाप पीछे-पीछे आया और गुप्त मार्ग से बाहर निकल कर आगरा चला गया। सहेलियों को या किसी को भी नहीं मालूम पड़ा।

उस दिन घोर युद्ध हुआ। गार्डन उत्तरी फाटक के ऊपर की खिड़की में से ताक-ताक कर बन्दूक का निशाना लगा रहा था और सिपाही उसके मारे हैरान हो रहे थे। उनको शहर का एक पुराना तीरन्दाज मिल गया। उस तीरन्दाज ने एक पत्थर की ओट लेकर गार्डन पर तीर छोड़ा। तीर गार्डन की गर्दन को फोड़ कर पार हो गया। गार्डन के मरते ही, समस्त अङ्गरेजों में उदासी और निराशा छा गई।

उधर रिसालदार कालेखां ने किले के उत्तर–पश्चिम कोने पर जिसे शङ्कर-किला कहते हैं, भयानक दाब बोली और अपनी सेना की एक टुकड़ी सहित किले में घुस गया। अङ्गरेजों ने देखा कि अब कोई बचत नहीं, इसलिये उन्होंने सुलह की चर्चा छेड़ी। सिपाहियों में रक्षा का आश्वासन दिया। स्कीन ने ८ जून के सवेरे किले का सदर फाटक, जो दक्षिण की ओर है, खोला और कहा कि हमको सागर चले जाने दो।

सिपाहियों ने उन लोगों को कैद कर लिया। सिपाहियों का मुखिया रिसालदार कालेखां छावनी चला गया।

थोड़ी देर में वहां जेल–दरोगा बख्शिशअली आया। उसकी आंखें लाल थीं और मुंह झुलसा हुआ। उसने अँग्रेजों की ओर देखा।

सिपाहियों से बोला, 'रिसाशदार साहब रास्ते में मुझे मिले थे। हुकुम दे गये हैं कि इन सबको भोखनबाग ले चलो।'

सिपाही अंग्रेजों को झोखनबाग ले आये। वहां एक सिपाही घोड़े पर सवार आया। बख्शिशअली ने उसके कान में कुछ कहा। सवार हिचका।

बख्शिशअली बोला, 'भाइयो, यह जो स्क्रीन कमिश्नर खड़ा है, इसने मुझको जूतों की ठोलों से पीटा था, अब क्या देखते हो ?'

सिपाही एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

बख्शिशअली—'और इसने जूतों की ठोल से मुझको इतना मारा था कि मैं गिर पड़ा था।'

स्कीन भयभीत खड़ा था। परन्तु इस आरोप ने उसको जगा दिया। बोला, 'मैंने गाली कभी नहीं दी। मारा शायद हो, मगर याद नहीं आता। काम में गफलत करने पर कभी-कभी मारना भी पड़ता है।'

वह जो सवार आया था, उसकी ओर बख्शिशअली ने भयानक दृष्टि से देखा।

सवार ने कड़कड़ाती हुई आवाज में कहा, 'रिसालदार साहब ने इस सबके कतल का फरमान किया है।'

बख्शिशअली ने सबसे पहले स्कीन को मारा और फिर सब काट दिये गये। उस समय वहां सिवाय उन सिपाहियों के और कोई न था। कुछ क्षण उपरान्त कालेखां आया।

रिसालदार थोड़ी देर चुप रहा। सूर्य की किरणों में जलन बढ़ती चली जा रही थी। रिसालदार ने मुँह पर हाथ फेरा। माथा दबाया। थोड़ी देर खामोश रहा।

'बोला, 'जो हुआ सो हुआ। आगे बिना हुकुम के कोई काम न करना। रानी साहब के महल पर चलो।'

वैसी ही तलवारें लिये सिपाही महल की ओर चल पड़े।

सिपाहियों में अनुशासन न था। घिन और गुस्सा मन को घेरे थे। अपनी विजय पर उनको पागलों जैसा हर्ष था।

रानी के महल पर वे पीछे पहुंचे, उनका शोरगुल पहले पहुंच गया। पहरेदार ने फाटक बन्द कर लिये। सेना के कुछ सिपाही शहर को लूटने की बातचीत करने लगे। कवायद परेड सीखे हुये वे सिपाही अच्छे नेता की कमी के कारण महज हुल्लड़ और भब्भड़ की भूमिका भरने लगे। कोई किसी की नहीं सुन रहा था। हर एक आदमी अपना-अपना गुबार निकालने की धुन में था।

इतने में कालेखां चिल्लाया, 'खलक खुदा का, मुलक बादशाह का, राज महारानी लक्ष्मीबाई का।'

सब सिपाहियों ने यही नारा लगाया। सिपाहियों की विचारधारा इसी नारे की ओर मुड़ गई—उस नारे ने अनुशासन की कमी को कुछ पूरा किया। खिड़की की झरप हटी। हाथ जोड़े हुये लक्ष्मीबाई दिखलाई दीं। पीछे सशस्त्र सहेलियां।

बिलकुल गौर-वदन। गले में हीरों का कण्ठा। होठ एक दूसरे से सटे हुये। सिपाहियों ने फिर नारा लगाया।

रानी ने नमस्कार किया। हाथ उठाकर चुप रहने का संकेत किया। भीड़ में सन्नाटा छा गया। रिसालदार आगे बढ़ा।

रानी ने तीव्र स्वर में पूछा, 'क्या है? तुम रिसालदार कालेखां हो?' स्वर में तीव्रता होते हुये कंठ का प्राकृतिक सुरीलापन था।

कालेखाँ ने सैनिक प्रणाम किया। बोला, 'हुजूर का ताबेदार कालेखां रिसालदार, मैं ही हूं।'

रानी की अनिमेष दृष्टि से कालेखां ने आँख मिलाई। कालेखां की आंख झँप गई। नीची हो गई। रानी ने कहा, 'इन तलवारों में रक्त कैसे लगा?'

कालेखां ने बतलाया।

रानी बोलीं, 'इन्हीं कर्मों से स्वराज्य और बादशाही स्थापित करोगे? तुम लोगों ने घोर दुष्कर्म किया है। क्या तुम यह समझते हो कि संसार में सब नियम-संयम उठ गये?'

कालेखाँ—'हुजूर........'

रानी—'और अभी तुम लोगों में से कुछ झाँसी नगर को लूटने की भी चर्चा कर रहे थे। तुम अपने को इतना भूल गये! क्या तुम लोगों को यही सिखलाया गया है?'

कालेखां—'हुजूर के हुकुम के खिलाफ़ अगर अब कुछ हो तो हम सबको तोप से उड़ा दिया जाय। जो आज्ञा हो उसका हम लोग पालन करेंगे।'

रानी—'तो मैं यह कहती हूँ कि छावनी को लौट जाओ। सोच-विचार कर सन्ध्या तक आज्ञा दूँगी कि आगे तुम्हें क्या करना है?'

कालेखाँ सिपाहियों से बातचीत करने लगा।

कुछ ने कहा, 'छावनी चलो।'

कुछ बोले, 'दिल्ली चलो। वहां मज़ा रहेगा।'

कुछ ने सलाह दी, 'कुछ रुपया तो पहले गांठ में कर लो।'

अन्त में सिपाहियों ने निश्चय किया, 'रानी साहब से रुपया लो और दिल्ली चल दो। रानी साहब रुपया न दें तो जितना शहर से वसूल करते बने वसूल करके, झाँसी को रानी के हवाले करो और आगे बढ़ो।'

कालेखाँ ने सिपाहियों का निर्णय रानी को सुना दिया। कहा, 'सरकार, सिपाही भूखे हैं।'

रानी परिस्थिति को समझ गईं। उन्होंने दूरदर्शिता से काम लिया।

बोलीं, 'अङ्गरेज़ों ने मेरे पास रुपया नहीं छोड़ा। राज्य अङ्गरेज़ों के आधीन रहा है। मैं कहाँ से रुपया लाऊँ?'

कालेखाँ ने कहा, 'हम लोग मजबूर हैं। आप मालिक हैं। आपसे कुछ नहीं कह सकते। यदि यहां से रुपया नहीं मिलता है तो हम लोग शहर से लायेंगे।'

रानी समझ गईं कि शहर लुटने वाला है। उन्होंने गले से हीरों का कण्ठा उतारा और कालेखाँ की अञ्जलि में डाल दिया।

बोलीं, 'इससे तुम्हारी सारी अटकें पूरी हो जायेंगीं। मनुष्यों की तरह यहां से जाओ। कहीं लूटमार बिलकुल न करना; अदब के साथ दिल्ली पहुँचो। हिन्दुओं को गङ्गा की और मुसलमानों को कुरान की सौगन्ध है।'

कुछ सिपाहियों ने रानी की नौकरी करनी चाही; परन्तु बहुमत दिल्ली जाने के पक्ष में था। इसलिये लगभग सब दिल्ली चले गये—केवल थोड़े से रह गये। उनमें से एक लालता तोपची था।

सिपाहियों के चले जाने पर रानी ने रकसा से दीवान जवाहरसिंह इत्यादि को तुरन्त ससैन्य बुलाया। सिपाही फौजी सामान तोपें इत्यादि अपने साथ दिल्ली ले गये।

[२६]

रात में दीवान जवाहरसिंह ससैन्य आ गया। रानी ने आदेश भेजा कि नगर और किले का प्रबन्ध करो और कल दिन में मिलो।

दूसरे दिन महल में बहुत लोग उपस्थित हुये—सेना और शासन से सम्बन्ध रखने वाले सरदार, कर्मचारी, जागीरदार, जनता के साहूकार, मुखिया और पञ्च।

रानी पर्दे के पीछे बैठीं।

रानी ने कहा, 'कल कठिनाई के साथ मैंने नगर को लुटने से बचा पाया। विद्रोही तो यहां से चले गये परन्तु अव्यवस्था छोड़ गये हैं। डकैती और लूटमार बढ़ने का बहुत भय है। मैं चाहती हूं जनता त्रस्त न होने पावे। इसीलिये मैंने झांसी राज्य के पुराने जागीरदारों और सरदारों को कुछ सेना लेकर बुलवाया है, जिसमें अव्यवस्था न रहने पावे। आप लोगों को और जनता के मुखिया पंचों को सम्मति के लिये बुलवाया है। बतलाइये अब क्या करना चाहिये?'

गार्डन के सरिश्तेदार ने सलाह दी, 'बलवे की सूचना जबलपुर के कमिश्नर को देकर अंग्रेजों की ओर से रानी साहब शासन सम्भालें।

काछियों के मुखिया ने कहा, 'हमें नईं चाउनें काऊ और को राज झाँसी में। करैं राज तो हमाई बाई साब, न करैं तो हमाई बाई साब।'

तेलियों के पञ्च ने मत प्रकट किया, 'हमें तो अपनौं पुरानौं राज लौटाउनैं, चाये पृथी इतै की उतै हो जाय।'

प्रमुख साहूकार बोला, 'बाट जोहते-जोहते आंखें पथरा गईं। आज कितनी मानताओं के बाद यह दिन देखने को मिला! हम लोग तो अपना राज्य चाहते हैं।'

चमारों के मुखिया ने कहा, 'राज बाईसाब कौ और फिर बाईसाब कौ और हम सब बाईसाब के।'

मरोपन्त ने जन–मत का समर्थन किया। एक लक्ष्मणराव पांडे नामक, चतुर काँइयां भी उस सभा में था।

वृद्ध नाना भोपटकर ने, जो अब भी काफी स्वस्थ था, कहा, 'हम लोग सरिश्तेदार साहब की सलाह पर भी विचार करेंगे। इस समय इतना तो अवश्य तै कर लेना चाहिये कि राज्य का सर्वाङ्गीन शासन बाईसाहब के हाथ में रहे और सब लोग अपने को उनकी प्रजा मानकर दृढ़तापूर्वक अपने जीवन का निर्वाह करें।'

उपस्थित जनता ने हर्ष और उत्साह के साथ इस मत को स्वीकार किया।

रानी बोलीं, 'आप लोग जो भार मुझे दे रहे हैं, उसको मैं अपना गौरव मानती हूं और परमात्मा की कृपा से उसको निभाऊँगी।'

लोगों ने जय–जयकार किया।

गुलाम गौसखां तोपची हाथ बांधकर खड़ा हो गया।

उसने कहा, 'श्रीमन्त सरकार मुझको मेरी पुरानी नौकरी मिलनी चाहिये।'

रानी उसको पहिचानती थीं।

बोलीं, 'तुम सदर तोपची नियुक्त किये जाते हो। सब तोपों को सम्भालो जो, तोपें खराब कर दी गई हैं उनको ठीक करो।'

'जो आज्ञा।' गुलाम गौसखां ने गद्‌गद् होकर कहा,—'एक विनय और है, साढ़े तीन साल से ऊपर हुये एलिस किले वाले—महल में आया और हम लोगों के मन में आशा बँधी कि झांसी के राज्य को लौटने की चिट्ठी लाया होगा, तब मैंने तोपों में बारूद डाल ली थी—सलामी दागने के लिये। आज मुझको अपने मन की करने का हुक्म दिया जाय।'

रानी ने सुरीले मधुर स्वर में कहा, 'अभी ऐसा क्या हो गया है ?'

गुलाम गौस—'हो गया है सरकार। हमारे दिलों में हो गया है। दिलों के बाहर हो गया है।'

मोरोपन्त—'हो गया है।'

लक्ष्मणराव—'हो गया है।'

नाना भोपटकर—'हो गया है।'

उपस्थित जनता ने उसी को दुहराया और जय-जयकार की।

रानी ने अनुमति दे दी।

गुलाम गौस ने थोड़ी देर में तोपों को सम्भाला। जो चलने लायक थीं, उसने सलामी दाग दी।

जब भीड़ छट गई, रानी ने एकान्त में अपने सरदारों से विचार-विमर्श किया।

किले पर भगवा झण्डा चढ़ा दिया गया। पदाधिकारी नियुक्त किये गये। लक्ष्मणराव प्रधान मन्त्री, बख्शी और तोपें डालने पर भाऊ, प्रधान सेनापति दीवान जवाहरसिंह। पैदल सेना के तीन कर्नल—एक दीवान रघुनाथसिंह, दूसरा मुहम्मद जमांखां, तीसरा खुदाबख्श। घुड़सवारों की प्रधान स्वयं रानी, कर्नल—सुन्दर, मुन्दर और काशीबाई। तोपखाने का प्रधान गुलाम गौसखां, नायब दीवान दूल्हाजू। न्यायाधीश नाना भोपटकर। मोरोपन्त कमटाने के प्रधान। जासूसी विभाग मोतीबाई के हाथ में, नायब जूही।

पुलिस, माल विभाग, दान-धर्म विभाग इत्यादि के भी कर्मचारी नियुक्त कर दिये गये।

[२७]

सब कर्मचारियों को अपने-अपने विभागों को दृढ़ता और सावधानी के साथ सम्भालने और चलाने का आदेश रानी ने कर दिया।

सवेरे से ही रिसाले और पैदल पल्टनों की क़वायद और निशाने-बाजी शुरू हो गई। समय पर विगुल बजा और ठीक समय पर सब काम हुआ और होता रहा। सेना में लगभग सब पुराने सिपाही आ गये। नई भर्ती बहुत हुई। सब जातियों और वर्गों के आदमी लिये गये, रानी की हिदायत थी कि सेना को सारे राज्य की जनता अपनी समझे। और यह तभी हो सकता था जब सेना में सब जातियों के लोग रक्खे जाते।

झाँसी का राज्य लेने पर अङ्गरेजों ने लगभग सब पुरानी तोपों को कीलें ठोक कर, वेकार कर दिया था। इनमें से एक भवानीशङ्कर नाम की थी जिसको सं० १७८१ में राज़ा उदेतसिंह के राज्य काल में उस्ताद जयराम ने ढाला था। तोपों के ढालने के कारखानों को चालू करने का कार्य तुरन्त शुरू कर दिया गया। गोले—गोलियां वनाने का, तलवारें, बन्दूकें, पिस्तौल इत्यादि तैयार करने का भी काम जारी हो गया। परन्तु नये हथियारों का कारखानों से वनकर निकलना शीघ्र सम्पादित नहीं हो सकता था। इसलिये रानी ने, जहां मिले, पुराने हथियार इकट्ठे किये। जनता ने जी खोलकर रुपया दिया।

गुलाम गौसखां ने दो दिन में तोपों को ठीक कर लिया। कुछ तोपें गड़ी हुई पड़ी थीं। उनको भी सम्भाल लिया।

यह अच्छा हुआ क्योंकि राज्य को हाथ में लेने के ठीक पांच दिन बाद (१३ जून की रात को) रानी को मोतीबाई ने खबर दी कि करेरा के किले पर सदाशिवराव नेवालकर ने हमला किया है और काफी सेना इकट्ठी करली है।

सदाशिवराव झांसी की गद्दी का दावेदार था। झांसी में ही रहता था। ३१ मई की हलचल की उसको खबर थी। वह अपनी लुड़िया मारने के लिये झांसी से निकल गया। गांवों में लोग क्रान्ति के लिये तैयार थे ही, बहुत से मनचले नौजवान हथियार बांधकर सदाशिव के साथ हो गये।

करेरा में थानेदार और तहसीलदार अङ्गरेजों की ओर से नियुक्त थे। उनको सदाशिव ने मार भगाया। तुरन्त अड़ोस-पड़ोस के जागीर-दारों से रुपया वसूल किया और दो-एक दिन के भीतर ही अभिषेक करवा लिया। पदवी धारण की—महाराजा श्री सदाशिव नारायण! और प्रसिद्ध किया कि मैं ही झांसी राज्य का सच्चा और सही अधिकारी हूँ। गांव-गांव में अपने 'महाराज' होने के घोषणा–पत्र भिजवाये। जिसने उसको झाँसी का राजा न माना उसकी तुरन्त जायदाद जब्त करली। ऐसे सपाटे के साथ क़दम वढ़ाया मानो दो-चार हफ्ते में ही सारे हिन्दु-स्थान का चक्रवर्ती हो जायगा।

उसने समझा झांसी अनाथ है—एक महज़ अल्पवयस्क स्त्री के हाथ में है।

खबर पाते ही रानी ने तैयारी कर दी। नगर का प्रवन्ध मजबूत था ही। उत्तर, पूर्व और दक्षिण के भागों का शीघ्र सन्तोषजनक प्रवन्ध कर लिया। करेरा पश्चिम दिशा में था। गड़बड़ केवल इसी दिशा में 'महाराज' सदाशिव के कारण थी।

झाँसी की सेना अधिकचरी थी परन्तु सेनापति चतुर और उत्साही थे। करेरा कूच करने के पहले तीनों सहेलियों से मुस्कराकर रानी ने कहा, 'तुम तीनों कर्नलों की परीक्षा महाराज सदाशिव नारायण के सामने होगी।'

मुन्दर बोली, 'यदि महाराजा साहब हमारे जनरल का नाम सुनते ही भाग गये तो ?'

रानी हँसी। जैसे मोतियों ने आभा बरसाई हो। काशी शांत प्रकृति की होते हुये भी बहुत हँसी।

रानी ने कहा, 'काशी, मैं बिलकुल पीछे रहूंगी। तुमको आगे जाकर लोहा लेना पड़ेगा।'

काशी बोली, 'बाईसाहब, उस समय या तो आपका घोड़ा न मानेगा या आप न मानेंगी।'

रानी ने कूच कर दिया।

वे इतने वेग के साथ अपने घुड़सवारों को लेकर करेरा पहुँचीं कि 'महाराजा' सदाशिवराव को लड़ने का मौका नहीं दिया!

रानी ने पहुंचते ही करेरा के किले को ऐसा घेरा कि सदाशिव ने मुश्किल से भागकर अपनी जान बचा पाई। सिंधिया के राज्य में, नरवर में, जाकर दम ली।

वहाँ से सदाशिव ने सिंधिया से सहायता की याचना की। ग्वालियर से थोड़ी सी सहायता आई। परन्तु रानी ने सदाशिव को नरवर में घेर लिया और पकड़ कर झांसी ले आईं। झांसी के किले में कैद कर लिया।

[२८]

विन्ध्यखण्ड की समग्र जनता में सनसनी फैली हुई थी। यहां की जनता ने कभी किसी अत्याचारी का शासन आसानी के साथ नहीं माना। स्वाभिमान को आघात पहुंचा कि व्यक्ति ने सिर उठाया और हथियार हाथ में लिया। शायद भारत का यही खण्ड एक ऐसा है जहाँ डाकू को 'बागी' कहते हैं।

विन्ध्यखण्ड छोटी-बड़ी रियासतों में बिखरा हुआ था। सब बड़ी-बड़ी रियासतें कम्पनी सरकार का साथ दिये थीं। बानपूर और शाहगढ़ साधारण राज्य थे। ये राज्य विप्लव में शामिल हुये।

रानी को इन दोनों राजाओं के स्वाधीनता-प्रिय विचारों का पता था। इन दोनों को उन्होंने स्वराज्य-स्थापना के संग्राम में भाग लेने के लिये पत्र भेजे। वे दोनों लड़ने के लिये उद्यत हो गये।

बानपूर राज्य के राजा मर्दनसिंह ने अपनी सेना को लेकर सागर जिले में प्रवेश किया।

शाहगढ़ का राजा बखतबली था। उसने भी विप्लव किया।

झाँसी के चारों ओर, दूर और पास, विप्लव और क्रान्ति और लूट मार मच गई। इस परिस्थिति में रानी लक्ष्मीबाई झांसी में एक सुदृढ़ स्फटिक सी थीं। झांसी जिले में उन्होंने प्रबलता के साथ शान्ति स्थापित की।

उनकी दिनचर्या वैसी ही नियम-संयम के साथ चली जा रही थी। उनकी चर्या में केवल दो अन्तर आये। एक तो वे सुबह के नित्य कृत्यों और पूजा ध्यान के उपरान्त राज्य के कर्मचारियों को मिलने और उनकी समस्याओं को सुनने के लिये समय देने लगीं; दूसरे ठीक तीन बजे के पश्चात् वे कचहरी करने लगीं। बड़े और महत्वपूर्ण मुकद्दमे वे स्वयं सुनती थीं और तुरन्त निर्णय कर देती थीं। कभी-कभी

दण्ड भी स्वयं अपने हाथ से देती थीं परन्तु केवल उन मामलों में जिनमें किसी ने बालक या स्त्री को सताया हो।

वे कचहरी में टोपी लगाकर बैठती थीं! भीतर लोहा ऊपर लाल रेशम टोपी झालरदार-मोतियों और जवाहरों की। कण्ठ में हीरों की माला। सुडौल और भरे हुये वक्षस्थल पर कंचुकी, जो सुनहरी जरीदार कमरपेटी से कसी रहती थी। कभी साड़ी और कभी ढीला पैजामा पहिन आती थीं।

रानी के आसन के पास ही दीवान लक्ष्मणराव कागज, कलम दावात लिये बैठा था।

आये गये की उनको जबरदस्त याद रहती थी। नित्य का आने वाला यदि एक दिन भी चूक जाय तो वह उनके आते ही गैरहाजिरी का कारण पूछती थीं और समय की वे कठोर पाबन्दी करती थीं।

वर्षा का आरम्भ विलम्ब से हुआ परन्तु प्रचण्डता के साथ। फिर भी उनके कार्यों में शिथिलता न आई—घोड़े की सवारी करने से जरूर विवश थीं।

ऐसी ऋतु में प्रायः डकैती, बटमारी बन्द हो जाती हैं परन्तु इन्हीं दिनों उनको सूचना मिली कि बरवासागर के पास सागरसिंह-कुँवर सागरसिंह-डाकू ने लगातार कई डाके डाले हैं और बरवासागर का थानेदार उसका कुछ नहीं कर पा रहा है। रानी ने तुरन्त निश्चय किया। मोतीबाई द्वारा खुदाबख्श को बुलाया।

आने पर खुदाबख्श से कहा, 'सागरसिंह का शीघ्र दमन किया जाना चाहिये।'

खुदाबख्श ने हाथ जोड़ कर स्वीकार किया।

रानी—'तुम इसी समय २५ सिपाही लेकर बरवासागर जाओ और सागरसिंह को जीवित का मृत ले आओ। उसकी दुष्टता के कारण बरवासागर और बरवासागर का पड़ोस त्रस्त और सन्तप्त

हो उठा है। इस काम को कितने दिन में पूरा कर सकोगे? एक महीने में?'

खुदाबख्श—'श्रीमन्त सरकार, जितनी जल्दी हो सकेगा, उतनी जल्दी। केवल वर्षा की कठिनाई है।'

रानी—'परन्तु सागरसिंह को वर्षा कोई विघ्न-बाधा नहीं पहुंचाती।'

खुदाबख्श—'सरकार—'

रानी—'कहो, कहो!'

खुदाबख्श—'सरकार, ये लोग कुछ ग्रामीणों से मिलकर बनियों, महाजनों को लूटते हैं और सघन जङ्गलों में जाकर छिप जाते हैं।'

रानी—'पानी बरसते घने जङ्गलों में वे सोते खाते कहाँ होंगे? यदि तुम उन्हें उनके अड्डों पर ढूँढ़ो तो वे जङ्गलों में नहीं मिलेंगे बल्कि अपने अड्डों पर। कुछ और सिपाही चाहिये हों तो ले जाओ।'

खुदाबख्श—'नहीं सरकार, इतने ही बहुत हैं। यदि अटक पड़ेगी तो समाचार दूँगा।'

खुदाबख्श चला गया।

रानी ने अपनी सहेलियों से एकान्त में सलाह की।

रानी ने प्रश्न किया, 'खूब बरसते पानी में घोड़ा दौड़ा सकोगी?'

मुन्दर ने उत्तर दिया, 'दौड़ा लूंगी। अभ्यास तो किया है।'

'तुम सुन्दर और काशीबाई।' रानी ने पूछा।

उन दोनों ने भी हाँ भरी परन्तु काशीबाई की हां में कुछ दुर्बलता थी।

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'काशी हाल में कुछ अस्वस्थ रही है इसलिये वह महल में ही रहेगी और यहाँ का काम-काज देखेगी। मेरी अनुपस्थिति का समाचार झांसी से बाहर न जाने पावे। खुदाबख्श के बरुआसागर पहुंचने के बाद किसी दिन हम लोग यहां से चलेंगे।'

खुदाबख्श उसी दिन चला गया। सन्ध्या तक बरुवासार पहुंचा। भीगा हुआ और भूखा परन्तु उसको मानसिक क्लेश कुछ न था।

ज़रा सुस्ता कर भोजन किया। थानेदार से सागरसिंह की गति विधि पर बातचीत की। खुदाबख्श झांसी से यह ख्याल लेकर आया था कि बरुवासागर का थानेदार किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया है परन्तु उसका यह भ्रम निकला। सागरसिंह बहुत चालाक और बड़ा साहसी था। उसके साथ उत्पातियों का काफी बड़ा गिरोह था। बरुवासागर का थाना प्रयास करने पर भी उसके कार्यक्रम में बहुत कम बाधा डाल सकता था।

सागरसिंह का घर रावली ग्राम में, बरुवासागर से पांच-छः कोस की दूरी पर था परन्तु वह घर पर रहता बहुत कम था।

खुदाबख्श को बरुआसागर आकर अपने आसामी की विकटता का पता लगा और अधिक सिपाही मँगाने में नाक सी कटती थी। समय केवल एक महीने का था। मोतीबाई की याद आई—अपने जादू से शायद वह कुछ कर डालती। तुरन्त उसके मन ने इस कल्पना को धिक्कारा।

दूसरे दिन बादल ज़रा खुला। भरे-भरे साँवले-धूँधरे बादल आते और चले जाते थे। एकाध फुहार छोड़ जाते। नदियाँ नाले भरे इठलाते हुये और सवेग। खुदाबख्श ने बरुवासागर के थानेदार, उसके सिपाहियों और अपने सिपाहियों को लेकर सवेरे ही रावली की ओर दौर कर दी। छिपे-लुके, भीगे और कीचड़ में लतपत, बन्दूक़ों को कपड़ों में ढके, जेबों में भुने चने और प्याज भरे, ये लोग दुपहरी में रावली के गेंवड़े पहुंच गये। खेतों में कोई काम नहीं हो रहा था इसलिये मार्ग में किसी से भेंट नहीं हुई। सब लोग गाँव में थे और पानी के खुलने को मना रहे थे। सागरसिंह भी घर पर था।

सागरसिंह का मकान ऊँची टौरिया पर था। सागरसिंह खाना खाने के बाद झपकी ले रहा था। झकोरों हवा चल रही थी और कभी कभी फुहार पड़ जाती थी, इसलिये खुदाबख्श के दल का शब्द नहीं सुनाई पड़ा।

जब तक गांव वाले सागरसिंह को सचेत करें कि खुदाबख्श ने सागरसिंह की हवेली घेर ली, उसको फाटक लगवा लेने का अवसर मिल गया। हवेली में उसके कुछ आदमी थे। वे सब जल्दी तैयार हो गये।

सागरसिंह को आश्चर्य था कि कुऋतु और समय पर किसने घेरा डालने की हिम्मत की। दीवारों के तीरकशों में होकर उसने परख लिया कि घेरने वालों के साथ तोप नहीं है और वे केवल घर में घुसकर ही नुकसान पहुँचा सकते हैं। सोचा, शाम तक यों ही पड़ा रहने दूँ और देखता रहूं। फिर उसको ख्याल आया कि घेरने वाले रानी के सिपाही होंगे और इनकी पीठ पर कुछ बल कहीं और लगा होगा। इसलिये उसने तुरन्त लड़ डालने की ठानी। वह जानता था कि घेरने वाले अधिक समय तक बन्दूक नहीं चला सकेंगे और वह स्वयं सूखी जगह में बैठकर बहुत अच्छा और बड़ी देर तक लड़ सकेगा।

हवेली टौरिया की ठीक चोटी पर न थी किन्तु अधवारी से जरा ऊपर। खुदाबख्श ने इस स्थिति से लाभ उठाने का प्रयत्न किया परन्तु सागरसिंह की पहली बाढ़ ने ही खुदाबख्श के कई सिपाहियों को घायल कर दिया। खुदाबख्श ने तुरन्त हवेली पर चढ़ जाने की आज्ञा दी। स्वयं आगे हो गया। जब तक सागरसिंह फिर बन्दूकों को भरे, खुदाबख्श हवेली पर चढ़ गया और उसके कई साथी। सागरसिंह ने फिर बाढ़ दागी परन्तु खाली गई।

सागरसिंह ने समझ लिया कि अब गये। उसने तलवार हाथ में ली। खुदाबख्श और उसके साथी आंगन में कूद पड़े।

सागरसिंह का मुकाविला न हो सका। खुदाबख्श घायल होकर गिर पड़ा और सागरसिंह उसके साथियों को चीरता हुआ बाहर निकल गया। तब खुदाबख्श के अन्य सिपाही फाटक से होकर भीतर आ गये।

खुदाबख्श और उसके साथियों ने गांव में टिकना ठीक नहीं समझा। खुदाबख्श बैलगाड़ी से रात होते बरवासागर आ गया।

घाव बहुत गहरे न थे परन्तु थे कई और खून काफ़ी निकल चुका था। उसकी और उसके घायल सिपाहियों की मरहम-पट्टी की गई। रात में खुदाबख्श को बेहोशी रही।

सवेरे रानी के पास समाचार भेज दिया गया।

[२६]

मेंघ छाये हुये थे। हवा सन्न थी। पानी रिमझिम-रिमझिम बरस रहा था। महल के ऊपरी खण्ड के हवाई कमरे में रानी आँख मूंदे हुये मोतीबाई का भजन सुन रही थीं। मुन्दर जमुहा रही थी, सुन्दर बैठे-बैठे सावधानी के साथ निद्रामग्न हो गई थी। काशी सचेत थी।

भजन की समाप्ति पर रानी का ध्यान टूटा, मुन्दर की जमुहाई हटी परन्तु सुन्दर की निद्रा–समाधि भङ्ग न हुई।

रानी ने हँसकर कहा, 'सुन्दर देख यह भालू कहां से आ गया है।'

सुन्दर हड़वड़ा गई। भौंचक्की होकर बोली, 'कहाँ है, बाईसाहब ?'

'ढूंढ़ तो पता लग जायगा', रानी से कहा, 'साधारण भालू तो है नहीं' सुन्दर लज्जित हो गई।

हाथ जोड़कर बोली, 'सरकार, दिन भर की थकी थी इसलिये अभी-अभी थोड़ी सी नींद आ गई।'

काशीबाई—'सरकार, यह आज दिन भर चक्की चलाती रही है, इसलिये बहुत थक गई है।'

सुन्दर—'नहीं काशीबांई, चक्की नहीं चलाई तो और काम तो बहुत किया है।'

मुन्दर—'तुम अकेली ने !'

उसी समय पहरे वाले ने निवेदन किया, 'बरवासागर से एक सिपाही आवश्यक समाचार लाया है।'

रानी ने दूसरे कमरे में उसको बुलवाया। उनका आदेश था कि आवश्यक समाचार के लिये समय कुसमय न देखा जावे और उनको तुरन्त सूचना दी जाया करे।

रानी सहेलियों के साथ दूसरे कमरे में गई।

समाचार-वाहक ने कहा, 'सरकार, रावली के बाग़ियों से सरकार खुदाबख्श की लड़ाई हुई। वे घायल हो गये हैं। सात सिपाही भी

घायल हुये हैं। सरदार को तलवार के घाव लगे हैं और सिपाहियों को गोलियों के। भगवान की कृपा से मरे कोई नहीं और न किसी के लिये इस तरह का भय है। सागरसिंह भाग गया है। लड़ाई रावली में सागरसिंह के घर पर हुई थी।'

मोती का चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने पूछा, 'रावली बरुवासागर से कितनी दूर है ?'

उसने उत्तर किया, 'पाँच-छः कोस है सरकार। जासूस ने पता दिया कि सागरसिंह अपने घर है। सरकार ने धावा बोल दिया।'

रानी—'खुदाबख्श को कहां चोट आई हैं और अब क्या हाल है ? लड़ाई को कितने दिन हो गये ?'

उत्तर—'लड़ाई को आज चौथा दिन है। घाव वाहों और जांघों में हैं, सिर पर भी एक वार है। अच्छे हो रहे हैं। सिपाहियों के घाव अलबत्ता ज्यादा गहरे हैं।'

रानी—'तुमको समाचार लाने में इतना विलम्ब क्यों हुआ ?'

उत्तर—'वेतवा इतनी चढ़ी हुई है कि नाव नहीं लग सकी सरकार, आज दोपहर कुछ उतरी तब आ पाया हूं।'

रानी—'प्रबन्ध करती हूं, तुम जाओ।'

रानी अपने कक्ष में लौट आईं।

रानी ने कहा, 'कल बरुवासागर चलना चाहिये।'

काशी बोली, 'सरकार न जायें। कुछ ठीक नहीं किस समय ज़ोर से पानी बरस पड़े, नदी चढ़ आवे। उस दिन जब आपने बरुवासागर जाने का निश्चय किया मैं कुछ न कह सकी थी परन्तु आज तो मैं हठ करूंगी।'

रानी सोचने लगीं। उन्होंने मोतीबाई की उदासी देख ली और पहिचान ली।

रानी—'तुम ठीक कहती हो काशी, परन्तु स्थिति की मांग हम पर प्रवल है। यदि कल पानी न वरसा तो अच्छे घोड़ों पर चल देंगे। हाथी भी जा सकता है परन्तु मैं इस समय प्रदर्शन वचाना चाहती हूँ, और वह सवारी वहुत धीमी भी है।'

मोतीबाई—'सरकार को कुछ घुड़सवार साथ में ले लेने चाहिये।'

रानी—'लूंगी। दीवान रघुनाथसिंह को सवेरे सूचना दे देना।'

काशीबाई—'मैं भी चलूंगी।'

रानी—'चलना, मैं क्या रोकती हूं?'

मोतीवाई—'आज्ञा हो तो मैं भी चलूं।'

रानी—'नाव न लगी तो घोड़े पर नदी पार कर लेंगी?'

मोतीवाई—'सरकार की सेवा में रहते, मुझको आग-पानी, किसी का भी डर नहीं रहा।'

रानी ने स्वीकृत किया।

रात में पानी थोड़ा-थोड़ा वरसता रहा। सवेरे वादल खुला सा दिखलाई दिया। रानी सहेलियों समेत बरुआसागर की ओर चल दीं। पच्चीस घुड़सवार साथ में ले लिये। दीवान रघुनाथसिंह संग में। शीघ्र ही घाट पर यह दस्ता पहुँच गया। देखें तो वेतवा दोनों पाट दावे वेग से चली जा रही है।

ऊपर ज्यादा पानी वरस गया था, इसलिये वेतवा वेतहाशा इठला गई। हवा, आंधी के रूप में चल रही थी। मल्लाहों के लिये नाव का लगाना असम्भव था। अनेक घुड़सवारों के दिल टूटने लगे।

उस पार की पहाड़ियों का लहरियादार सिलसिला हरियाली से ढका हुआ था। वादल के सफेद घूमरे टुकड़े पहाड़ियों की चोटी और हरियाली को चूमने के लिये नभ से उतर-उतर कर टकराते चले जा रहे थे। वेतवा का शोर आंधी का साथ पकड़ तुमुल हो उठा।

रानी ने मुड़कर मोतीबाई की ओर देखा। वह उस पार की पहाड़ियों से टकराते हुये मेघ खण्डों पर दृष्टि जमाये थी।

रानी ने आज्ञा दी, 'कूद पड़ो।' और वे सबसे आगे घोड़े पर पानी में धस गईं।

फिर क्या था उनकी सहेलियां और सब घुड़सवार धार को चीरते दिखलाई पड़ने लगे। रानी सबसे आगे।

बेतवा की धार पुञ्ज के ऊपर पुञ्ज सी दिखलाई पड़ती थी। क्रम अभंग और अनन्त सा। जब एक क्षण में ही अनेक बार एक जलपुञ्ज दूसरे से संघर्ष खाता और एक दूसरे से आगे निकल जाने का अनवरत, अथक, अटूट प्रयास करता तब इतना फेनिल हो जाता कि सारी नदी में फेन ही फेन दिखलाई पड़ता था। झाग की इतनी बड़ी निरन्तर बहती और उत्पन्न होती हुई राशियां आड़े आ जाती थीं कि घुड़सवारों को सामने का किनारा नहीं दिखलाई पड़ पाता था।

लहरों के एक पल्लड़ को चीरा, उस पर के झाग को वेधा कि दूसरा सामने। शब्दमय प्रवाह की निरर्थक भाषा मानो बार-बार कहती थी बचो, बचो। सामने की उथल-पुथल से आगे बढ़े कि बगल से थपेड़ पड़ी। घोड़े आंखें फाड़े नथनों से जल फुफकारते बढ़ रहे थे। वे अपना और अपने सवार का सँकट समझ रहे थे। सवार के पैर घोड़े से चिमटे हुये और उनके पैरों के नीचे घोड़े की निश्तब्ध टाप। और टाप के नीचे ? न जाने कितनी गहराई। सवारों के चारों ओर भँवरे पड़-पड़ जा रही थीं। एक भँवर बनी, पार की कि दूसरी तुरन्त मौजूद। परन्तु अपनी रानी और उनकी सहेलियों को आगे देखकर किस सिपाही के मन में अधिक समय तक भय ठहर सकता था ?

रानी के घोड़े का केवल सिर ऊपर, शेष भाग पानी और झाग में। रानी की कमर तक झाग, पानी और धार के साथ बहकर आया

हुआ झाड़ी–झंकाड़। धार की बूंदों की झड़ी उचट-उचट कर आँखों में, वालों पर और सारे शरीर पर वरस रही थी। जब कभी सिपाहियों और सहेलियों को उत्साह देना होता तो हँस हँसकर शावाशी देतीं—मानो प्रचण्ड वेतवा की मलिन अञ्जलि में मुक्ता वरसा दिये हों। धूमरे वादलों के आगे एक ओर वगुलों की पांत निकल गई—मानों पहाड़ियों और पहाड़ियों से मिलने वाले वादलों को सफेद खौर लगा दी हो।

पहाड़ी की कन्दराओं में घुसे हुये उनको आच्छादित किये हुये वादलों में होकर वह वकुलावलि छिपती हुई सी मालूम पड़ी और फिर तितर-वितर हुई—जैसे हिलती हुई सांवली सलौनी चादर में टके हुये सितारे। पहाड़ पर बड़े–बड़े और सघन पेड़। गहरे हरे श्यामल। वगुले एक पेड़ पर जा वैठे—मानो वनदेवी ने प्रभा 'छिड़क दी हो। उस विषम धार के पार थोड़ी देर में किनारा दिखलाई दिया।

रानी फिर हँसी। वगुलों की सफेदी से रानी के दांतों ने तुरन्त होड़ लगा दी।

चिल्लाकर वोलीं, 'देखो किनारा आ गया। पड़ाव मार लिया।'

थोड़ी देर में पूरा दस्ता नदी पार हो गया। सब लोग भीग गये थे। परन्तु पीठ पर कसे, ढके हुये हथियार लगभग सूखे थे। थोड़े ठिठुर गये थे।

घाट पर कपड़े सुखाने, बदलने में और घोड़ों को आराम देने में थोड़ा सा समय लगा।

फिर दौड़ लगी और रानी बरुआसागर के किले में दोपहर के करीब पहुंच गईं।

बरुआसागर का किला विशाल झील के ठीक ऊपर है। झील में वरवा नाम का वड़ा नाला पड़ता है। झील को विशालता इस नाले ने ही दी है।

घायल सिपाही और खुदाबख्श इसी किले में पड़े हुये थे।

रानी ने तुरन्त इन सबको देखा। किसी के सिर पर हाथ फेरा, किसी की मरहमपट्टी की देखभाल की। सिपाही अपनी रानी के स्नेह को पाकर मुग्ध और गद्गद् हो गये।

फिर खुदाबख्श के पास पहुंची। खुदाबख्श ने चारपाई से उठने का प्रयत्न किया परन्तु न उठ सका।

रानी को देखते ही उसके आंसू आ गये। चरण स्पर्श करने की कोशिश की।

रानी ने फिर सिर पर हाथ फेरा। चौकी पर बैठ गईं। सहेलियां खड़ी थीं। मोतीबाई सहेलियों के पीछे से खुदाबख्श को एक टक देख रही थी। खुदाबख्श ने उसको देख लिया परन्तु आंखें उसकी मोतीबाई की ओर न थीं।

खुदाबख्श ने रानी को सागरसिंह की लड़ाई का ब्योरेवार हाल सुनाया।

रानी—'कुछ पता चला सागरसिंह अब कहां चला गया है ?'

खुदाबख्श—'सरकार, गांव वाले पता नहीं बतलाते। वे ही उसको शरण, भोजन इत्यादि सब देते हैं। इतना तो भी मालूम हो गया है कि वह पड़ोस के जङ्गल में है।'

रानी—गांव वाले डाकुओं से डरते हैं। उनके पास निर्भय होने का कोई साधन नहीं है। अङ्गरेजी राज्य ने पञ्चायतों का सर्वनाश कर दिया है इसलिये गाँवों में परस्पर सहायता की प्रणाली उठ सी गई है और उसने डाकुओं की सहायता देने का रूप पकड़ लिया है। देखूंगी, तुम चिन्ता मत करो।'

खुदाबख्श—'अब सरकार स्वयं यहां आ गई हैं। मुझको किस बात की चिन्ता ? घाव लगभग अच्छे हो गये हैं। एकाध दिन में ठीक हुआ जाता हूं। फिर देखता हूं सागरसिंह को।'

रानी ने उसको विश्राम करने का हठ किया। मोतीबाई को खुदाबख्श के पास छोड़कर, किले के महल वाले हिस्से में चली गईं। स्नान-ध्यान में लग गईं।

अब मोतीबाई की आँखें तरल हुईं। रुद्धकण्ठ मुखरित होने के लिये आकुल हो गया। खुदाबख्श ने देख लिया।

बोला, 'यह क्या! आंखों में आँसू! आपको तो हर्ष और गर्व से हँसना चाहिये था। आपका क़ैदी – नहीं आप की सरकार का सिपाही, अपने मालिक के लिये कुछ तो कर सका।'

मोतीबाई ने आँख पोंछ कर कहा, 'क्या दर्द बहुत है?'

खुदाबख्श ने जवाब दिया, 'जरा भी नहीं। मालिक ने हाथ क्या फेरा, अमृत लुढ़का दिया। सच कहता हूँ, अभी उनकी आज्ञा हो तो घोड़े पर बैठकर उस अत्याचारी से दो हाथ करूँ।' फिर उसने करवट लेने की कोशिश की। जरा कष्ट हुआ।

एक आह को दवाकर बोला, ''जान पड़ता है कि श्रीमन्त सरकार मेरे स्वस्थ होने तक नहीं ठहरेंगीं।'

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से कहा, 'मैं भी उनके साथ जाऊँगी।'
खुदाबख्श ने आंख मीच ली। बोला, 'आप भी जाओगी।'

'क्यों? मुझे क्या हुआ? उनकी छाया में आदमी आंधी बन जाता है, तो औरत क्या आदमी भी नहीं बन सकती?'

मोतीबाई को 'रत्नावली' नाटक में रङ्गमञ्च पर रत्नावली का अभिनय करते देखा था। स्मरण हो आया। एक साथ कोमलता और प्रसूनों के चित्र आंखों में घूम गये। खुदाबख्श ने एक निश्वास लिया।

आंखें मूँदे ही बोला, 'मेरी मरहम पट्टी के लिये रह जाना।'

मोतीबाई ने सस्नेह कहा, 'सरकार से कह देना, मैं खुशी से रह जाऊँगी।'

खुदाबख्श ने आंख खोली। भ्रकुटि भङ्ग की। जरा रुखाई के साथ बोला, 'श्रीमन्त सरकार से भिक्षा मागूँगी कि 'रत्नावली' को सेवा टहल के लिये दे दीजिये।'

मोतीबाई ने उसकी रुखाई की उपेक्षा की।

कहा, 'रत्नावली कौन ?'

खुदाबख्श को आश्चर्य हुआ। बोला, 'क्या मैंने रत्नावली कहा ?'

मोतीबाई हँसी। उसकी हँसी में चमत्कार था परन्तु खुदाबख्श पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

मोतीबाई—'रत्नावली ही तो कहा। क्या कोई सपना देख रहे थे ?'

खुदाबख्श—'वह अपना था। अब मीठा जागरण सामने है।'

मोतीबाई ने खुदाबख्श की आंखों में स्नेह को पकड़ने का प्रयत्न किया।

बोली, 'तब मैं खुद तो उनसे नहीं कह सकूंगी। वह सोचेंगी, मैं बहुत टुच्ची हूं।'

'जी हां', खुदाबख्श ने ज़रा सा सिर उठाकर कहा, 'आप चाहती हैं वह आपको बहादुर समझें और मुझे टुच्चा और निकम्मा।'

'मैंने यह तो नहीं कहा, 'मोतीबाई बोली, 'खुदा करे, आप जल्दी अच्छे हो जावें।' और वहां से चली गई।

ऊपर की छत को घेरे हुये किले की दीवार थी। दीवार में मुड़ेर-दार खिड़की। उसमें होकर मोतीबाई झील की लहरों को परखने लगी—और रोने लगी।

नियन्त्रण करके वह अपने काम में लग गई।

[३०]

सन्ध्या के पहले बरवासागर के मुखिया और पञ्च रानी से मिलने के लिये आये। नजर न्योछावर हुई। रानी ने सबसे कुशलक्षेम की वार्ता की।

जब एकान्त पाया, थानेदार ने रानी को सागरसिंह के विषय में सूचना दी। मालूम हुआ कि खिसनी के जङ्गल में आश्रय पाये हुये है। खिसनी का जङ्गल बरवासागर से १२ मील था। थानेदार को उन्होंने आदेश दिया।

'सवेरे आठ बजे तैयार रहना। किसी को मालूम न होने पावे।'

सवेरे सब तैयार हो गये।

ठीक समय पर उन्होंने मोतीबाई को बुलाकर कहा, 'तुम यहीं रहो, खुदाबख्श की मरहम पट्टी और देख-भाल करना।'

मोतीबाई ने पलकें नीची कीं। बोली, 'मैं तो सरकार की सेवा में चलूंगी। क्या किसी ने प्रार्थना की है?'

'नहीं, मैं ही कह रही हूं।' रानी ने उत्तर दिया।

मोतीबाई ने चलने का हठ किया। उनकी अन्य सहेलियों ने भी अनुरोध किया। रानी मान गईं।

रानी अपनी और बरवासागर के थाने की टुकड़ी को लिये हुये चल दीं। उन्होंने इस टुकड़ी के दो भाग किये। एक को दीवान रघुनाथसिंह की आधीनता में रावली की ओर रवाना किया और दूसरी को स्वयं लेकर खिसनी के जङ्गल की ओर चल दीं।

दीवान रघुनाथसिंह ने सागरसिंह की हवेली घेर ली। एक गांव वाले से कहला भेजा, 'हथियार डालकर मेरे पास आ जाओ। रानी साहब कुछ रियायत कर देंगीं, नहीं तो हवेली की ईंट से ईंट बजा दूंगा।'

गांव वाले ने कहा, 'कुँवर सागरसिंह हवेली में नहीं हैं।'

रघुनाथसिंह'—'तब तो हवेली को पटक देने में और भी सुभीता रहेगा।'

परन्तु जब उसको निश्चय हो गया कि सागरसिंह हवेली में नहीं है, उसने रानी से पास सन्देशा खिसनी की ओर भेज दिया। खुद हवेली का घेरा डाले रहा।

रानी जब जङ्गल को घेरने की योजना तैयार कर रही थीं, तब उनको यह सन्देशा मिला। उनका मन कह रहा था कि सागरसिंह इसी डांग में है।

जासूस ने घण्टे भर के भीतर सूचना दी, 'दो पहाड़ियों की दून के सिरे पर एक बड़ी सी पर्णकुटी में बागी खाने-पीने की तार में लगे हुये हैं। उनके पास घोड़े हैं।'

रानी ने दोनों पहाड़ियों की ऊँचाइयां बन्दूक वालों से घिरवा लीं और दून के सिरे पर भी कुछ आदमी भेज दिये। स्वयं तीनों सहेलियों और मोतीबाई के साथ दून के निकास पर दो कतारों में ओट लेकर घोड़ों समेत ठहर गईं।

उनकी आज्ञा थी कि ऊपर वाले सिपाही धीरे-धीरे दून के ढाल की ओर बढ़ें और जब डाकुओं से जरा निकट आ जावें तब बन्दूकों की बाढ़ दागें।

ऐसा ही किया गया।

डाकू बेहद हड़बड़ा गये। खाना-पीना और साज-सामान छोड़ कर, घोड़ों पर नंगी पीठ सवार हुये और दून के निकास की ओर भागे।

ऊपर, तीन ओर से बन्दूकें चल रही थीं परन्तु डाकुओं का एक आदमी भी घायल तक नहीं हुआ।

निकास पर पहुंचते ही उनके ऊपर सामने से पांच बन्दूकें

चलीं। घोड़े मरे, डाकू घायल हुये। उन लोगों ने बन्दूकों से

जवाब दिया परन्तु रानी का दर्ल आड़ें लिये हुये था। इसलिये कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

डकू सिर पर पैर रखकर इधर-उधर भागे।

काशी, सुन्दर और मोतीबाई ने अलग-अलग पीछा किया।

रानी और मुन्दर के पास से जो डाकू घोड़े पर सवार, जरा पीछे निकला, वह सतर्क था। नङ्गी तलवार हाथ में, गले में सोने का जेवर।

वस्त्र भी उसके अच्छे थे। जो वर्णन उनको सागरसिंह का मिला था, उससे इस डाकू-सवार की हुलिया मिलती थी। रानी ने निर्णय किया कि यहीं सागरसिंह है। रानी ने मुन्दर को मुस्कराकर इशारा किया। मुन्दर ने होठ दावे और सपाटे के साथ उस पर टूटी। रानी दूसरी वगल से। सागरसिंह ने घोड़ा तेज किया। इन दोनों ने पीछा किया। जव तक मार्ग ऊबड़-खावड़ रहा सागरसिंह बचता हुआ चला गया। जब मार्ग कुछ समस्थल आया, जमीन मुलायम और कीचड़ वाली मिली, सागरसिंह का घोड़ा अटकने लगा। रानी और मुन्दर के घोड़े बहुत प्रवल थे—दोनों काठियावाड़ी। सागरसिंह को एक ओर से मुन्दर ने दवाया और दूसरी ओर से रानी ने।

रानी गले में हीरों का दमदमाता हुआ कण्ठा डाले थीं। उनको देखते ही सागरसिंह समझ गया कि जिस रानी के विषय में बहुत सुना करते थे, वह स्वयं आज, इसी क्षण, उसके प्राणों की गाहक बनकर आ कूदी है।

आत्मरक्षा के भाव से प्रेरित होकर उसने रानी पर वार किया। तुरन्त मुन्दर ने चपल गति से अपनी तलवार उस पर छाई। वार ओछा पड़ा, घोड़े की पीठ पर। उधर रानी ने घोड़े को फुर्ती के साथ जरा सा रोका। वह कुल अंगुल पीछे हुई और सागरसिंह का वार उनसे आगे खिच गया। रानी ने अपनी तलवार ऐसी कसी कि सागरसिंह की तलवार के दो टुकड़े हो गये। उसने अपने घोड़े को बहुत खींचा, दावा परन्तु उसकी पीठ कट चुकी थी। मुन्दर ने सागरसिंह की

गर्दन को ताक कर तलवार उबारी कि रानी ने तुरन्त कहा, 'जीवित पकड़ना है।' और रानी ने इस तरकीब से अपना घोड़ा सागरसिंह की बराबरी पर किया कि वह सट गया। रानी ने सागरसिंह की कमर में अपना हाथ डाला। मुन्दर समझ गई कि क्या करना है। दूसरी ओर से उसने अपना हाथ उसकी कमर में लपेट दिया और झटका देकर घोड़े पर से उठा लिया। घोड़ा पीछे रह गया सागरसिंह ने इस वज्रपाश में से निकलने, खिसकने की बहुत कोशिश की परन्तु वह सफल न हो सका। उसने अपने दांतों को काम में लाने का प्रयत्न किया। रानी ने कहा, 'सावधान, यदि मुंह खोला तो तलवार ठूंस दूंगी।'

सागरसिंह को रानी और मुन्दर के बल की प्रतीति हो गई और उसने अपनी रक्षा को अपने भाग्य के हवाले कर दिया। थोड़ी दूर चलने पर रानी के दस्ते के लोग सिमट आये। सागरसिंह उस वज्रपाश में से निकला और रस्सियों से बांध लिया गया। घोड़े पर लाद कर यह टुकड़ी एक जगह ठहर गई। मोतीबाई, काशी और सुन्दर की बाट देखने लगी। रानी ने बिगुल बजवाया। वे तीनों थोड़ी देर में उस स्थल पर आ गईं। मालूम हुआ कि बाकी डाकू निकल भागे। दीवान रघुनाथसिंह को समाचार देकर रानी बरुआसागर चली आईं। उन्होंने कहा, 'ये भागे हुये डाकू इस समय हाथ नहीं लगेंगे। समय काफ़ी हो चुका है। बरवासागर सन्ध्या के पहले पहुँच जाना चाहिये।

रानी सन्ध्या के पहले ही बरवासागर पहुँच गईं। सागरसिंह सख्त पहरे में रख दिया गथा। रात होने के पहले रघुनाथसिंह अपने दल समेत आ गया।

रानी की बुद्धि और विकट वीरता की घर-घर महिमा बखानी जाने लगी। दूसरे दिन गांव—गांव में चर्चा फैल गई।

समय पर सागरसिंह रानी के सामने पेश किया गया। उसने प्रणाम किया और पैर छूने के लिये हाथ बढ़ाने चाहे। पहरे वालों ने रोक लिया।

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा नाम ?'

उसने उत्तर दिया, 'कुँवर सागरसिंह, श्रीमन्त सरकार।'

रानी मुस्कराईं। सागरसिंह मुस्कराहट से काँप गया।

रानी ने कहा, 'कुँवर होकर यह निकृष्ट आचरण कैसा ?'

सागरसिंह बोला, 'सरकार, हमारा वंश सदा लड़ाइयों में भाग लेता रहा है। महाराज ओरछा की सेवा में लड़ा। महाराज छत्रसाल की सेवा में रह कर युद्ध किये। जब अङ्गरेज आये तब उनकी अधीनता जिन ठाकुरों ने स्वीकार नहीं की, उनमें हम लोग भी थे। हमको जब दबाया गया, हम लोग बिगड़ खड़े हुये और डाके डालने लगे। मैं अपने लिये और अपने साथियों के लिये गङ्गा जी की शपथ लेकर कह सकता हूँ कि हम लोगों ने स्त्रियों और दीन दरिद्रों को कभी नहीं सताया।'

रानी ने कहा, 'इन दिनों जिन लोगों पर तुमने डाके डाले वे सब मेरी प्रजा हैं, अङ्गरेजों की नहीं। डाके के लिये दण्ड प्राणों का है, तैयार हो जाओ। तुम्हारे साथी भी न बचेंगे और न तुम्हारे और उनके घर। मिट्टी में मिलवा दूंगी।'

सागरसिंह ने कनखियों रानी को देखा। उसने इतनी बड़ी, ऐसी करारी और प्रभावपूर्ण आँखें न देखी थी। उसको ऐसा लगा साक्षात् दुर्गा सामने खड़ी है।

सागरसिंह बोला, 'सरकार, मैं कुछ प्रार्थना कर सकता हूँ ?'

रानी ने अनुमति दी।

सागरसिंह ने प्रार्थना की, 'मुझको प्राणदण्ड गोली या तलवार से दिया जाय, फाँसी से नहीं। यदि फाँसी दी गई तो मेरा और जाति भर का अपमान होगा। बाग़ी बढ़ जावेंगे, घटेंगे नहीं सरकार।'

रानी—'तुमको यदि छोड़ दूं तो क्या करोगे ?'

सागरसिंह—'श्रीमन्त सरकार के सामने झूठ नहीं बोलूंगा।' यदि काम न मिला तो फिर डाके डालूंगा परन्तु सरकार के राज्य में नहीं।'

रानी—'यदि मैं कहूं कि तुम डाके बिलकुल न डालो तो इसके बदल में क्या चाहोगे ?'

सागरसिंह—'सरकार के चरणों की नौकरी, जहाँ रह कर लड़ाई में कल की अपेक्षा अधिक पराक्रम दिखला सकूँगा ।'

रानी—'तुम्हारे साथी कितने हैं ?'

सागरसिंह—'जङ्गल में १५, १६ थे । गांवों में ६०, ६५ हैं और अदृष्ट सहायक मेरे सब नातेदार ।'

रानी—'वे लोग क्या करेंगे ?'

सागरसिंह—'सरकार की आज्ञा हुई तो सरकार की सेना में मेरे साथ नौकरी ।'

रानी—'यदि मैंने आज्ञा न दी तो ?'

सागरसिंह—'सरकार, के राज्य के सिवाय और सब जगह उनकी बग़ावत का अधिकार–क्षेत्र चाहूँगा ।'

रानी—'तुमको मैं इस समय छोड़ दूँ तो सीधे कहाँ जाओगे ?'

सागरसिंह—'सरकार, झाँसी ।'

रानी—'तुम सबसे बड़ी सौगन्ध किसकी मानते हो ?'

सागरसिंह—'गङ्गा जी की । सरकार के चरणों की, अपनी तलवार की ।'

रानी—'मैं तुमको छोड़ती हूं, सागरसिंह । सौगन्ध खाओ और अपने साथियों सहित झाँसी की सेना में भर्ती हो जाओ ।'

सागरसिंह ने सौगन्ध खाई । रानी ने उसको छोड़ दिया । वह उनके पैरों पर गिर पड़ा । हाथ जोड़कर बोला, 'सरकार मैं झाँसी चलूंगा । वहां सेना में भर्ती होने के उपरान्त घर लौटूंगा और अपने साथियों को बटोर कर झाँसी ले आऊँगा और उन सबको भर्ती कराऊँगा ।'

'नहीं सागरसिंह', रानी ने कहा, 'मैं बरवासागर तब छोड़ूंगी जब तुम्हारे सब साथी मेरे सामने आ जायें और सौगन्ध खा जायें। नहीं तो मैं उनको पकड़ूंगी और दण्ड दूंगी।'

'मेरा नाम कूंवर सागरसिंह नहीं, जो मैंने सरकार के सामने सबों को पेश न किया।' सागरसिंह ने दम्भ को दबाते हुये कहा।

आँख में झेंप थी।

रानी ज़रा हँसी। सोचने लगीं।

'बोली, 'तुमको कुँवर शब्द से सम्बोधन करने के पहले, मेरा एक और सामन्त इस पदवी के पाने का पात्र है। वही जो तुमको पकड़ने के लिये तुम्हारी हवेली में पहुंच गया था और जिसको तुमने घायल कर दिया था।'

'सरकार', सागरसिंह बोला, 'उस दिन यदि मैंने उस सामन्त को घायल न कर पाया होता तो मैं किसी प्रकार भी न बच पाता।'

रानी—'वह यहीं है। अभी अस्वस्थ है।'

सागरसिंह—'मैं उसके दर्शन करना चाहता हूं। क्षमा मागूंगा।'

रानी ने खुदाबख्श की कुशलवार्ता मंगवाई। वह एक सिपाही का सहारा लेकर आ गया। सागरसिंह ने उसको अभिवादन किया।

रानी ने कहा, 'क्या हाल है?'

खुदाबख्श ने उत्तर दिया, इतने बड़े स्वामी की रक्षा होते हुये हाल बुरा हो ही नहीं सकता। जिस समय सरकार के पराक्रम की बात मालूम हुई उसी समय दुःख-दर्द एक स्वप्न सा हो गया।'

रानी ने कहा, 'तुमने सुन लिया होगा कि मैंने अपराधी को छोड़ दिया है।'

खुदाबख्श बोला, 'मैंने सरकार की दया का सब हाल सुन लिया।'

रानी ने कहा, 'आज से तुम कुँवर खुदाबख्श कहलाओगे और यह कुँवर सागरसिंह। जितने लोग अनोखी शूरवीरी के काम करेंगे, वे सब

कुंवर कहलावेंगे और उनका वर्ग कुँवर मण्डली के नाम से राज्य के कागज पत्रों में सम्वोधित होगा।'

खुदाबख्श गद्गद् हो गया। पैर छुये और बोला, 'सरकार, कुंवर मण्डली का नाम सच्चा तब होगा जब क़दमों की सेवा करते हुये हम सबके सिर कटें।'

'रानी ने कहा, 'जाओ कुंवर खुदाबख्श, आराम करो।'

खुदाबख्श बोलो, 'माता का आशीर्वाद मिल गया अब आराम ही आराम है।'

'सागरसिंह', रानी ने कहा, 'तुम्हारा नाम हमारे कागजों में कुँवर युक्त लिखा जावेगा परन्तु मुझको वराबर कुँवर, राव, दीवान इत्यादि कहने में अड़चन जान पड़ती है। क्या बुरा मानोगे ?'

सागरसिंह का गला रुद्ध हो गया। जिस मनुष्य ने एक दीर्घ समय डकैती और बटमारी में बिताया था, उसको जान पड़ा मेरे भीतर कुछ पवित्र भी है।

हाथ जोड़कर बोला, 'नहीं सरकार, कभी नहीं। यदि मेरा आधा नाम ही लिया जावेगा तो बहुत है। मुझको क्षमा किया जाय।'

कुंवर रघुनाथसिंह ने कहा, 'जब हम लोग पूरे कुंवर की पदवी पर पहुंच जावेंगे तब हमारा नाम आधा लिया जावेगा।'

[३१]

बरुवासागर में रानी कुल पन्द्रह दिन रहीं। सागरसिंह का पूरा गिरोह हथियार डालकर की शरण में आ गया और सेना में भर्ती हो गया।

खुदाबख्श चङ्गा तो उसी दिन से हो गया था, अब स्वस्थ हो गया। रानी झांसी ससैन्य लौट आईं लोगों की छाती रानी के पराक्रम से उमड़ उठी।

नवाब अलीबहादुर रानी को बधाई देने आये। इत्रपान लेकर चले गये। कम से कम मोतीबाई को उनकी बधाई की सचाई से विश्वास नहीं था।

अलीबहादुर और पीरअली में सलाह हुई।

अलीबहादुर—'पीरअली, यह वही सागरसिंह है, जो झांसी की जेल तोड़कर भागा था। रानी ने उसको ही नहीं बल्कि उसके सारे गिरोही डाकुओं को, फौज में भर्ती कर लिया है। यह सब सरकार बहादुर के खिलाफ तैयारी का सबूत है।'

पीरअली—'और हुजूर तुर्रा यह कि उनके नये पुराने कामदार अँग्रेज सरकार को इस धोखे में रखना चाहते हैं कि झांसी का राज्य नवाब गवर्नर जनरल बहादुर की तरफ से किया जा रहा है!'

अलीबहादुर—'इसकी इत्तिला जबलपूर पहुंचना चाहिये, जैसे हो तैसे।'

पीरअली—'हुजूर का हुक्म हो तो मैं चला जाऊँ। मगर मेरे जाने से शक हो जावेगा।'

अलीबहादुर—'माल का सरिस्तेदार रानी के बुरे सलूक की वजह से नाराज है। वह इस काम के करने के लिये तैयार हो जावेगा। अगर जाये तो खर्चा मैं दूंगा।'

पीरअली—'मैं कहूंगा। वे मान जायेंगे। उनको टीकमगढ़ होकर भेजा जाय। वहां से दीवान नत्थेखां की चिट्ठी और उनके कुछ आदमियों को साथ लेते जावें, क्योंकि रास्ते में खतरा है।'

दूत टीकमगढ़ गया। टीकमगढ़ का राजा अल्पवयस्क था। नत्थेखां दीवान था। नत्थेखां ने झाँसी पर चढ़ाई करने का निश्चय किया और सेना लेकर झाँसी के निकट, राज्य की पुरानी राजधानी ओर्छा में आ गया। तीसरी सितम्बर को सवेरे ही उसने रानी के पास अपना दूत भेजा।

[३२]

नत्थेखाँ के दूत ने जो सन्देशा दिया, उसका सार यह था कि झांसी पहले ओर्छा का अन्श था, वह अनुचित प्रकार से ओर्छा से काट लिया गया। अब ओर्छा को वापिस मिलना चाहिये। अङ्गरेज जो पांच सहस्र मासिक वृत्ति रानी साहब को देते थे उन्हें ज्यों की त्यों मिलती रहेगी, किला नगर और शस्त्र हमारे हवाले कर दो।

नगर में समाचार फैलते देर न लगी। नई वस्ती से, जहां अलीवहादुर का निवास था, खबर फैली कि नत्थेखां फौज लेकर आ भी गया है शहर के चारों ओर घेरा पड़ गया है। लोग घबरा गये।

मोतीबाई ने रानी को समाचार दिया, 'नत्थेखां बीस सहस्र सेना और अनेक तोपें लेकर ओर्छा से कूच करने वाला है।'

रानी ने पूछा, 'वह ओरछे में आया कब ?'

'कल आया था', मोतीबाई ने उत्तर दिया।

रानी ने कर्मचारियों से विचार-विमर्श किया। झांसी में तैयारी न थी। कर्मचारी सब घबराहट में थे।

अकेली रानी धैर्य धारण किये थीं। उन्होंने कहा, 'राजनीति की आप लोग जानो। युद्ध का सञ्चालन मैं करती हूँ। नत्थेखां को भागने के लिये कठिनता से गली मिलेगी।'

नाना भोपटकर ने अनुरोध किया, 'सरकार विजय की मूर्ति हैं। हमको युद्ध के अन्तिम परिणाम के विषय में कोई सन्देह नहीं। यदि सरकार को मेरी राजनीति में विश्वास है, तो मेरी एक प्रार्थना मानी जाय।'

रानी ने स्वीकार किया।

भोपटकर ने कहा, 'हमारे यहां अङ्गरेजी झण्डा, यूनियन-जैक रक्खा हुआ है। अपने झण्डे के साथ हम उसको भी खड़ा करेंगे।

किले में जो अङ्गरेज़ बन्द हो गये थे उनमें से मार्टिन नाम का व्यक्ति, फौज वालों के हाथ से भाग निकला था। वह आगरा में है। एक चिट्ठी मैं उसको इस प्रकार लिखूंगा कि हम लोग नत्थेखां के विरुद्ध अंग्रेजों की ओर से लड़ रहे हैं। मेरी राजनीति को इस चिट्ठी से सहायता मिलेगी।'

रानी बोलीं, 'परन्तु यह राजनीति चलेगी कितने दिनों? हमको अन्त में, सारे देश में स्वराज्य स्थापित करना है। यूनियन जैक झण्डे के नीचे स्वराज्य की स्थापना असम्भव है। चिट्ठी चाहे जिसको मनमानी लिखो परन्तु झण्डा तो चिट्ठी से बहुत बड़ा होता है।'

'सरकार', भोपटकर ने कहा, 'चिट्ठी और झण्डे का सामञ्जस्य है। हम कुछ समय तक अपने आदर्श को ढका-मुंदा रखना चाहते हैं। यदि स्वराज्य का प्रयत्न देश भर में ३१ मई को एक साथ ही हो गया होता, तो राजनीति की दिशा कुछ और होती परन्तु अब उसमें परिवर्तन आवश्यक है।'

लालाभाऊ बख्शी बोला, 'सरकार देखने के दांत कुछ और, खाने के कुछ और। भोपटकर साहब का यही तात्पर्य है।'

रानी मुस्कराईं। दरबारियों ने समझ लिया कि उन्होंने कोई दृढ़ निश्चय कर लिया है।

'नाना की बात को मैं टाल नहीं सकती हूं', रानी ने कहा, 'परन्तु गेरुआ झण्डा सबसे ऊपर की बुर्ज पर रहेगा और अङ्गरेजों का झण्डा चाहे जहां, नीचे की बुर्ज पर लगा लो।'

मन्त्रिमण्डल ने स्वीकार किया।

रानी बोलीं, 'लालाभाऊ, तोपों का तुरन्त प्रबन्ध करो। जवाहरसिंह, रघुनाथसिंह इत्यादि को सावधान करो। सब फाटक बन्द कर के फाटकों की बुर्जों पर गोला बारूद इसी समय जमा करो। नत्थेखां कई ओर से आक्रमण करेगा। किले पर बड़ी तोपें चढ़ी हैं?'

भाऊ ने उत्तर दिया, 'सरकार, केवल कड़क बिजली नीचे रक्खी है। उसको अभी चढ़वाता हूं और सरकार की अन्य आज्ञाओं का पालन करता हूं। दीवान जवाहरसिंह यहीं हैं परन्तु दीवान रघुनाथसिंह उनाव की ओर गये हुये हैं !'

रानी—'तुरन्त बुलाओ।'

भाऊ—'जो आज्ञा सरकार।'

रानी—'बरवासागर वाला सागरसिंह कहां है ?'

भाऊ—'करेरा की ओर गये हुये हैं।'

रानी—वहां से बुलाओ। सेना हमारे पास बहुत थोड़ी है। यदि नत्थेखां वास्तव में २० सहस्र सेना लेकर आ रहा है, तो कर्रा सामना पड़ेगा परन्तु चिन्ता मत करो। हमारे पास किला है। बुर्जें और तोपें हैं और गोलन्दाज अच्छे हैं।

भाऊ—'गोलन्दाज हमारे पास कुछ कम हैं, परन्तु सरकार का जैसा आदेश होगा, उनकी वैसी ही नियुक्ति कर ली जावेगी।

रानी—'मैं कुछ स्त्रियों को तोपची का काम सिखलाना चाहती थी, अभी उनकी शिक्षा पूरी नहीं हो पाई है, इसलिये गुलाम गौसखां को ओर्छे दरवाजे के लिये तैयार रक्खो और तुम स्वयं किले की दक्षिणी बुर्ज पर कड़क बिजली चढ़ाकर काम करो। मैं अपनी स्त्री सेना को लेकर सब मोर्चों पर जवाहरसिंह की और गौस की सहायता करूंगी। बस्ती वालों से कह दो कि निश्चिन्त रहें परन्तु भीड़ बांधकर बाहर न चलें फिरें।'

भोपटकर ने मार्टिन के नाम एक पत्र आगरा भेजा और नीचे वाली बुर्ज पर यूनियन जैक झण्डा चढ़ा दिया।

ओर्छा के दूत को नत्थेखां के सन्देश का उत्तर दिया कि लक्ष्मीबाई एक स्त्री हैं, खांसाहब को अबला की रक्षा करनी चाहिये न कि उनके

साथ इस प्रकार का व्यवहार। रानी अङ्गरेजों की ओर से झांसी का प्रबन्ध कर रही हैं, ओर्छा अङ्गरेजों का मित्र राज्य है इसलिये ओर्छा की ओर से झांसी पर आक्रमण होना बिलकुल अनुचित है। यदि आक्रमण हुआ तो झांसी अपनी रक्षा करेगी।

दूत सन्देश का उत्तर लेकर तुरन्त चला गया।

रानी ने दीवान से कहा, 'मुझे खेद है कि झांसी के समग्र निवासी युद्ध विद्या में निपुण नहीं किये जा सके हैं। मैं नत्थेखां से निबट लूं तब अवश्य इस ओर अधिक ध्यान दूँगी।

उस दिन अनन्त-चतुर्दशी थी।

इसके उपरान्त वह अनन्त-चतुर्दशी की पूजा में संलग्न हो गईं।

जवाहरसिंह, कर्नल जमाँखां, भाऊ बख्शी, गुलाम गौसखाँ इत्यादि अपने काम में जोर के साथ जुट पड़े। उनके लिये एक एक क्षण महत्व का था। पाँच घण्टे के भीतर झांसी ने रणक्षेत्र का रूप धारण कर लिया।

तीसरे पहर लगभग ३ बजे रानी अनन्त-चतुर्दशी का पूजन समाप्त करने को ही थीं कि एक धड़ाका हुआ। दामोदरराव को अनन्त-रक्षा का गंडा बँधवा कर बाहर हुई थीं कि समाचार मिला 'नत्थेखां ने चढ़ाई कर दी है और गोला शायद शहर में गिरा है।'

रानी ने दिन भर उपवास किया था। थोड़ा फलाहार किया। इतने में समाचार आया कि टकसाल के पीछे एक सेठ के मकान में गोला गिरा है। रानी ने कल्पना की कि या तो नत्थेखां का गोलन्दाज अजान है, इतने वड़े किले को उसने अनी पर नहीं साध पाया, या काफी चतुर है—अनुमान से महल को निशाना बनाया परन्तु गोले ने करवट ले ली और महल को बचा गया।

योद्धा वेश में तुरन्त घोड़े पर सवार हुईं और अपनी तीनों सहेलियों को लेकर ओरछे दरवाजे पहुंचीं। गुलाम गौसखाँ को आज्ञा दी, 'शत्रु इसी ओर है। गोलों को लगातार वर्षा करो।'

काशीबाई से कहा, 'तू तुरन्त किले पर जा। बख्शी से कहना कि जैसे ही नत्थेखाँ की सेना टौरियों का आश्रय लेने के लिये पश्चिम में सैंयर फाटक की ओर बढ़े, कड़क-बिजली की मार करें जब तक उसकी सेना ओर्छा फाटक से पश्चिम की ओर न बढ़े, कड़क-बिजली चुप बनी रहे।

काशीबाई तुरन्त गई।

गौस ने अपने तापखाने को सम्भाला। एक के बाद दूसरी तोप पर पलीता पड़ना शुरू हुआ। ११ तोपें थीं। जब तक अन्तिम तोप गोला उगलती तब तक पहली विनाश-वमन के लिये तैयार हो जाती।

गोला-बारूद और काम करने वाले सुव्यवस्थित।

ओर्छा फाटक से पूर्व उत्तर की ओर थोड़ी दूरी पर सागर खिड़की और उससे कुछ अधिक दूरी पर लक्ष्मी फाटक था। सुन्दर और मुन्दर के साथ रानी सागर खिड़की पर आईं। इस खिड़की से पश्चिम की ओर ओर्छा फाटक की तरफ—कुछ ही डग फासले पर एक मुहरी थी। नगर के दक्षिण भाग के पानी का वहाव इसी में होकर था। यह मुहरी इतनी बड़ी थी कि नाटे कद का आदमी आसानी से होकर निकल सकता था। सागर खिड़की के ऊपर जो तोपें थीं, उनमें से एक को रानी ने, इस मुहरी के ऊपर दीवार के पीछे लगा दिया। एक से अधिक तोप वहाँ रक्खी भी नहीं जा सकती थी।

सागर खिड़की पर दीवान दूल्हाजू गोलन्दाज था। उसको रानी ने आदेश दिया, 'तुम पश्चिम-दक्षिण की ओर कुछ अन्तर से गोला दागो। कोई दिखलाई पड़े या नहीं परन्तु जब तक मेरा निषेध न मिले, ऐसा ही करते जाना।'

दूल्हाजू जरा ठमठमाया।

रानी ने समझाया, 'मैं चाहती हूं कि नत्थेखां की सेना और तोपें दक्षिण की ओर ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक के बीच में ही बनी

रहें। तुम्हारे पास से होकर पूर्व और उत्तर की ओर न बढ़ने पावें। मैं जहां चाहती हूँ, युद्ध वहीं हो। समझ गये।'

दूल्हाजू ने कहा, 'हाँ सरकार।'

इसी प्रकार सब फाटकों पर आवश्यक आज्ञा देकर रानी ओर्छा फाटक पर फिर आ गईं। नत्थेखां की सेना मार खाकर पीछे हटी परन्तु टौरिया पर नहीं चढ़ी। उनके बीच में जो खाइयां थीं, उनमें रक्षा का यत्न करने लगीं।

इतने में रात हो गई। रानी मुन्दर को वहीं छोड़कर महल चली आईं, गीता के अठारहवें अध्याय का पारायण या श्रवण वह यथासम्भव नित्य करती थी। पाठ समाप्त करके आधी घड़ी विश्राम किया था कि मुन्दर ने समाचार दिया—'नत्थेखां ने नगर कोट पर चारों ओर से आक्रमण किया है, ओर्छा फाटक पर आक्रमण सबसे अधिक भयङ्कर है।'

रानी सहेलियों समेत सवार होकर तुरन्त ओर्छा फाटक पर पहुंचीं।

चाँदनी रात। आकाश निर्मल। पास का काफी अच्छा दिखलाई पड़ रहा था और दूर का धूमरा-धूमरा। सागर खिड़की पर गोले बरस रहे थे और ओर्छा—फाटक तो ऐसा जान पड़ता था कि अब गया, अब गया।

रानी ने गुलाम ग़ौस और उसके तोपचियों को समझाया, दो बाढ़ें जल्दी-जल्दी दाग कर बिलकुल चुप हो जाओ। वैरी समझेगा कि तोपें बन्द करलीं। बढ़ेगा। बढ़ते ही दीवार के छेदों में से बन्दूकों की बाढ़ दागी जाय। वैरी अपनी तोपें ऊँची टौरियों पर चढ़ा कर ले जावेगा और वहां से फाटक और बुर्ज को धुस्स करने का उपाय करेगा। उस समय तोपें दागना।

काशीबाई से कहा, 'तुम भाऊ बख्शी से किले में जाकर कहो कि कड़क बिजली के प्रयोग का समय आ गया। जैसे ही ओर्छा फाटक की हमारी तोपें बन्द हों और अपनी बन्दूकों की बाढ़ के उपरान्त शत्रु के

तोपखाने से बाढ़ दगे वह कड़कबिजली और उसी बुर्ज के तोपखाने से ओर्छा-फाटक के बाहर की दाईं ओर वाली ऊँची टौरिया को अपना अचूक निशाना बनावे और अनवरत गोलाबारी करे।'

काशीबाई सम्वाद लेकर गई।

रानी ने मुन्दर और सुन्दर को कुछ हिदायतें देकर दूसरी दिशाओं में भेजा।

गुलामगौस ने अपनी तोपों से जल्दी-जल्दी दो बाढ़ें छोड़ीं। नत्थेखां की सेना ने जवाब दिया। गौस की तोपें बिलकुल बन्द हो गईं। नत्थेखां ने सोचा तोपची मारे गये। उसके सिपाही दीवार पर चढ़ने के लिये बढ़े इधर से बन्दूकों की बाढ़ दगी। तब उसका कोई बड़ा असर नहीं हुआ। जब बाढ़ों पर बाढ़ें दगीं उसके सिपाही पीछे हटे। नत्थेखां ने निश्चय किया कि ऊँची टौरिया पर तोपखाना चढ़ाकर ओर्छा-फाटक और अगल-बगल की दीवारों पर गोलाबारी करने से शहर के लिये मार्ग मिल जायगा और फिर किले को अधिकृत कर लेना सहज हो जायगा। सागर खिड़की की ओर से बराबर गोलाबारी हो रही थी और उसका एक तोपखाना उस ओर मोर्चा लगाये था। ओर्छा-फाटक की तोपें बन्द थीं, इसलिये उसको अपना यही उपाय महाफलदायक जान पड़ा।

उसने ऊँची टौरिया पर अपनी तोपें चढ़ा दीं और फाटक पर बाढ़ दागी। दीवारों पर उस बाढ़ का विनाशकारी प्रभाव पड़ा। तोपची उकता उठे। रानी ने वर्जित किया।

नत्थेखां की तोपों से दूसरी बाढ़ नहीं दगने पाई। टौरिया पर धम धम हुआ और विकट चीत्कार और तुरन्त किले से चली हुई तोपों का भयंकर गर्जन-तर्जन सुनाई पड़ा। भाऊ का निशाना अचूक बैठा। फिर बाढ़ आई। इधर रानी ने गुलामगौस को अपनी तोपों पर पलीता देने की आज्ञा दी।

अब नत्थेखां को मालूम हुआ कि किसका सामना कर रहा हूँ।

उसने स्थिति को संभालने का प्रयत्न किया परन्तु कुछ न बन पड़ा। तोपों और सामान को छोड़कर नत्थेखां भागा। वह केवल एक दाग लगा गया—लक्ष्मी-फाटक पर कर्नल जमांखां मारा गया।

रात को लड़ाई बहुत धीमी गति से चली। परन्तु रानी की सावधानी में रत्ती भर भी अन्तर नहीं आया।

दूसरे दिन भी लड़ाई चली परन्तु शहर से जरा हटकर। नत्थेखां की सेना का एक बड़ा भाग झांसी के उत्तर में जाकर प्रतापमिश्र के परकोट की आड़ पा गया परन्तु यही उसके नाश का कारण हुआ।

दीवान रघुनाथसिंह एक दूर गांव में था, इसलिये विलम्ब से समाचार मिला था। वह लड़ाई के दूसरे दिन उनाव की ओर से, जो झांसी के उत्तर में है, आ गया। फाटक सब बन्द थे। खुलवाने की जरूरत भी न थी। उसने नत्थेखां की सेना की उस टुकड़ी पर जोर के साथ हमला किया, जो प्रताप मिश्र के परकोट से झांसी के उत्तरी भाग को परेशानी में डाले थे। इस परकोट के करीब एक पहाड़ी है। इस पहाड़ी की ओर से रघुनाथसिंह और नगरकोट के पीछे से झांसी की सेना की बन्दूकों ने नत्थेखां की सेना को छलनी कर दिया। ठीक अवसर पाकर रघुनाथसिंह ने प्रचण्ड वेग के साथ प्रहार किया और उस टुकड़ी को तहस-नहस कर डाला।

फिर कई दिन तक झांसी से जरा दूर नत्थेखाँ की सेना की छोटी-बड़ी टुकड़ियां भागते-भागते लड़ती रहीं; परन्तु तोपें और बहुत सी युद्ध-सामग्री छोड़कर नत्थेखां को पराजित होकर भागना पड़ा।

नत्थेखां एक टुकड़ी समेत नवाब अलीबहादुर के नईबस्ती वाले महल में आ गया था। नवाब अलीबहादुर नहीं चाहते थे परन्तु विवश थे।

नत्थेखां के भागने पर उनके महल पर एक दस्ते ने आक्रमण किया। अलीबहादुर ने समझ लिया कि सब गया। बच निकलने का प्रयत्न किया। उनके महल के पीछे बहुत निचाई पर मेंहदीबाग नाम का उद्यान

था। एक सुरङ्ग में होकर इस बगीचे से निकल जाने का मार्ग था। जवाहर इत्यादि जितना सामान बना लेकर पीरअली के साथ बाहर निकल आये। बालबच्चे और नौकर भी।

सुरक्षित स्थान में पहुँचने पर पीरअली ने कहा, 'आप अकेले भांडेर चले जाइये। मैं यहीं रहूँगा, रानी की सेना के साथ मिलकर न भी हमला करूँगा। उनका भला बन जाऊँ और महल में जो कुछ बचाने योग्य है, बचाने की कोशिश करूँगा। यहां रहकर आपकी अधिक सेवा कर सकूँगा।'

'किस तरह ?' अलीबहादुर ने आतुरता के साथ पूछा।

पीरअली ने उत्तर दिया, 'आपको समय-समय पर समाचार मिलता रहेगा और जब अङ्गरेज यहां रानी से लड़ने के लिये आवेंगे तब उनको आपके सेवक के द्वारा बड़ी सहायता मिलेगी। आप फिर झांसी आवेंगे। फिर महल आपके होंगे और कोई बड़ी जागीर भी कम्पनी सरकार की तरफ से आपको मिलेगी क्योंकि रानी का राज थोड़े दिन ही और टिकेगा। इस वक्त तो खून का घूंट पीकर रह जाइये। अपमान का बदला लिया जायगा, आप प्रतीत रखिये।'

अलीबहादुर चले गये। पीरअली रानी के सैनिकों की ओर लौट पड़ा। उसको सैनिक पहिचानते थे। वे मारने-पकड़ने को दौड़े। सागरसिंह उस भीड़ में था।

पीरअली ने कहा, 'क्या करते हो, मैं तुम्हारा मित्र हूं। महारानी साहब का शुभचिन्तक। बस्ती भर जानती है। नौकरी नवाब साहब की जरूर करता रहा हूँ परन्तु सदा उनको समझाता रहा कि सीधे रास्ते पर चलो। वे नहीं माने उन्होंने भुगता। मैं तुम्हारी सहायता करने आया हूँ। यह महल गोला-गोली लायक नहीं है। इसमें आग लगाओ।

सैनिकों को कुछ आश्वासन हुआ।

सागरसिंह ने पूछा, 'किधर से आग लगायें ? नवाब साहब कहां हैं ?'

'भीतर,' पीरअली ने उत्तर दिया, 'आग फाटक से लगाना शुरू करो। दरवाजा अपने आप खुल जायगा। भीतर काफी माल है। मुझको सब पता है। राई-रत्ती बतलाऊँगा।'

सिपाहियों ने फाटक में आग लगा दी। जल जाने पर घुसने का मार्ग मिल गया। फिर भीतर के फाटकों में आग लगाई। एक-दो जगह और। पीरअली ने स्वयं कई जगह अग्नि प्रज्वलित की। जब भीतर पहुंचे तो वहाँ कोई न मिला।

'मालूम होता है गड़बड़ में नवाब साहब निकल भागे। मगर असबाब सामान तो मौजूद है।'

पीरअली ने उनकी साधारण धन-सम्पत्ति लुटवा दी। थोड़ी देर में आग शान्त हो गई परन्तु काफी क्षति हो गई थी।

पीरअली का नाम हो गया कि रानी की सेना के साथ वह नवाब साहब और नत्थेखां की फौज के खिलाफ लड़ा। काशीनाथ और सागर-सिह ने विश्वास दिलाया। मोतीबाई को आश्चर्य था। परन्तु विजय के हर्ष में अपने हितचिन्तक पर सन्देह करना ईश्वर के प्रति कृतज्ञता की मात्रा को कम करना था। इसलिये पीरअली शीघ्र विश्वासपात्र लोगों की गिनती में मान लिया गया।

रानी ने गुलाम गौसखां, रघुनाथसिंह और भाऊ बख्शी को विशेष तौर पर पुरस्कृत किया।

[३३]

मङ्गल और शुक्र के दिन रानी, महारानी के मन्दिर में जाया करती थीं जो लक्ष्मी-फाटक के बाहर, लक्ष्मीताल के ऊपर है। कभी पालकी में, कभी साड़ी पहनकर, कभी पुरुष वेष में—सुन्दर साफा बांधे हुये। कभी बिलकुल अकेली और कभी धूमधाम के साथ। जब पालकी पर जातीं कुछ स्त्रियां अलङ्कारों से लदी, लाल मखमली जूते पहिने। परतले में पिस्तौल लटकाये, पालकी का पाया पकड़े साथ दौड़ती जाती थीं। पालकी के आगे सवार गेरुआ झण्डा फहराता हुआ चलता था। उसके आगे सौ घुड़सवार।

मार्ग में विनती भी सुनती थीं।

एक दिन एक भिक्षुक ब्राह्मण आ खड़ा हुआ। काशी से आया था। पत्नी मर गई थी। दूसरा विवाह करना चाहता था। दरिद्र होने के कारण लड़की वाला विवाह करने को तैयार न था। चार सौ रुपये की अटक थी।

उन्हीं दिनो कुंअर मण्डली में एक नया व्यक्ति भर्ती हुआ था। नाम रामचन्द्र देशमुख। देशमुख को आज्ञा दी, 'खजाने से इस ब्राह्मण को पांच सौ रुपया दिलवा दो।'

देशमुख ने कहा, 'जो हुकम।'

ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया।

रानी ने ब्राह्मण से मुस्कराकर कहा, 'विवाह के समय मुझको न्योता देना न भूल जाना।'

ब्राह्मण गद्गद् हो गया। आंखों से आंसू वह पड़े। मुंह से एक शब्द भी न निकला। साथियों में, सहेलियों में, जनता में, ब्राह्मणों में, अब्राह्मणों में किस वेग के साथ यह बात फैल गई।

ऐसी रानी के लिये, ऐसी रानी की बात के लिये, ऐसी स्त्री के सिद्धान्त के लिये, क्यों न लोग सहज ही प्राण दे डालने को सन्नद्ध होते ?

दूसरे दिन रानी ने दीवान खास में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह को बुलवाया। रानी कार्य की प्रगति को और तेज करना चाहती थी।

रानी—'तोपें ऐसी ढल रही हैं न, जो पीछे धक्का न दें और जल्दी गरम न हों ?

जवाहरसिंह—'हां सरकार, बख्शी जी और उनके कारीगर इस विद्या में निपुण हैं।'

रानी—'बारूद ?'

रघुनाथसिंह—'तीन महीने की लड़ाई के लिये तैयार है। आज से कुँवर खुदाबख्श ने और भी तेजी पकड़ी है।'

रानी—'अच्छी बन्दूकें और तलवारें भी बहुत संख्या में चाहिये।'

जवाहरसिंह—'बन गई हैं और बन रही हैं।'

रानी—'गोले ?'

जवाहरसिंह—'भाऊ बख्शी आध सेर से लेकर पैंसठ सेर तक के गोले तैयार कर हैं। ठोस और पोले–फटने वाले भी।'

रानी—'मैं चाहती हूँ कि इन सब हथियारों के चलाने वाले भी अधिकता से तैयार किये जावें।'

जवाहरसिंह—'जनता में बहुत उत्साह है। ऊँची नीची सब जातियां युद्ध की उमङ्ग से उमड़ रही है।'

रानी—'सबसे अधिक किन लोगों में उत्साह है ?'

जवाहरसिंह—'सरकार यह बतलाना कठिन है। ठाकुरों और पठानों में तो स्वाभाविक ही है। कोरियों, तेलियों और काछियों में भी बहुत उमंग है। बनिये और ब्राह्मण भी पीछे नहीं हैं।

रानी—'क्या शास्त्रीयों में भी ?'

जवाहरसिंह—'वे भी तो झांसी के ही हैं परन्तु उनको जब शास्त्र और पूजन से अवकाश मिलता है तब।'

रानी चुप रहीं। थोड़ी देर बाद बोलीं, 'मैं चाहती हूं कि सब जातियों के चुने हुये लोगों को, तोप बन्दूक का चलाना सिखलाया जावे।'

जवाहरसिंह ने बहुत उत्साह बिना दिखलाये कहा, 'यह काम जारी है सरकार।'

रानी—'मैं अपनी सहेलियों और कुछ अन्य स्त्रियों को, बहुत अच्छा गोलन्दाज़ बनाना चाहती हूँ।'

रघुनाथसिंह—'आज्ञा मिल गई है। उसके अनुसार काम किया जायगा अवश्य।'

रानी—'किले में अन्न इत्यादि भी काफी जमा कर लो। कुछ ठीक नहीं कब घेरा पड़ जाय।'

जवाहरसिंह—'काफी अन्न एकत्र किया जा रहा है और शीघ्र ही किले में कमठाने में जमा कर लिया जावेगा।'

रानी—'चूना, ईंट, पत्थर भी इकट्ठा कर रखना। कारीगर भी हाथ में रहें।'

जवाहरसिंह—'जो आज्ञा।'

रानी—'सेना का और युद्ध का कोई भी अङ्ग निर्बल न रहने पावे।'

[३४]

उत्तर और पूर्व में अङ्गरेजों की विजय पराजय का क्रम चालू था। लखनऊ के पतन के उपरांत उसका फिर उत्थान हुआ। शहर में, बगीचों-बारहदरियों में, महलों में युद्ध होता रहा। कानपून के सूत्र को तात्या टोपे ने फिर पकड़ा। वह ग्वालियर गया और वहां की अङ्गरेजी-हिन्दुस्थानी सेना को फोड़ कर अपने साथ ले आया और उसने अङ्गरेजों के जनरल विढम को हराया। परन्तु अङ्गरेज सत्तर सहस्र गोरी सेना, नौ सहस्र गोरखों और बहु संख्यक सिक्खों का एक दल लेकर लखनऊ पर पहुँच गये। विप्लवकारियों ने बहुत करारे युद्ध किये। उत्तर और पूर्व के युद्धों में तात्या टोपे ने वहुत भाग लिया। अन्त में जव बिठूर मिट गया और कानपूर अन्तिम वार अङ्गरेजों की अधीनता में चला गया तव तात्या कालपी के आसपास से युद्ध करने लगा।

जनरल रोज ने जो उस युद्ध का सर्वश्रेष्ठ अंग्रेज जनरल था, अपनी सेना के दो भाग किये। एक उसने मऊ छावनी की ओर भेजा और दूसरे को लेकर सागर की ओर वढ़ा। राहतगढ़ सागर से चौबीस मील के फासले पर था। यहां से पठान, जनरल रोज का मुकाविला कर रहे थे। चार दिन घनघोर युद्ध करने के बाद पठानों को किला छोड़ना पड़ा।

नर्मदा के उत्तरी किनारे का अधिकाँश भूखण्ड विप्लवकारियों के हाथ में था। इसको अपने हाथ में किये बिना जनरल रोज झांसी की ओर नहीं वढ़ सकता था। सागर और झांसी के वीच में वानपूर का राजा मर्दनसिंह और शाहगढ़ का राजा वखतवली लोहा लेने को तैयार थे।

अङ्गरेजों का प्रधान सेनापति सर कालिन कैम्वेल था। वह उत्तराखण्ड के विप्लव के दमन में संलग्न था। उसका मत था कि जब तक झाँसी नहीं कुचली जाती, तव तक उत्तराखंड हाथ नहीं आता। इसलिये रोज सागर के द्वार से झांसी की ओर आ रहा था। बीच में ऊबड़-

खावड़ भूमि और ऊबड़-खावड़ लड़ाकू जनसमूह। परन्तु रोज इत्यादि अंग्रेज जनरलों को विश्वास था—जहां विप्लवकारियों के नेता राजा, नवाब, जागीरदार मारे गये तहीं विप्लव समाप्त हो जायगा।

परन्तु जगह-जगह विप्लवकारियों के सशस्त्र दल बिखरे हुये थे। इनका दमन करने के लिये रोज ने अपनी सेना के कई भाग किये और उनको भिन्न-भिन्न दिशाओं में भेजा। वह स्वयं सेना के एक बड़े भाग के साथ झांसी के नारहट की घाटी की ओर आया। उसकी सेना का एक भाग शाहगढ़ के राजा बखतबली का मुकाबिला करने के लिये गया। वहां देखा तो बखतबली काफी बड़ी सेना लिये हुये मौजूद है। नारहट घाटी पर मर्दनसिंह की भी सेना बहुसंख्यक थी। रोज अपनी सेना लेकर मदनपूर घाटी की ओर बढ़ा। मर्दनसिंह ने भी उसी ओर बाग मोड़ी। रोज चाहता था कि बखतबली और मर्दनसिंह मिलने न पावें, इसलिये उसने सेना का एक भाग मर्दनसिंह को अटकाने के लिये नारहट घाटी की ओर लौटाया और स्वयं मदनपूर की ओर चल दिया। मदनपूर उस स्थल से पूर्व दक्षिण की ओर लगभग २० मील था।

मर्दनसिंह रोज की इस चाल को न समझ सका और वह मदनपूर की ओर न बढ़कर नारहट घाटी पर लौट आया।

बखतबली के साथ रोज का घोर युद्ध हुआ। दो पहाड़ों के बीच में मदनपूर का गांव और झील है। इस सुहानी झील के पास ही वह भयंकर संग्राम हुआ था। बहुत अंग्रेजी सेना मारी गई। खुद रोज घायल हुआ परन्तु वह लड़ाई जीत गया। यदि मर्दनसिंह और बखतबली की सेनाओं का मेल हो गया होता तो रोज की पराजय निश्चित थी—मदनपूर की झील में रोज के सेनापतित्व का अन्तिम इतिहास उसी दिन लिख गया होता।

बखतबली के अनेक सरदार पकड़े गये और मार डाले गये। बखतबली की पराजय का हाल सुनकर मर्दनसिंह नारहट घाटी के

छोड़कर भागा। रोज ने अपनी सेना के भिन्न-भिन्न टुकड़ों को आदेश दिया कि विप्लवकारियों का पीछा करते हुये वे उसको झाँसी के निकट मिलें।

[३५]

बानपुर के राजा मर्दनसिंह ने मदनपूर की पराजय और नरसंहार का वृत्तान्त झांसी भेजा। झाँसी में और राज्य के बड़े-बड़े नगरों और ग्रामों में, जहां-जहां गढ़ और किले थे, तैयारी शुरू हो गई।

उन्हीं दिनों ग्वालियर से झांसी में एक नाटकमण्डली आई।

मुन्दर ने अनुनय पूर्वक कहा, 'सरकार, लड़ाई के आरम्भ होने के पहले एकाध खेल अपनी नाटकशाला में भी हो जाने की अनुमति दी जाय।'

'यह समय नाटक और तमाशों का नहीं है,' रानी मिठास के साथ बोलीं।

सुन्दर ने अनुरोध किया, 'मैं लड़ाई में मारी गई तो फिर कब नाटक देखूंगी ?'

रानी ने हँसकर कहा, 'दूसरे जन्म में। उसी समय तुमको स्वराज्य स्थापित किया हुआ मिलेगा।'

काशीबाई ने आग्रह किया, 'केवल एक खेल सरकार और फिर हम लोग जो खेल खेलेंगीं, उसको स्वराज्य वाले सदा स्मरण किया करेंगे।'

'युद्ध वास्तव में है ही किस निमित्त ?' रानी मुस्कराकर बोलीं, 'अपने जीवन और धर्म की रक्षा के लिये, अपनी संस्कृति और अपनी कला को बचाने के लिये नहीं तो युद्ध एक व्यर्थ का रक्तपात ही है। यह खेल जल्दी हो जायें और फिर उस खेल को ऐसा खेलो कि अङ्गरेजों के छक्के छूट जायें और यह देश उनकी फांस से मुक्त हो जाय।'

मुन्दर ने हर्ष में कहा, 'सरकार, खेल मराठी में होगा।'

रानी बोलीं—'झांसी में मराठी ! महाराष्ट्र यहां बड़ी संख्या में है यह ठीक है और वे लोग अपने मनोरञ्जन के लिये मराठी में नाटक खिलावायें परन्तु वह नाटकमण्डली राज्य का आश्रय तभी पावेगी जब

नाटक हिन्दी में खेले। अवश्य मेरा जन्म महाराष्ट्र कुल में हुआ है परन्तु मैं अपने को महाराष्ट्र न समझ कर विन्ध्यखण्डी समझती हूं। मेरी झांसी की भाषा हिन्दी है। नाटक यदि हिन्दी में हो तो हो, नहीं तो मुझको कोई सरोकार न होगा। मेरा निश्चय है।'

सहेलियों ने स्वीकार कर लिया।

नाटकमंडली वालों से कहा गया। उनमें थोड़े अभिनेता ही हिन्दी जानते थे उनकी यह कठिनाई दूर कर दी गई। झांसी के हिन्दी जानने वाले अभिनेता शामिल कर लिये गये। उस मंडली ने हरिश्चन्द्र का अभिनय उत्कृष्टता के साथ किया। मोतीबाई इत्यादि जानकारों तक ने सराहना की। रानी ने मण्डली के प्रवन्धक को चार सहस्र रुपया पुरस्कार दिया। मण्डली ग्वालियर चली गई।

रानी ललित कलाओं की प्रबल पोषक थीं। उस कठिन और चिन्ताकुल समय में भी रानी प्रत्येक नवागन्तुक गायक, बीनकार, सितारिये इत्यादि को सुनने के लिये थोड़ा बहुत समय दिया करती थीं और उचित पुरस्कार भी। कवि, चित्रकार, शिल्पी कोई भी उन्मुख नहीं जाता था। शास्त्री, याज्ञिक, ज्योतिषी, वैद्य, हकीम इत्यादि भी पोषण पाते थे। अपनी इसी वृत्ति को वे स्वराज्य में विकसित और प्रसरित देखना चाहती थीं।

पीरअली देर-सवेर सब महत्वपूर्ण समाचार नवाब अलीबहादुर के पास बड़ी सावधानी के साथ भेजता रहता था। झांसी छोड़ने के कुछ दिनों बाद वे घूमते-घामते दतिया पहुंचे। वहां थोड़े समय रहकर भांडेर पहुँच गये। झांसी से दतिया १७ मील और भांडेर चौबीस।

नवाब अलीबहादुर उन स्थानों से अङ्गरेजों को काम के समाचार भेजते रहते थे। रोज इत्यादि अङ्गरेज जनरल झांसी को अधिकृत करने के महत्व को जानते थे। उन लोगों को नवाब से निरर्थक और सार्थक—सभी तरह के—हाल समय-समय पर मिलते रहते थे। मदनपुर युद्ध के पश्चात् झांसी रोज का प्रथम लक्ष्य और पहला कर्तव्य बनी।

अस्त

(क्या सचमुच ?)

[३६]

मदनपूर की लड़ाई जीतने के बाद रोज की सेना ने शाहगढ़ को अधिकार में किया। फिर मड़ावरा की गढ़ी को कब्जे में करने के उपरान्त बानपूर राज्य को अङ्गरेज़ी राज्य में मिला लिया। बानपूर के महल के कुछ भाग को तोप से उड़ा दिया, बाकी को जला दिया और इन दोनों राज्यों के बड़े कर्मचारियों को फांसी पर चढ़ा दिया। इन महलों में पुस्तकों और चित्रों का भी संग्रह था परन्तु विप्लवकारियों की सम्पत्ति होने के कारण वे अस्पृश्य हो गये थे।

वध और अग्नि बरसाती हुई, रोज की सेना १२ मार्च सन् १८५८ को तालबेहट आ पहुंची। तालबेहट का प्राचीन दृढ़ क़िला लड़ाई के लिये उपयुक्त था परन्तु उसमें विप्लवकारी बहुत थोड़ी संख्या में थे और उनका नायक कोई बड़ा आदमी न था। मुक़ाबिले में रोज सरीखा चतुर और विजय प्राप्त सेनापति तथा अङ्गरेजों की विशाल सेना और तोपें। विप्लवकारी भाग गये और रोज़ ने तालबेहट का किला सहज ही अधिकार में कर लिया। चन्देरी में बानपूर के राजा का दस्ता था। रोज़ ने सोचा बग़ल के इस काँटे को पहले निकाल डालना चाहिये। उसने चन्देरी पर हमला करने के लिये अपने एक अफ़सर, ब्रिग्रेडियर स्टुअर्ट को भेजा। स्टुअर्ट ने बिना किसी कठिनाई के चन्देरी को पराजित कर दिया।

झांसी की पूर्वी तहसील मऊ में एक छोटा सा गढ़ था। इस गढ़ में रानी की ओर से काशीनाथ भैया और आनन्दराय इत्यादि छोटे—छोटे जागीरदार तैयार कर चुके थे। मऊ के दमन के लिये रोज ने बानपूर विध्वंस के बाद अपना एक दस्ता सीधा भेज दिया था। रोज ने झांसी पर चढ़ाई करने के पहले रानी लक्ष्मीबाई के पास सम्वाद भेजा—

'आप अपने दीवान लक्ष्मणराव, लालाभाऊ बख्शी, मोरोपन्त ताम्बे (आपके पिता), नाना भोपटकर, दीवान जवाहरसिंह, दीवान रघुनाथसिंह, कुंवर खुदाबख्श और मोतीसाईं के साथ निश्शस्त्र चली आवें अन्यथा कठोर और भयङ्कर परिणाम के लिये तैयार रहें।'

इस प्रकार के सम्वाद के लिये रानी तैयार थीं परन्तु जिस मोतीसाईं को जनरल रोज चाहते थे, उसके स्मरण से रानी के दीवान खास में हँसी का तूफान खड़ा हो गया।

'नाना सहाब,' रानी ने हँसी को रोक कर कहा, 'इस मोतीसाईं को कहां से पकड़ बुलाऊँ?'

नाना भोपटकर ने कहा, 'सरकार के यहां यदि बनावट चलती होती और जाली सिक्के ढलते होते तो किसी न किसी को साईं का चोगा पहिना दिया जाता।'

मोतीबाई दीवान खास में मौजूद थी। झुंझलाई हुई सूरत बना कर बोली, 'सरकार, दूत को बुलाकर पूछा जाय कि मोतीसाईं किस हुलिया का आदमी है।'

मोरोपन्त ने कहा, 'उसके लम्बी दाढ़ी होगी, बड़े-बड़े केश और खूनी आंखें। साइयों और साधुओं ने अंगरेजी फौज के भड़काने में ज्यादा भाग लिया है, इसलिये रोज को एक साईं भी चाहिये।

दीवान लक्ष्मणराव गम्भीर होकर बोला, 'सरकार, उत्तर जल्दी भेज दिया जाना चाहिये। दूत को शीघ्र लौटाना है क्योंकि उसको कोई भी अपने घर नहीं ठहराना चाहेगा।'

भाऊबख्शी ने कहा, 'और रोज यहाँ से बहुत दूर भी नहीं है। शायद दूत के पीछे-पीछे आ रहा हो।'

मोतीबाई ने पूछा, 'और यह मोतीसाईं कौन सी बला है ? इसका क्या उत्तर होगा ?'

रानी ने हँसी को दबा कर कहा, 'मैं बतलाऊँगी।'

लक्ष्मणराव फिर बोला, 'क्या उत्तर दिया जाय ?'

रानी ने और भी अधिक गम्भीर होकर कहा, 'मैं अकेली उत्तर देने वाली कौन हूं ? झाँसी के समग्र मुखियों को, सब जातियों के पञ्चों को जोड़ो। अपने सब सरदार इस समय झांसी में ही हैं। वे सब और आप लोग एक मत होकर कह दें तो मैं अकेली निश्शस्त्र चली जाऊँगी।'

वाक्य समाप्त होते-होते रानी ने श्वास और उच्छ्वास लिये और किसी उखड़ते हुये भाव का कठिनता के साथ, कठोरता के साथ नियन्त्रण किया।

तुरन्त झांसी के मुखिया, पञ्च, सरदार इत्यादि इकट्ठे किये गये। जो कुछ उन लोगों ने कहा उसमें महत्व की बातें ये थीं।

'लड़ेंगे। अपनी झांसी के लिये, अपनी रानी के लिये, मरेंगे।'

'हमारे पास जितना रुपया और आभूषण है, सब स्वराज्य की लड़ाई के लिये, रानी के हाथ सङ्कल्प है।'

जनमत रानी के मत से मिला हुआ था ही, इस समय बहुत प्रबल हो गया। परन्तु रानी ने झांसी की हुङ्कार को, वीणा की टङ्कार में परिवर्तित करके भेजा। उन्होंने लिखा—

'मिलने के लिये क्यों बुलाया, इसका ब्योरा आपने कुछ नहीं दिया। मिलाप के पद में मुझे धोखा दिखलाई पड़ता है। मैं स्त्री हूँ। निश्शस्त्र

कैसे आ सकती हूं ? राज्य के दीवान और बख्शी ससैन्य आ सकते हैं ।'
रानी ने इस चिट्ठी पर अपने हस्ताक्षर किये ।

भोपटकर से कहा, 'आपकी नीति का क्या फल हुआ ?'

उसने उत्तर दिया, 'यही कि अङ्गरेज लोग बिना सूचना के झांसी पर नहीं चढ़ दौड़े ।'

'मार्टिन को चिट्ठी लिखी थी ?'

'हां सरकार । उसने जवलपूर के कमिश्नर को और इस जनरल को अवश्य कुछ लिखा होगा ।'

'फल ?'

'कुछ समय मिल गया, यही बहुत है ।'

'दूत को रानी की चिट्ठी दे दी गई । दूत गया । उसने प्रस्थान न कर पाया होगा कि पीरअली ने रानी के पास सन्देशा भेजा, 'सरकार की आज्ञा हो तो मैं अङ्गरेज छावनी की खबर ले आऊँ कि कितनी और कैसी सेना है तथा कितनी तोपें हैं और वे लोग किस ढङ्ग से झांसी पर आक्रमण करेंगे ।'

मोतीबाई ने इन बातों का पता लगाने का सामर्थ्य तो प्रकट किया परन्तु पीरअली के भेजे जाने पर आक्षेप नहीं किया । पीरअली को अनुमति मिल गई ।

रानी ने मोतीबाई से कहा, 'तेरा नाम कैसे सुन्दर रूप में अङ्गरेजों के पास पहुंचा ! मुझको कोई सन्देह नहीं मेरे जासूसी विभाग के सरदार को ही साँई बना लिया गया है ।'

मोतीबाई बोली, 'सरकार के सामने गाली नहीं निकलती परन्तु यदि उस मुंह झोंसे रोज को पा गई तो तोप, बन्दूक या तलवार से सच्चा नाम बतलाये बिना न मानूंगी ।'

'मैंने तो दरबार में,' रानी ने कहा, 'बड़ी कठिनाई से हँसी को रोक पाया । मोतीसाईं ! मोतीसाईं कैसा बढ़िया नाम है ।' और वह खिलखिला कर हंस पड़ीं ।

मोतीबाई भी हँसते-हँसते बोली, 'सरकार, मेरी चल नहीं सकती थी, नहीं तो मैं चिट्ठी के सिरनामे पर लिखवाती मैमसाहब रोज मोती-साईं का सलाम। चुपचाप हिन्दुस्थान को पीठ दिखाओ और अपनी विलायत में झख मारो। जब यह चिट्ठी उसकी फौज में चर्चा पाती तब उस मुँहजले को मुंह दिखलाने में लाज आती।'

रानी गम्भीर हो गईं।

'पीरअली कल तो लौट आवेगा ?'

'यदि उसको किसी ने मार्ग में ही समाप्त न कर दिया तो।'

'आदमी तो चतुर है।'

'बहुत काइयाँ। मुझको उस पर कभी-कभी अविश्वास हो जाता था, परन्तु कुछ दिनों से वह ऐसा जी लगाकर काम करता है कि सन्देह निवृत्त हो गया।'

'अङ्गरेजों के साथ हिन्दुस्थानी सिपाही भी हैं।'

'मैंने भी सुना है। भोपाल और हैदराबाद की रियासतों के दस्ते हैं। कुछ तिलङ्गा पलटन है, बाकी गोरे।'

'सब कितने होंगे ?'

'सरकार, ठीक-ठीक पता तो नहीं। कई हजार हैं। ठीक बात पीरअली के लौटने पर मालूम होगी।'

[३७]

पीरअली इतनो तेजी के साथ गया कि उसको जनरल रोज का दूत मार्ग में मिल गया। उसने जनरल रोज के पास पहुँचने की प्रार्थना की। पीरअली को रोज के पास पहुंचा दिया गया। उसके पास नवाब अली-बहादुर का सन्देशा और पीरअली का नाम पहुँच चुका था। पीरअली को पाकर रोज़ प्रसन्न हुआ। पीरअली ने रोज़ को झांसी की पक्की और कच्ची सब बातें सुनाईं। स्त्रियों की सेना का सविस्तार वर्णन सुनकर रोज़ हैरान हो गया। हिन्दुस्थान की स्त्रियां सिपाहीगिरी का काम करती हैं। उसको विश्वास न होता था परन्तु अलीबहादुर की चिठ्ठयों से और उससे बम्बई में आते ही, विप्लवकारियों का जो वर्णन सुना था और उस वर्णन में रानी ने जो स्थान पाया था, उससे वह इस असम्भव बात को मानने के लिये तैयार हो गया!

रोज ने पूछा, 'रानी ने अङ्गरेज बच्चों और स्त्रियों का क़तल करवाया?'

'हर्गिज नहीं', पीरअली ने सच्चा उत्तर दिया।

रोज़ को मार्टिन की चिट्ठी की बात जबलपुर के कमिश्नर ने बतलाई थी और उसने मार्टिन की चिट्ठी पर अपना विश्वास भी प्रकट किया था परन्तु रोज़ और उसके साथी अङ्गरेज, रानी की निर्दोषिता को मानने के लिये तैयार ही न थे।

झांसी के कुछ लोगों ने उनके बाल-बच्चों का वध किया था इसलिये उनको सारी झांसी और सारी भूमि से बदला लेना था। रानी झांसी का सजग चिन्ह थीं, इसलिये उनको दोषमुक्त कैसे माना जा सकता था? दूत ने रानी का जो उत्तर दिया, वह शिष्ट होते हुए भी स्पष्ट था।

रोज़ ने १७ मार्च को तालबेहट से कूच करके बेतवा पार की। पीरअली आगे किस प्रकार जनरल रोज़ की सहायता करेगा, यह तय हो गया और वह शीघ्र झांसी लौट आया। रोज़ झांसी की ओर सावधानी

के साथ बढ़ा। आसपास का प्रदेश दृढ़ता के साथ अपने अधिकार में करने में उसको दो तीन दिन लग गये।

इसी समय रोज को प्रधान सेनापति कैम्बैल का आदेश मिला—'तात्या टोपे ने चरखारी के राजा को घेर लिया है। पहले चरखारी की सहायता करो।'

रोज ने आदेश का उल्लंघन किया—वह झांसी के महत्व को जानता था।

उसने उत्तर दिया, 'मैं आज्ञा की अवज्ञा के लिये क्षमा चाहता हूँ। चरखारी का गिर पड़ना या खड़ा रहना कुछ मूल्य नहीं रखता। मुझको पहले झांसी से निबटना है।'

तात्या टोपे ने चरखारी से २४ तोपें और तीन लाख रुपये छीन लिये और कालपी लौट आया।

पीरअली ने जो समाचार रानी के पास भिजवाया वह बहुत अनोखा न था परन्तु उसको काफी महत्व दिया गया।

उसने बतलाया कि पल्टन अमुक-अमुक नम्बर की हैं और प्रत्येक पल्टन में इतने सिपाही। तोपों की गिनती बतलाई और प्रबन्ध की खूबी को प्रकट किया। रोज की कुल सेना सात हजार कूती गई।

नाना भोपटकर तक को पीरअली का विश्वास हो गया और वह रहस्य के कार्यों में शामिल किया जाने लगा। जब मोतीबाई को ही पीरअली पर सन्देह न रहा तब रानी को सन्देह हो ही क्यों सकता था?

पीरअली ने नवाब साहब के पास भांडेर समाचार भेज दिया और कहला भेजा कि अब बहुत समय तक कोई खबर न मिल सकेगी। पीर-अली भयानक खेल खेल रहा था।

जिस दिन पीरअली लौटकर आया उसी दिन राहतगढ़ के भागे हुये लगभग पांच सौ पठान रानी के शरणार्थी हुये। रानी ने उनको नौकर रख लिया। उनके एक सरदार का नाम गुलमुहम्मद था। इन लोगों का

समाचार पीरअली ने रोज को नहीं भेज पाया। इस बात का उसको खेद था।

रानी के पास जब ये पठान आये तब वे बड़ी हीन अवस्था में थे। कपड़े फट गये थे। न जाने कितने दिन से उनको भरपेट भोजन न मिला था। अच्छे हथियार पास न थे। कुछ के पास सिवाय लाठी या छुरी के और न था। रानी ने उनको सब प्रकार की सुविधायें दीं। उन्होंने प्रण किया, 'स्वराज्य के लिये रानी के कदमों में अपने सबके सिर देंगे।' इन पठानों ने अपने प्रण को जैसा निभाया उसको इतिहास जानता है और झांसी की लोक परम्परा उसको नहीं भूली।

झांसी नगर के कोट के सब फाटकों पर बड़ी छोटी तोपों का उचित प्रबन्ध कर दिया गया। बारूद और गोले फाटकों की बुर्जों में इकट्ठे कर दिये गये और निरन्तर युद्ध सामग्री तथा रसद भेजने का प्रबन्ध कर दिया गया।

दीवान दूल्हाजू ओर्छा फाटक पर, पीरअली सागर खिड़की पर कुँवर खुदाबख्श सैंयर फाटक पर, कुँवर सागरसिंह खण्डेराव फाटक पर, पूरन कोरी उनाव फाटक पर नियुक्त किये गये। दीवान जवाहरसिंह के हाथ में सम्पूर्ण नगर और नगर के फाटकों की रक्षा का भार सौंपा गया। किले में हर बुर्ज पर सब मिलाकर इक्यावन बड़ी-बड़ी तोपें साजी सम्भाली गईं। दक्षिणी बुर्ज की तोपें गुलाम गौसखां के सञ्चालन में, पूर्व और उत्तर की तोपें भाऊ बख्शी के हाथ में और पश्चिम की तोपें दीवान रघुनाथसिंह के अधिकार में दी गईं। किले में पठान, चुने हुये बुन्देलखंडी सैनिक और रानी की स्त्री सेना की नियुक्ति कर दी गई। सब सैनिक लगभग चार हज़ार होंगे। पानी का प्रबन्ध बहुत अच्छा न था परन्तु सन्तोषप्रद था - किले के पश्चिमी भाग में शङ्करगढ़ में जहां महादेव जी का मन्दिर है—एक कुंआ था उसी से सारी सेना को पानी पिलाने के लिये ब्राह्मण नियुक्त कर दिये गये।

चैत की अमावस हो गई। नवरात्र का आरम्भ हुआ। किले में गौर की स्थापना हुई। रानी ने धूमधाम के साथ सिन्दूरोत्सव मनाया। गौर के सामने चांदी ही चांदी के वर्तनों की तड़क-भड़क और मन्दिर के बाहर सबके लिये भीगे चने और बताशों का प्रसाद। नगर की स्त्रियां सजधज के साथ उत्सव में शरीक हुईं

फूलों की सुन्दरता और सुगन्धि से महादेव जी का मन्दिर भर गया। स्त्रियां थोड़ी देर के लिये आने वाली विपत्ति को भूल गईं। वे अपने किले में थीं, अपनी हँसी-मुस्कराती रानी के पास। उनकी तोपें, उनके गोलन्दाज, उनके सिपाही आसपास और अपनी रक्षा का पुख्ता हौसला अपने मन में। फिर किस बात की चिन्ता थी?

महादेव जी के मन्दिर के समीप पलाश का एक वृक्ष था। उसमें इन दिनों प्रति वर्ष बड़े बड़े लाल फूल लगते थे और तीक्ष्ण ग्रीष्म ऋतु में उसके हरे चिकने बड़े पत्ते छाया दिया करते थे। जङ्गल का अवशेष और स्मारक, महादेव के मन्दिर का अकेला पड़ौसी-वह वृक्ष कटने से बचा दिया गया था। नवरात्र में वह पलाश लाल फूलों से गस गया। स्त्रियां फूलों की एक एक माला उसकी भी डालों को पहिना दे रही थीं। मानों सौन्दर्य को सुगन्धि प्रदान की गई हो। लाल फूलों पर बेला, चमेली, गेंदा और जूही की रङ्ग-बिरङ्गी मालाएँ ऐसी लगती थीं जैसा प्रभात के समय ऊषा की किरणों ने गुलाल बिखेर दी हो। इस वृक्ष के नीचे कुआं था और कुंए के ऊपर एक बारहदरी। इस बारहदरी की रक्षा के लिये ऊँचा परकोटा था। इसके पूर्व में बहुत ऊँचाई पर किले की पश्चिमी बुर्ज और उसके पीछे जरा दूर महल।

पूजन के पश्चात् स्त्रियां पलाश के वृक्ष के पास से सीढ़ियों द्वारा बारहदरी में इकट्ठी हो हो जा रहीं थीं। रानी वहीं थीं। वहीं सिन्दूरोत्सव हो रहा था—हल्दी कूँ कूँ। रानी विधवा थीं, इसलिये वह स्वयं सिन्दूर नहीं दे रही थीं परन्तु वहां भाऊ बख्शी की पत्नी थी और भी अनेक सधवायें थीं, जो आपस में सिन्दूर दे रही थीं और किसी

न किसी बहाने एक दूसरे के पति का नाम लिवाने का हँस–हँस कर प्रयत्न कर रही थीं।

विनोद की समाप्ति पर सब स्त्रियां महादेव के मन्दिर के पास उतर आईं। उतरती जाती थीं और पलाश के पेड़ को हिलातीं जाती थीं। उसके लाल फूल मालाओं समेत झूम-झूम जाते थे।

महादेव का मन्दिर छोटा सा और आस-पास का आंगन भी सकरा ही है परन्तु उसमें बहुत स्त्रियां इकट्ठी थीं।

चहल-पहल को बन्द करके रानी ने स्त्रियों से कहा, 'दो-चार दिन के भीतर ही अपनी झांसी के ऊपर गोरों का प्रहार होने वाला है। तुममें से अनेक युद्ध-विद्या सीख गई हो। जो जिस कार्य को कर सके वह उस कार्य को हाथ में ले। लड़ने वालों के पास गोला, बारूद, खाना, पानी इत्यादि ठीक समय पर पहुंचता रहना चाहिये। आवश्यकता पड़ने पर हथियार भी चलाना पड़ेगा। तुममें से कोई मेरी बहिन के बराबर हो, कोई माता के समान। अपने बाप की, अपने ससुर की, अपने पति की, अपने भाई की लाज तुम्हारे हाथ है। ऐसे काम करना जिसमें पुरखों को कीर्ति मिले। मैंने नगर का प्रबन्ध कर दिया है। तुम्हारी आवश्यकता मुझको किले में है। मेरे साथ रहना। बीच-बीच में छुट्टी मिल जाया करेगी, तब घर हो आया करो।'

सब स्त्रियों के कण्ठ से ध्वनित हुआ 'हर हर महादेव।'

उन कोमल, किन्तु दृढ़, कण्ठों का वह निनाद किले की कठोर दीवालों से जा टकराया। उसकी झांई महादेव के मन्दिर में लौट पड़ी। हुआ 'हर हर महादेव।' अनन्त दिशाओं में, अनन्त काल में वह अनन्त, अमर नाद समा गया। महल के पास सिपाहियों के कोठे थे। उनमें नवागन्तुक पठान भी थे। हल्ले को सुनकर हथियार लेकर बाहर निकल आये। बुन्देलखण्डी सिपाहियों ने उस हल्ले का उनको सविस्तार अर्थ समझाया।

उनका अगुआ गुलमुहम्मद बोला, 'बाई जहां की औरत लड़ने को एसा तय्यार है, वहां का मरद तो आसमान को चक्कर खिला देगा। और अम लोग–अम लोग–खुदा क़सम—इस मुल्क के लिये सब मर मिटेगा। वकत आने दो, बाई वकत !' पठानों ने दांत मींस कर मन ही मन प्रण किया।

[३८]

जनरल रोज़ ससैन्य २० मार्च के सवेरे झांसी के पूर्व-दक्षिण कामासिन देवी की टौरिया के पीछे, झांसी से लगभग तीन मील के फ़ासले पर आ गया। थोड़ी देर में तम्बू तन गये। इन तम्बुओं को रानी ने किले के महल की छत पर से दूरबीन द्वारा देखा। झांसी भर में सनसनी फैल गई परन्तु वह सनसनी भय की न थी, उत्साह की थी।

किले के गोलन्दाजों ने भी दूरबीन लगाई। तोपों पर पलीते डालने के लिये हाथ सुरासुरा उठे परन्तु उस समय की तोपों के लिये अच्छा निशाना मारने के प्रसङ्ग में तीन मील का फासला बहुत था। स्त्री गोलन्दाजों ने भी दूरबीन पकड़ी।

मोतीबाई ने उमङ्ग के साथ रानी से कहा, 'सवारों का हमला कर दिया जाय तो सब तम्बू-कनातें तितर-बितर हो जायें।'

रानी बोलीं, 'समझ से काम लो। इन तम्बुओं के बीच-बीच में अगल-बगल और आगे-पीछे तोपें लगी होंगीं। एक सवार भी लौट कर न आ सकेगा। लड़ाई किले और परकोटे के भीतर से लड़नी पड़ेगी। घिर जायेंगे। परन्तु एक दिन तात्या टोपे रावसाहब की सेना लेकर आ जावेंगे। तब रोज की सेना पर दुहरी मार पड़ेगी।'

'रावसाहब के पास सन्देशा भिजवा दिया गया?'

'आज ही भेजती हूँ। सोचती हूं किसको भेजूं।' रानी ने कुछ क्षण सोचकर कहा।

मोतीबाई बोली, 'जो नाम मन में उठते हैं, वे सब किसी न किसी काम पर लिख लिये गये हैं। मैं सोचती हूं जूही को सवार के साथ भेज दिया जाय।'

'वह सुकुमार है, कोमल है', रानी ने कहा।

मोतीबाई ने सतृष्ण नेत्रों से रानी की ओर देखा। बोली, 'सरकार, संसार की जितनी मंजुलता है, वह हमारे मालिक में निहित है। उनसे

बढ़कर कोई नहीं । इतनी मृदुल होते हुये भी वे फौलाद से भी बढ़कर कठोर हैं । तब उनकी चाकरनी क्या सम्वाद-वाहक का भी काम न कर सकेगी और फिर वह दृढ़ भी काफी है । इस कार्य में उनका मन लगेगा । उसी को भेजने की अनुमति दी जाय । उसको तुरन्त शहर छोड़ देना चाहिये । अङ्गरेज लोग शीघ्र घेरा डालेंगे । सब फाटक बन्द होने ही वाले हैं । फिर कोई भी न आ-जा सकेगा ।'

रानी ने स्वीकृति दे दी ।

कहा, 'मैं जूही को भेजने की अनुमति देती हूँ । उसके साथ काशी को भेजना चाहती हूं । तुमको उसके साथ कर देती परन्तु तुम्हारी यहां अधिक आवश्यकता पड़ेगी ।'

रानी ने काशीबाई और जूही को उसी समय कालपी के लिये रवाना कर दिया । उन दोनों के घोड़े अच्छे थे । जरूरी सामान साथ था । दोनों सशस्त्र युवा के वेश में गईं ।

काशीबाई और जूही के चले जाने पर नगर के सब फाटक बन्द कर लिये गये ।

झाँसी की अनेक स्त्रियों ने उसी दिन रानी के पास सैनिक वेश में अपना निवास बनाया । ये ही स्त्रियाँ जो घर पर बात-बात में चबड़-चबड़ किया करती थीं, जरा सा कारण पाने पर परस्पर लड़ बैठती थीं, सन्ध्या के समय वस्त्राभूषणों और फूलों से सुसज्जित होकर, थालों में दिये रख रखकर, मन्दिरों में पूजन के लिये जाती थीं, वे ही स्त्रियां सैनिक वेश में, तलवार बांधे और बन्दूक कन्धे पर रखे, चुपचाप अपना-अपना कर्तव्य पालन करने में निरत हो गईं ! उनका शृङ्गार और वाक् युद्ध—सब—तलवार के म्यान में समा गया ! लोगों की कल्पना थी कि अङ्गरेज रात को झांसी पर हमला करेंगे । झांसी सचेत थी । परन्तु रात को हमला नहीं हुआ ।

२१ मार्च को जनरल रोज ने अपने मातहत दलपतियों के साथ

दूर से झांसी का चक्कर काटा और भूमि का सूक्ष्म निरीक्षण किया ।

आक्रमण और रक्षा के स्थानों में सेना की टुकड़ियां और तोपें लगा दीं। शहर और किले के भीतर के लोगों को जिन-जिन मार्गों से सहायता या रसद मिल सकती थी, उन सबको उसने अपने अधीन कर लिया। शहर के सब फाटकों की नाकेबन्दी करली। उसी दिन चन्देरी से ब्रिग्रेडियर स्टुअर्ट अपने दस्ते के साथ लौट आया। रोज़ को और बल मिला।

जहाँ-जहाँ अङ्गरेज फौज के दल लगाये गये थे वहां-वहां उनकी रक्षा के लिये खाइयां खोद ली गई। एक स्थान से दूसरे स्थान तक तार लगा दिया गया। कामासिन टौरिया पर एक बड़ी दूरबीन लगाई गई और तारघर कायम किया गया।

झांसी के आस-पास की सब टौरियों की आड़ से अङ्गरेजी तोपखाने मृत्यु-वमन करने के लिये वैज्ञानिक तौर पर सन्नद्ध हो गये और टौरियों के बीच-बीच में जो नीची जगह और खाइयां थीं उनमें बन्दूक चलाने के लिये छेद और नालियां बनाकर सैनिक अपने जनरल की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। रोज जैसा योग्य सेनापति था, सेना उसकी उतनी ही सीखी-सिखाई, हिंसामय और अनुभवी थी।

मङ्गलवार (२३ मार्च) को रोज ने हमले की आज्ञा दी। युद्ध आरम्भ हो गया।

झांसी के तोपची और सिपाही रात भर जागते रहे। रानी ने दुहरी कुमुक का प्रबन्ध किया। दिन में अपनी-अपनी जगह पर गुलाम गौस, खुदाबख्श, रघुनाथसिंह, भाऊ बख्शी, दूल्हाजू, पूरन और सागरसिंह। रात में उनके स्थानापन्न, रानी के स्त्री गोलन्दाज।

परन्तु यह बदली सुबह होते ही नहीं हुई। स्त्रियां इन गोलन्दाजों के पास पहुंच गई और काम में मदद करती रहीं। दोपहर के उपरान्त बदली होनी थी।

गुलामगौस रात भर का जागा था, जो स्त्री उसके पास काम कर रही थी, उससे गौस का मन नहीं भर रहा था। उसने उसके बदले में

लालता ब्राह्मण को मांगा। रानी ने लालता को भेज दिया। लालता के आते ही गौस की खुमारी चली गई।

ग़ौस ने उससे कहा, 'रानी साहब की स्त्री-गोलन्दाज चपल बहुत है, मुझको ठण्डा आदमी चाहिये जो काम करते समय गाता न हो।'

लालता हँसकर बोला, 'कभी-कभी आल्हा गाते-गाते तो मैं भी काम करता हूं, खां साहब।'

'तब वह गीत याद रखना पण्डितजी,' ग़ौस ने कहा, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहि के लानें।'

लालता ने फसील के छेद में होकर देखा कि जीवनशाह की पहाड़ी की आड़ में होकर बग़ल वाली टौरिया के पीछे कुछ तोपें और चढ़ाई जा रही हैं। गुलाम गौस ने भी देखा।

गौस की आंख एक पल के लिये गीध की आंख की तरह सधी।

बोला, 'पंडितजी, एक लोटा जल पिलाओ और मेरी घन-गरज तोप और उसकी छोटी बहिनों का काम देखो। मैं बारह बजे छुट्टी लूंगा। खुदा ने चाहा तो खाना-वाना खाने के बाद शाम को मिलूंगा। फिर रात को सोऊंगा। हां तो एक बार वह गीत तो मन से गा दो। एक सतर से ज्यादा नहीं।

लालता में स्वर में गाया, 'जननी जनम दियो है तोखों बस आजहि के लानें।' गीत की समाप्ति हुई कि गौस ने तोपखाने को पलीता छुलाया। 'घनगरज और उसकी बहिनों' ने इतनी जोंर की गरज की कि जिमीन कांप गई। दक्षिणी सिरे की सब बुर्जों से एक-एक क्षण बाद बाढ़ दगना शुरू हो गई। तोपों के भरने का उत्कृष्ट प्रबन्ध था। एक तोपखाने की बाढ़ और दूसरे की ओर दगने में थोड़ा ही अन्तर पड़ता था। रोज के तोपखाने ने जवाब दिया परन्तु जवाब कमजोर था। गौस के तोपखानों ने ऐसी मार बरसाई कि रोज का दम फूल उठा। उसका दक्षिणी दस्ता नष्ट-भ्रष्ट हो गया। कुछ तोपखाने बन्द हो गये परन्तु

एक तोपखाना कोलाहल कर रहा था। समय लगभग दोपहर का हो गया था।

गुलाम गौस ने कहा, 'मुझे भूख लग रही है और गोरों का यह तोपखाना मानता नहीं। अच्छा देखता हूं।'

गुलाम गौस ने 'घनगरज' को एक अंगुल इधर-उधर सरकाया। निशाना बांधा और एक फटने वाला गोला छोड़ा।

बारूद इन तोपों की ऐसी थी कि धुआं न होता था, इसलिये गौस ने अपने निशाने की सफलता तुरन्त देख ली। उछल कर बोला, 'वह मारा!' उसके साथियों ने देखा कि गोरे तोपची मारे गये और तोप भी उलट कर वेकार हो गई।

अङ्गरेजों का दक्षिणी मोर्चा बिलकुल ठंडा हो गया। गौस भोजन और आराम के लिये चला गया। लालता ने स्थान पकड़ा।

पूर्व की ओर से अङ्गरेजी तोपों के गोले आने लगे। कुछ किले से टकराते थे और कुछ शहर में गिर कर घरों का और लोगों का नाश करते थे। भाऊ वख्शी ने 'कड़कबिजली' का स्थान जरा सा परिवर्तित किया और निशाना साधकर पलीता दिया। थोड़ी देर में रोज का पूर्वीय मोर्चा भी ठण्डा हो गया। तोपची मारे गये और तोपें वेकार हो गईं। वख्शी अपनी पत्नी को तोपखाना सौंप कर भोजन और आराम के लिये चला गया।

मुन्दर ने रघुनाथसिंह की जगह ली। सुन्दर ने दूल्हाजू की, मोतीवाई ने खुदावख्श की। दीवान जवाहरसिंह को थोड़ी देर के लिये छुट्टी दे दी गई। रानी घोड़े पर सवार होकर शहर के सब मोर्चों को देखने और सम्भालने के लिये चली गईं। तीसरे पहर के अन्त में लौट आईं। जवाहरसिंह फिर अपने काम पर डट गया।

चौथे पहर से लेकर संध्या तक स्त्री तोपचियों ने दृढ़तापूर्वक काम किया। रात को भी उन्हीं को काम पर रहना था। केवल खण्डेराव फाटक और सागर खिड़की पर स्त्रियां काम नहीं कर रही थीं। खण्डेराव

फाटक पर सागरसिंह ने अपना नायव स्वयं चुन लिया और सागर खिड़की पर वरहामुद्दीन नाम का एक बुन्देलखण्डी पठान भेज दिया गया।

इसका आना पीरअली को अच्छा नहीं लगा।

पीरअली ने कहा 'खाँ साहव, आपको नाहक कष्ट दिया गया। मैं तो दिन रात इस छोटी सी खिड़की को सम्भालने को तैयार हूं।'

'मीर साहव', वरहामुद्दीन वोला, 'आप थोड़ा आराम करलें रात भर के जागे हुये हैं।'

'गई रात तो सभी जागे हैं। आप भी तो न सोये होंगे?'

'हुकुम है। पालन करना होगा।'

'ऐसा भी क्या! अरे साहव सोइये। कल रहियेगा मेरी मदद पर।'

'नहीं, जनरल साहव सुनेंगे तो नाराज होंगे और रानी साहव सुनेंगीं तो मैं अपना मुंह ही न दिखा सकूंगा।'

'तो रह जाइये, मगर एक वात है—किसी को मालूम न हो।'

'मुझे किस्से कहानी कहते फिरने से मतलव ही क्या?'

'वात ऐसी है कि अगर फूटकर वाहर निकल जाय तो मेरे टुकड़े हो जायेंगे।'

'आप कहिये। विश्वास करिये।'

'अङ्गरेजी छावनी में क्या हो रहा, क्या होने वाला है, कहाँ कहाँ नये मोर्चे वनाये गये और किस तरफ से हमला जोर का होगा इन वातों की जासूसी करने का भार मेरे सिर है। अङ्गरेजी छावनी में भोपाल रियासत के भी सिपाही हैं। उनमें से एक मेरा रिश्तेदार है। जव मैं थोड़े दिन हुये तालवेहट की ओर गया था तव उसको मैंने मिला लिया था। वह कुछ और लोगों से मिला हुआ है, इसलिये ठीक-ठीक खवर मिल जायगी। वह खवर अपने बड़े काम की होगी। इस खवर के लाने के लिये मैं रात को चुपचाप वाहर जाऊँगा। सवेरे के वहुत पहले आ जाऊँगा। यदि अङ्गरेजों को खवर लग गई, तो मैं मार दिया

जाऊंगा और अंगरेजी फौज में मेरा जो रिश्तेदार है, वह और उसके साथी सब मारे जायेंगे। रानी साहब का नुकसान होगा।'

'मैं किसी से न कहूँगा, मगर मैं चला जाऊं या सो जाऊं तो आपका ठौर खाली हो जायगा। फिर यदि दुश्मन यहां होकर रात में धावा बोल दे तो अपना कितना बड़ा नुकसान न होगा?'

'यह तो छोटी सी खिड़की है। इसकी खबर भी अंगरेजों को न होगी।'

'जैसा आप उचित समझें। मैं सोचता हूं, हर हालत में मेरा इस ठिये पर रहना आपके लिये लाभदायक होगा।'

'खूब। आप रहिये। मगर जब सब लोग सो जायेंगे तब मैं जाऊंगा।'

'लेकिन फाटक नहीं खोलना चाहिये।'

'फाटक पर ताले पड़े हैं। मैं मुहरी के रास्ते जाऊंगा।'

'मुहरी! कौनसी मुहरी?'

'वही जो खिड़की की बग़ल में है।'

जब सब सो गये, पीरअली ने बरहामुद्दीन को मुहरी दिखलाई और उसी में होकर बाहर चला गया।

आध मील चलने के उपरांत वह अङ्गरेजी छावनी के पास पहुंचा। टोका गया। उसने पूर्व-निश्चित संकेत को कहा। सन्त्री ने आगे बढ़ने दिया। कई अड्डों पर रोका जाने और अनुमति पाने पर पीरअली रोज़ और उसके मातहत दलनायकों के सामने पहुँचा। दुभाषिये के द्वारा तुरन्त बातचीत हुई।

रोज—'किले में से जो गोलाबारी हुई, उसका प्रधान नायक कौन है।

पीरअली—'गुलाम ग़ौसखां और भाऊ बख्शी ?'

रोज ने बागियों का रजिस्टर लौटवाया-पलटवाया। उसमें ये नाम न थे।

रोज—'ये लोग कौन हैं ?'

पीरअली—'रानी साहब के नौकर हैं।'

रोज—'ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक पर कौन हैं ?'

पीरअली—'दीवान दूल्हाजू ओर्छा फाटक पर हैं और कुंवर खुदा-बख्श सैंयर फाटक पर।'

फिर रजिस्टर देखा गया। ये नाम भी न निकले।

रोज—'कोई लालता ब्राह्मण है ?'

पीरअली—'है, किले में है।'

रोज ने दांत पीसे।

बोला, 'जनरल कौन है ?'

पीरअली—'खुद रानी साहब। उनके नीचे दीवान जवाहरसिंह जागीरदार काम करते हैं।'

रोज—'कुल कितने गोलन्दाज हैं ?'

पीरअली—'बेहिसाब, बहुत सी औरतें गोलन्दाज हैं।'

रोज—'बाई जोव ! स्टुअर्ट, यह झांसी तो महज नरक (हैल) है। औरतें गोलन्दाज ! कल दूरबीन से अच्छी तरह देखूंगा।'

स्टुअर्ट—'बारूद बनाने का कोई कारखाना है या पहले से बनी रक्खी है ?'

पीरअली—'पहले की बनी रक्खी है और बनाने का कारखाना भी है।'

रोज—'इट इज स्मोक लैस पाउडर स्टुअर्ट (धुआं न देने वाली बारूद है !) उत्तरी दरवाजे किसके सुपुर्द हैं ?'

पीरअली—'ठाकुरों, काछियों और कोरियों के हाथ में। दतिया फाटक तेलियों के हाथ में है।'

रोज—'दी होल पीपुल एगेन्स्ट अस (पूरी जनता हमारे खिलाफ है !) अच्छा तुम किस जगह काम करते हो ?'

पीरअली—'सागर खिड़की पर।'

रोज—'हमारे हवाले कर सकोगे !'

पीरअली—'खुशी से, मगर आपको फ़ायदा कुछ न होगा। सागर खिड़की की पीठ पर खजांची की कोठी है। उस पर तोपखाना है। वह मेरे काबू का नहीं है। वहां पठान और ठाकुर हैं।'

रोज—'कोई औरतें हाथ आ सकती हैं।'

पीरअली—'तोबा तोबा ! झाँसी की औरतें पूरी शैतान हैं। एक नाचने वाली मेरी जान पहिचान की है, मगर वह जासूसी मुहकमें की प्रधान है और अब तोप चलाती है !'

रोज—'डैन्सिंग गर्ल ए गनर ! (नाचने वाली गोलन्दाज) व्हाट एल्स हैव आई टु हियर इन दिस डैम्ड् एकर्सैड प्लेस (इस सत्यानासी पलीत जगह में मुझको अब क्या सुनना बाकी रह गया ?')

स्टुअर्ट—'मगर जासूसी मुहकमें का अफसर तो एक मोतीसाईं सुना गया था ?'

पीरअली—'जी नहीं, वह अफसर यही नाचने वाली है और उसका नाम मोतीबाई है।'

वे सब हँस पड़े।

रोज ने कहा, 'वी हैव मेड फ़ूल्स आव अस ! (हम लोग बेवकूफ बन गये) अच्छा, किसी एक फाटक वाले से हमको मिलादो। तुमको और उसको बहुत इनाम मिलेगा।'

पीरअली—'कोशिश करूँगा।'

रोज—'तुम बतला सकते हो शहर और किले पर हमारी तोप का गोला कहाँ से अच्छा पड़ेगा ?'

पीरअली—'जार पहाड़ी पर से।'

रोज—'ओ सिली! (मूर्ख) जार पहाड़ी से किले का बहुत कम नुकसान होगा।'

पीरअली—'जी नहीं। किले की पश्चिमी दीवाल, जो मटीली टौरिया पर है बहुत कम ऊँची है। उसकी दाहिनी बग़ल में शङ्करगढ़ किले का उत्तर-पश्चिम हिस्सा है। इसी में पानी पीने का कुआं और रानी साहब के पूजन का मन्दिर है। तमाम औरतें जो सिपाहगीरी का काम करती हैं, इसी जगह दुपहरी या शाम को जमा होती हैं। इस जगह के तोड़ने से किला हाथ में आ जावेगा और शहर की एक इमारत न बचेगी।'

रोज—'और उत्तर की ओर से?'

पीरअली—'उनाव फाटक और भांडेरी फाटक की सीध में मटीले टेकड़े हैं, जिनकी वजह से आपका तोपखाना कामयाब न हो सकेगा।'

रोज—'अच्छा, तुम हमको दक्षिण तरफ का कोई फाटक वाला मिला दो।'

पीरअली—'मैंने अर्ज़ की न कोशिश करूँगा।'

रोज़ ने पीरअली को धन्यवाद देकर वापिस किया।

पीरअली जब सागर खिड़की पर वापिस आया, उसने बरहामुद्दीन को सावधान पाया।

पीरअली ने कहा, 'खुदा खुदा करके लौट पाया हूँ। आज बहुत थोड़ा भेद मिल पाया है। कल मौका मिलते ही फिर जाऊँगा।'

बरहामुद्दीन ने पूछा, 'आज कुछ मालूम हो पाया या इतनी मेहनत सब बेकार हो गई।'

'बेकार तो नहीं गई,' पीरअली ने उत्तर दिया, 'यह मालूम कर लाया हूं कि एक भी तोप या तोपखाना हिन्दुस्थानी सिपाही के हाथ में नहीं है। सब तोपें अङ्गरेजों ने अपने काबू में रख छोड़ी हैं।'

'इतना तो मुझको भी मालूम है कि अङ्गरेजों ने हिन्दुस्थानियों का भरोसा करना बिलकुल छोड़ दिया है।'

'इस पर भी गौरों के साथ भोपाल, हैदराबाद और ओर्छा रियासत के दस्ते हैं और मद्रास की काली पल्टन भी।'

'ओर्छा रियासत का दस्ता उत्तर की ओर अञ्जनी की टौरिया पर तैनात है।'

'तुमको कैसे मालूम ?'

'किले में चर्चा थी। रानी साहब के जासूसों ने खबर दी होगी।'

पीरअली ने सोचा, 'बरहामुद्दीन चतुर मालूम होता है, सावधान होकर काम करना चाहिये।'

[३९]

उसी रात रोज ने सतर्कता के साथ जार पहाड़ी पर तोपखानों के मोर्चे बांधे। सुबह होते ही तोपों के मुहरे ठीक किये, निशान साधे। तोपों पर पलीते पड़े और शहर का विध्वंस आरम्भ हो गया। लोग वेहिसाव मरने और घायल होने लगे। आगें लगीं, बाजार बन्द रहे, साधारण जनता भूखों प्यासों मरने लगी। शहर में हाहाकार मच गया। झांसी की गलियां वीरान दिखने लगीं। किले के पश्चिमी दीवार में सूराख हो उठे।

शहर का हाल जानकर रानी दुखी हुईं। तुरन्त सवार होकर किले से उतरीं और बरसते हुये गोलों में होकर प्रत्येक मुहल्ले को उत्साह दान किया। आग बुझाने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। अन्नक्षेत्र और सदावर्त कायम किये। तब किले को लौटीं।

लौटते ही गुलाम गौस के पास पहुँचीं। उसने भक्तिपूर्वक प्रणाम किया।

'खां साहब, आज पश्चिम की ओर कोई नया मोर्चा बना है। इसका निरोध होना ही चाहिये,' रानी ने कहा, 'चौथाई नगर बरबाद हो गया है। कल न जाने क्या गति होगी।'

'दक्षिण मोर्चे का सरकार इन्तजाम कर दें,' गौस ने निवेदन किया, 'मैं अङ्गरेजों के उस मोर्चे को देख लूंगा।'

रानी ने कहा, 'मैं मोतीबाई को भेजती हूँ।'

गौस बोला, 'वह कमाल की गोलन्दाज हैं सरकार, मगर इस मोर्चे को न सम्भाल पावेंगी। अङ्गरेज लोग दक्षिण के सिवाय और किसी ओर से नहीं आ सकते।'

रानी ने पूछा, 'तुम्हारा ऐसा विचार क्यों है?'

'हुजूर' गौस ने उत्तर दिया, 'इसी दिशा से किला अत्यन्त निकट पड़ता है।'

रानी ने कहा, 'वख्शिन को यहां भेज दूं ?'

'भेज दीजिये सरकार', गौस ने सहर्ष स्वीकार किया, 'वह बड़े खानदान की हैं।'

रानी की त्योरी बदली परन्तु उन्होंने तुरन्त नियन्त्रण किया। सोचा, आत्म-त्याग में यह वेश्या-पुत्री किसी खानदान वाले से कम है ? हे भगवान्, त्याग में भी ऊँच-नीच !' और चली गई।

वख्शिन ने दक्षिण बुर्ज की 'घनगरज' और उसकी 'छोटी वहिनों' को सम्भाला। वह गौस के वतलाये हुये क्रम पर काम करती रही।

गुलाम गौस तुरन्त पश्चिमी बुर्ज पर पहुंचा। यहां लालता काम कर रहा था। गौस ने बारीकी के साथ दूरबीन द्वारा निरीक्षण किया।

बोला, 'पण्डित जी, अङ्गरेज़ों का मोर्चा पहिचाना ?'

'वह देखो न काली टोरों के पीछे है।'

'नहीं पण्डित जी काली टोरों के पीछे महज बारूद का धुआं किया जा रहा है जिसमें हम लोग धोखा खाते रहें। वे जो ताजा लाल मिट्टी के ढेर लगे हुये हैं, तोपें वहां हैं।'

लालता ने दूरबीन पकड़ी। देखा। असहमत हुआ।

'खां साहब' लालता ने कहा, 'मिट्टी और बजरी के उन ढेरों में तोपें नहीं बिठलाई जा सकतीं।'

'माफ कीजियेगा, पण्डित जी', गौस बोला, 'तोपें खास मतलब से उन्हीं ढेरों में विठलाई गई हैं। जरा ठहरिये।'

गौस ने तोपों पर दूरबीनें कसीं। तोपों को इधर-उधर खिसका कर ठीक किया। निशान बांधे, बारूद और गोले भरे। इस कार्य में उसको अधिक समय नहीं लगा।

इसके बाद इधर गौस ने तोपों को पलीते दिये, उधर वे मिट्टी के ढेर उड़ गये। मरे हुये तोपची नजर आये। उल्टी हुई और टूटी तोपें। फिर बाढ़ें की गईं।

अङ्गरेज़ों के पश्चिमी मोर्चे का जवाब बिलकुल बन्द हो गया। नगर में चैन हो गया। ग़ौस ने जाकर रानी को प्रणाम किया। रानी ने सोने के चूड़े मँगवा कर ग़ौस को अपने हाथ से पहिनाये। रानी हर्ष में मग्न थीं और ग़ौस का खुरदरा चेहरा आंसुओं मे तर था। तीसरे पहर के उपरान्त कुमुक बदली। स्त्रियों ने तोपें हाथ में लीं और भीषण गोलाबारी शुरू कर दी।

कामासिन टौरिया पर से रोज़ ने दूरबीन में से देखा। बगल में उसका फ़ौजी डाक्टर लो था और पास ही मातहत जनरल स्टुअर्ट।

रोज़ ने कहा, ओह! स्त्रियां तोप चला रही हैं? स्त्रियां गोला-बारूद ढो रहीं हैं। कुछ खाना-पीना बांट रही हैं। टूटी हुई दीवारों और कँगूरों की मरम्मत में मदद दे रही हैं। इतनी तरतीब से, इतनी तेज़ी से हिन्दुस्थानियों को काम करते आज देखा। अचरज होता है।'

लो ने दूरबीन हाथ में ली। देखते ही बोला, 'जनरल, पेड़ों की छाया में कुछ स्त्री-पुरुष काम कर रहे हैं। हमारा एक गोला उनके बीच में पड़ा। धूल फिकी। फिर भी वे सब वहीं के वहीं।'

रोज़ ने और स्टुअर्ट ने भी निरीक्षण किया। स्टुअर्ट बोला, 'ये सब नेपोलियन हो गये क्या?'

लो ने कहा, 'तब झांसी हमारा वाटरलू होगा।'

रोज़ ने मुस्कराकर झिड़का, 'हिश, अभी बहुत घोर युद्ध करना पड़ेगा। यह रानी नेपोलियन नहीं, जौन आव आर्क़ सी जान पड़ती है।'

स्टुअर्ट ने कहा, 'इसको ज़िन्दा पकड़ सकें तो कमाल होगा।'

उसी समय तार खटखटाया।

मालूम हुआ कि पश्चिमी मोर्चा सब का सब तहस-नहस हो गया। स्टुअर्ट को पश्चिमी मोर्चे को फिर सम्भालने की आज्ञा दी। वह चला गया। स्टुअर्ट के ब्रिग्रेड का अधिकांश दक्षिणी मोर्चे पर था। उसके दलनायक को रोज़ ने तार द्वारा आदेश दिया, 'बहुत जोर के साथ क़िले

की दक्षिणी बुर्ज पर गोलाबारी करो। उस व्हिसलिंग डिक को किसी तरह बन्द करो।'

ग़ौस के 'घनगरज' तोपखाने के शोर और मृत्युवमन का नाम इन लोगों ने व्हिसलिंग डिक—हल्ला करने वाला शैतान—रक्खा था।

आज्ञा पाते ही दक्षिणी ब्रिगेड ने अत्यन्त तीव्रता के साथ काम शुरू किया। उनके तोपखाने लगातार भयंकर आग और गोले उगलने लगे। बख्शिन जवाब पर जवाब दे रही थी। बारूद और धुयें से उसका सुन्दर चेहरा काला पड़ गया था। पसीने की रेखाओं से जितना चेहरा धुल गया था केवल उतना उसके स्वर्ण वर्ण को प्रकट कर रहा था। ब्रिगेड ने तोपों की रक्षा में क़िले की ओर दौड़ लगाई। घनगरज के तोंपखाने ने उनका संहार कर दिया। बहुत अङ्गरेजी फौज मारी गई। उसको लौटना पड़ा। परन्तु उनके तोपखाने ने एक काम कर लिया।

एक गोला बुर्ज के कंगूरे को तोड़कर बख्शिन के कन्धे पर लगा। कन्धा टूट गया, उड़ गया। वह अचेत होकर गिर पड़ी।

बख्शी को पूर्वी बुर्ज पर समाचार मिला। निर्मम होकर बख्शी ने उत्तर दिया, 'उससे बढ़कर झांसी और झांसी की रानी हैं। शाम को देखूंगा तब तक दाह मत करना।'

बख्शी अपने काम पर जुट गया। एक बार आकाश की ओर उसने देखा। गीता के कृष्ण को याद किया और अपने को कठोर से कठोर संकट में डालता हुआ तोपों को दुगुनी तेजी के साथ चलाने लगा। रोज का पूर्वी मोर्चा बुझ गया।

परन्तु बख्शी का पलीता सुलगता और आग देता रहा।

बख्शिन चली गई। रानी तुरन्त आईं। बख्शिन के रक्तमय शव को गोद में रख लिया। गला रुद्ध हो गया, एक शब्द भी मुंह से नहीं निकल रहा था—और न आँख से एक आँसू। तोपखाना बन्द हो गया था। अंग्रेजों के गोले धड़ाधड़ बुर्जों और दीवारों से टकरा रहे थे और

उनको ढा रहे थे। मुन्दर ने दूरबीन से अपनी बुर्ज पर से देखा। दौड़कर आई।

घबराकर बोली, 'बाईसाहब !'

रानी के मुंह से केवल एक शब्द निकला, 'गौस।'

मुन्दर समझ गई, दौड़कर पश्चिमी बुर्ज से गुलामग़ौस को बुला लाई।

गौस ने देखा झांसी की रानी धूल में बैठी बख्शिन के शव से लिपटी हुई हैं।

गौस ने कहा, 'यह क्या सरकार, अभी न जाने कितने सरदार कुरबान होंगे ? हुजूर हम लोगों को समझाती हैं कि स्वराज्य की लड़ाई किसी के मरने-जीने पर निर्भर नहीं है। और फिर बख्शिनजू तो अमर हो गईं, उठिये। देखिये उस जवांमर्द बख्शी को। वह अपने ठिये पर अटल है। आप ऐसा मोह करेंगीं तो हम लोग गोरों से कितने दिन लड़ सकेंगे ? आप यहां से हट जायें और दीवान खास में बैठकर हुकुम भेजती रहें। मैं इनको मजा चखाता हूँ।'

रानी बख्शिन के शव का आवश्यक प्रबन्ध करके दीवान खास में चली गईं।

गौसखाँ ने 'बिसमिल्लाह' किया और घनगरज को सम्भाला। तीन बाढ़ों में ही अङ्गरेजी मोर्चे का तोपखाना, तोपची और तोपखाने पर काम करने वाले, सब स्वाहा हो गये।

गौस ने अपने साथियों से कहा, 'यह तो मेरे साथी सरदार को मारने का बदला हुआ, अब कुछ प्रसाद भी देता हूँ। देखो झोखनबाग के पूर्व में गुसाइयों के मन्दिरों की आड़ से ये लोग सैंयर-फाटक पर गोलाबारी कर रहे हैं। बिचारा खुदाबख्श मन्दिरों के लिहाज के कारण जवाब नहीं दे पाता परन्तु मन्दिरों के बीच में सन्ध है। उसी सन्ध में होकर अङ्गरेजी तोपखाना काम कर रहा है। वह सन्ध खुदाबख्श की सीध में नहीं है, पर घनगरज की सीध में है।'

साथी ने अनुरोध किया, 'मन्दिर पर गोला न पड़े, खांसाहव। नहीं तो वड़ा अनर्थ हो जावेगा।'

'अगर मन्दिर की ईंट भी मेरे गोले से टूट जाय तो तलवार से मेरी गर्दन कलम कर देना।'

गौस ने घनगरज का मुहरा मोड़ा परन्तु वहाँ से सीध नहीं वैठती थी और न निशाना जमता था। तोप को ज्यों का त्यों करके वह रघुनाथसिंह वाली बुर्ज पर गया।

'दीवान साहब,' गौस ने विनय की, 'दो पल के लिये तोप मुझे बख्श दीजिये। सैंयर-फाटक के सामने वाला अंग्रेजी तोपखाना बन्द करना है।'

'तोप खुशी से लीजिये,' रघुनाथसिंह ने कहा, 'परन्तु अंग्रेज तोपखाने पीछे मिटेंगे, मन्दिर पहले।'

गौस ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'दूरवीन दीजिये, मुझको मन्दिरों की सन्ध से केवल अंग्रेजी तोपखाना देखना है। मन्दिरों को मैं देखूंगा ही नहीं।'

रघुनाथसिंह को गुलाम गौस की गोलन्दाजी का भरोसा था। दूरवीन और तोप उसके हवाले कर दी।

गौस ने तोप के ठिये को सम्भाला, सुधारा और दूरबीन लगाकर निश्चिन्तता के साथ गोला छोड़ा। उसका जो कुछ फल हुआ उसे रघुनाथसिंह ने दूरबीन से देखा।

अङ्गरेज तोपची मारे गये। तोपें नष्ट हो गईं और मन्दिर बच गये।

उसी समय गुलामगौसखां को रानी ने अपनी तौल भर चांदी का तोड़ा पुरस्कार में दिया।

संध्या समय बख्शिन के शव का दाह किया गया।

बख्शी हर्षोन्मत्त था परन्तु उसकी आंखों में पागलपन था।

कभी-कभी वह असंगत और अप्रासङ्गिक बात कहता था 'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।' और कोई समझा हो या न समझा हो परन्तु रानी इस महाकाव्य को समझती थी।

रात हुई। लड़ाई ने कुछ शांति पकड़ी। पीरअली के पास बरहामुद्दीन पहुंच गया।

पीरअली ने तुरन्त कहा, 'देखो मेरे पता लगाने के कारण गोलन्दाजों को कितना लाभ हुआ।'

बरहामुद्दीन को शक हुआ। उसको दबाकर बोला, 'बेशक हुआ होगा, मगर मैं किले से गोलन्दाजी नहीं कर रहा था, इसलिये कुछ कह नहीं सकता।'

पीरअली ने शेखी मारी, 'हमारी खिड़की के सामने अंग्रेजों का कोई मोर्चा नहीं पड़ता, नहीं तो दांत खट्टे कर देता।'

बरहामुद्दीन ने खुशामद की, 'मीर साहब, कहिये दांत और सिर तोड़ देते।'

पीरअली ने प्रसन्न होकर कहा, 'एक ही बात है।'

जब कुछ रात बीत गई पीरअली ने बरहामुद्दीन से धीरे से कहा, 'अब मैं जासूसी पर जाता हूँ आप यहां होशियार रहना।'

बरहाम ने मंजूर किया।

पीरअली मुहरी के रास्ते से बाहर हो गया और उनके पीछे-पीछे चुपचाप बरहाम। आध मील चलने के बाद जब पहले छवोने के सन्त्री ने टोका। तब पीरअली ने संकेत शब्द में उत्तर दिया। पीरअली आराम के साथ अंग्रेज छावनी में दाखिल हो गया। बरहाम बहुत उदास धीरे-धीरे सागर खिड़की को लौट आया।

जब पीरअली लौटा बरहाम ने प्रश्न किया, 'आज की क्या खबर लाये मीर साहब ?'

उसने उत्तर दिया, 'ज्यादा पता नहीं लगा। सिर्फ इतना मालूम कर सका कि कल शहर पर गोलाबारी पश्चिम की तरफ से होगी।'

'आज तो सरदार गुलाम गौस ने कमाल कर दिया। जिधर की तोप सम्भाली उसी तरह कहर बरसा दिया।'

'हमारी बारूद भी बहुत अच्छी है। धुआं होता ही नहीं। अंग्रेजों को पता नहीं लगता कि तोपखाने किधर लगे हुये हैं।'

'तो भी वे लोग हमारे गोलन्दाज़ पर गोलन्दाज़ मार रहे हैं। खैर है कि हमारे यहां तोपचियों की कमी नहीं है। वरना झांसी का घण्टे भर भी बचना मुश्किल था।'

'बारूद कहां बनाई जाती है, खां साहब ?,

'महल के उत्तर में इमली के पेड़ों के नीचे। आपने क्या नहीं देखा।'

'नहीं तो मैं उस तरफ नहीं गया, खां साहब।'

'एक बात मुझको भी बतलाइये, मीर साहब। आप अङ्गरेजी छावनी में पहुंच कैसे जाते हैं ?'

'कुछ न पूंछो खाँसाहब, गड्ढों, खाइयों और झाड़-झङ्काड़ की आड़ें लेता हुआ जाता हूं। जरा चूकूं तो गोली सर पर पड़े। बड़ी जोखिम का काम है। सीटी का एक बंधा हुआ इशारा करता हूं। मेरा रिश्तेदार आ जाता है और बातें बतला देता है। मैं लौट आता हूं। फिर वही मुहरी की मुसीबत। इतना बदबूदार कीचड़ है कि तोबा !'

बरहाम के पैरों में भी कीचड़ लगा हुआ था। पीरअली ने देख लिया।

उसने पूछा, 'खाँसाहब तुम्हारे पैरों में कीचड़ कैसा ?'

उसने भोलेपन के साथ उत्तर दिया, मैं भी मुहरी में होकर बाहर थोड़ी दूर चला गया था। देखता था कि कैसा रास्ता है। आपके जाने के बाद गया और तुरन्त लौट आया।'

पीरअली को सन्देह हो गया। उसने एक निश्चय किया। बरहाम का सन्देह जाग्रत हुआ, उसने भी एक संकल्प किया।

[४०]

सुन्दर को उस रात दूल्हाजू की कुमुक सौंपी गई। उसने दूल्हाजू से गोलन्दाजी सीखी थी, इसलिये वह उसका आदर करती थी। सन्ध्या के उपरान्त सुन्दर ओर्छा फाटक के ऊपर दूल्हाजू के पास पहुंच गई।

दूल्हाजू ने दिन में खूब तोप चलाई थी। वह प्रसन्न था और सुन्दर उस दिन के काम पर संतुष्ट थी, केवल बख्शिन के देहान्त पर कभी-कभी मन कसक उठता था।

दूल्हाजू ने सुन्दर से कहा, 'आज तो बाई मैं बहुत थक गया हूँ। सारा शरीर दुख रहा है।'

'आप विश्राम करिये। मैं रात भर सावधान रहूँगी।'

'दिन भर फिर वही सब करना पड़ेगा।'

'मैं दिन में भी आपकी जगह काम करती रहूँगी।'

'और कल रात?'

'रात को भी काम कर दूंगी। तब तक आप सुस्ता लेंगे। परसों दिन में आप तोपखाना संभाल लेना। मैं सो लूंगी। रात का काम फिर पकड़ लूंगी।'

'सुन्दर तुम बहुत प्रबल हो।'

'आपकी कृपा।'

'और अत्यन्त सुन्दर।'

'इसका उत्तर कुछ नहीं दे सकती। भगवान ने जैसा बनाया वैसी हूं।'

'तुमको देखते ही, तुम्हारे दर्शन करते ही, न जाने मेरा चित्त कैसा हो जाता है। तुम तो महल की रानी होने के योग्य हो।'

'रानी तो एक ही हैं—और एक ही हो सकती हैं।'

'सुन्दर, मैं तुमको अपने हृदय से लगाना चाहता हूँ। क्या कहती हो?'

'यही कि आप बहुत नीच हैं।'

दूल्हाजू इस उत्तर की आशा नहीं कर रहा था। उसने अपनी ठेस को मुश्किल से सम्भाला। उत्तेजित हुआ।

बोला, 'जानती हो, मैं ठाकुर हूं।'

सुन्दर ने दृढ़ सुहावने स्वर में कहा, 'जानते हो मैं कुणभी हूँ, जिस जाति की सहायता से छत्रपति ने एक छत्र राज्य स्थापित किया था।'

दूल्हाजू यकायक हँस पड़ा।

बोला, 'सुन्दरबाई तुमसे परम प्रसन्न हुआ। मैंने तुम्हारी परीक्षा लेने के लिये ही यह सब कहा था।'

सुन्दर ने स्थिरता के साथ कहा, 'हर्ष है कि आपकी परीक्षा शीघ्र समाप्त हो गई।'

दूल्हाजू की आंख से लौ छूट पड़ी। सुन्दर ने नहीं देखा।

'तोपखाना सम्भालो,' दूल्हाजू बोला, मैं सवेरे काम पर आ जाऊँगा।' और अधिक वह कुछ न कह सका। चला गया।

अब सुन्दर का क्षोभ जाग्रत हुआ। खीझकर अपने मन में कहा, 'दो जूते मुंह पर न लगा पाये। बड़ा सरदार बना फिरता है। मेरे स्त्रीत्व को इतना दुर्बल समझा!'

सवेरा होते ही दूल्हाजू अपने ठिये पर आ गया। सुन्दर से कोई बात नहीं हुई। उसने ऐंठ के मारे क्षमा-प्रार्थना तक नहीं की। सुन्दर ने रात का सब हाल रानी को सुनाया।

रानी ने सुन्दर को वर्जित किया, 'और किसी से कुछ मत कहना। गोलंदाज बहुत मारे गये हैं। यदि मेरे पास काफी आदमी होते तो दूल्हाजू को अपने हाथ से कोड़े लगाती और झाँसी बाहर कर देती; परन्तु इस समय जरा सह लेना चाहिये। तुझे अनुमति देती हूं कि यदि वह फिर कोई बेहूदी बात कहे तो अकेले में जूते लगा देना। तू उसे कुश्ती में पछाड़ सकती है।'

सुन्दर को अच्छा लगा। चुप रही। रानी ने समझा कि इतने से संतुष्ट नहीं हुई। उन्होंने दूल्हाजू को बुलाया और अकेले में काफ़ी डाटा फटकारा।

कहा, 'अबकी बार तुमको क्षमा किया। अपना काम करो। ऐसा ओछापन न करना।'

दूल्हाजू काम पर शीघ्र लौट गया।

उसने सोचा, एक ने नीच कहा, दूसरी ने ओछा। मेरे सच्चे प्रेम को किसी ने न पहचाना। सुन्दर एक छोटी जाति की स्त्री है। मैं उसको खुल्लम-खुल्ला रख लेता। ठकुराइन बन जाती। लेकिन बड़ी पाजी औरत है और रानी औरतों की तरफ़दार। मैंने कहा ही क्या था? विश्वास दिलाया कि उसकी परीक्षा कर रहा था परन्तु रानी ने विश्वास नहीं किया। इस प्रकार का वर्ताव तो बड़े-बड़े महाराज भी मेरे साथ नहीं कर सकते।'

दूल्हाजू उस वर्ताव को अपना अपमान समझता था। वह उस पहर अपना कर्तव्य, शिथिलता और अन्यमनस्कता के साथ करता रहा। कुशल यही थी कि पिछले दिन गुसाइयों के मन्दिरों के पास वाले तोपख़ाने के मिट जाने के कारण और रोज़ के पश्चिमी मोर्चे पर अधिक जोर देने के कारण, ओर्छा फाटक ने अधिक गोलाबारी का आवाहन नहीं किया।

दोपहर के वाद धूप कड़ी हो गई। लू भी चल उठी। दोनों ओर के तोपख़ाने और सिपाही अवकाश लेने लगे।

पीरअली दूल्हाजू के पास आया। रामरहीम होने के उपरान्त वातचीत होने लगी। पीरअली चाहता था कि कम से कम एक सरदार को अपने पक्ष में कर लूँ।

पीरअली —'दीवान साहव, आपको तो वड़ा कड़ा परिश्रम करना पड़ता है। आपकी वजह से मेरी खिड़की पर दुश्मन कोई दबाव ही नहीं डाल पाता।'

दूल्हाजू—'परिश्रम तो सचमुच, मीर साहब, मुझको बहुत करना पड़ता है। मारे जाने पर मेरे परिश्रम का कोई मूल्य भी आंका जायगा या नहीं इसमें सन्देह है।'

पीरअली—'रानी साहब तो इनाम खुले हाथ देती हैं। गुलाम गौस को सोने के कड़े, अपनी तौल भर चांदी का तोड़ा और कुँवर का खिताब बख्शा है।'

दूल्हाजू—'होगा। रानी पठानों और परदेशियों की केवल हेकड़ी पर ही प्रसन्न हो जाती है। खजाना उनके हाथ में है, चाहे जिसको लुटावें। मैं कितनी बार ओर्छा फाटक के सामने से अंग्रेजों को हटा चुका हूँ, कितनी बार मैंने उनके तोपखाने नष्ट किये, परन्तु मुझको तो एक पैसा भी पुरस्कार में नहीं मिला। जी चाहता है कि यह लड़ाई समाप्त हो या अवसर मिले तो अपने घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'मैं ही, देखिये दीवान साहब, जासूसी में कितनी जान खपा रहा हूं। पता लगाने के लिये रात में इधर-उधर अकेला भटकता हूं। एक गोली, या तलवार का वार पड़ जाय कि बस खतम हूं, मगर कोई पूछने वाला नहीं कि भैया तुम्हारा क्या हाल है। मेरे साथ एक गँवार पठान को और जोड़ दिया है, उसके मारे परेशान रहता हूँ।'

दूल्हाजू—'इधर मेरी भी यही परेशानी है। सुन्दरबाई मेरी नायबी में है। उसकी परीक्षा लेने के लिये एक बात कही कि वह पाजीपन पर आ गई। मैंने डाटा। उसने रानी से मेरी शिकायत कर दी। रानी ने मुझसे ऐसी बातें की हैं कि आज, दिल टूट रहा है।'

पीरअली ने प्रयत्न किया अपने को रानी का जासूस प्रकट करने का, दूल्हाजू ने प्रयास किया अपने को दुखाया, सताया निर्दोष सिद्ध करने का। दोनों के मन परस्पर निकट आये परन्तु एक दूसरे की बात को उसमें से किसी ने नहीं समझा।

दूल्हाजू ने कहा, 'मुझे दिखता है कि हम लोग अङ्गरेजों को हरा नहीं सकेंगे।'

पीरअली—'उन्होंने दिल्ली और लखनऊ को सहज ही तोड़ लिया। कानपूर को भी पराजित कर लिया है। सच्ची बात तो दीवान साहब यह है कि झांसी बिचारी का कोई बिरता नहीं।'

दूल्हाजू—'जी चाहता है कि आज ही इस्तीफा देकर, तुम्हारी मुहरी से घर चला जाऊँ।'

पीरअली—'इस्तीफा देने की क्या जरूरत! वैसे ही चले जाइये परन्तु चारों तरफ़ तार लगे हुये हैं और सन्त्रियों के छबीने पड़े हुये हैं। जिनमें होकर छिपकर निकलना कठिन है।'

दूल्हाजू—'आप मीर साहब, 'अङ्गरेजी छावनी में से खबर कैसे लाते हैं?'

पीरअली—'छावनी में मेरे कुछ रिश्तेदार भोपाली दस्ते में हैं। उनकी मदद से पहुंच जाता हूँ और वहां का हाल ले आता हूं—और—और दीवान साहब, मैं अङ्गरेजों के बड़े जनरल रोज साहब के सामने भी हो आया हूँ।

दूल्हाजू—'आप लड़ाई शुरू होने के पहले गये थे?'

'पीरअली—'नहीं, कल रात को ही तो पहुंचा था।'

दूल्हाजू—'फिर बचे कैसे?'

पीरअली—'सीधी सी बात उनसे कह दिया कि मैं तो आपकी तरफ से जासूसी कर रहा हूं।'

दूल्हाजू—'जनरल मान गया।'

'पीरअली—'क्यों न मानता? दो-एक बातें बतला दीं, उसको भरोसा हो गया।'

दूल्हाजू—'मैं भी जनरल के पास चलना चाहता हूँ।'

पीरअली—'यदि रानी साहब को खबर लग गई तो?'

दूल्हाजू—'तो जो हाल आपका होगा, वही मेरा भी।'

पीरअली—'मैं तो जासूस हूं।'

दूल्हाजू—'मुझको भी उसी रङ्ग में रङ्ग लीजिये।'

पीरअली—'मगर जनरल के सामने आप अपने को जासूस नहीं कह सकेंगे ।'

दूल्हाजू—'तब क्या कहूँ ? जाना तो उसके सामने अवश्य चाहता हूँ। शर्त यह है कि बचकर लौट आऊँ और यहां भी कोई गड़बड़ न हो ।'

पीरअली—'जनरल ने यदि आपसे किसी काम के करने के लिये कहा तो ?'

दूल्हाजू—'हाँ करनी पड़ेगी ।'

पीरअली—'तो पहले हमार आपका ईमान हो जाय और कहीं भी किसी प्रकार भी बात न फूटने पावे ।'

पीरअली ने दीन की और दूल्हाजू ने धर्म की पक्की सौगन्ध खाई ।

पीरअली ने कहा, 'यदि अवसर मिला तो आज रात को, नहीं तो कल रात को चलेंगे ।'

दिन भर पश्चिमी और दक्षिणी मोर्चों पर घोर युद्ध होता रहा । उत्तर में, उन्नाव, भांडेरी और सूजेखां फाटकों पर भी गोलाबारी हुई । इस दिशा में ओर्छा की सेना रोज के दस्ते के साथ काम कर रही थी; परन्तु इस ओर झांसी के सैनिक और गोलन्दाज ऐसी मुस्तैदी के साथ कर्तव्य का पालन कर रहे थे कि रानी को इस दिशा से अङ्गरेजों का कोई भय ही न था । दतिया राज्य से अङ्गरेजों की सहायता के लिये कोई दस्ता नहीं आया था । इस राज्य को चरखारी-पराजय का पता लग गया था । राजा विजय बहादुर का देहान्त हो चुका था । उत्तराधिकारी नाबालिग था । रोज के आक्रमण के पहले दतिया को रानी का भय था अब तात्या टोपे का । इसलिये दतिया राज्य भय-ग्रस्त तटस्थता में था ।

झांसी का दतिया फाटक निर्भय था । क़िले की पश्चिमी बुर्ज का तोपखाना इसकी काफी रक्षा किये हुये था । यही हाल खण्डेराव फाटक का था । फिर भी इन फाटकों के तोपची हाथ पर हाथ धरे न बैठे थे ।

सन्ध्या हो गई परन्तु रात में गोलाबारी बन्द न हुई । रात में गोले, सरसराते हुए छोटी-छोटी लाल गेंदों की तरह मालूम पड़ते थे । इस

गोलाबारी से शहर का थोड़ा सा नुकसान हुआ परन्तु क़िले का कुछ नहीं बिगड़ा। उस रात पीरअली बाहर नहीं जा पाया। दूल्हाजू कम सोया। उसने पीरअली की बाट जोही।

दिन निकलने पर फिर जोर का युद्ध हुआ। अब तक गोरी पल्टनें आगे बढ़-बढ़कर मर रही थीं। अब अधिकांश देशी पल्टनें दिखलाई पड़ीं परन्तु तोपखानें सब अङ्गरेजों के हाथ में थे।

दोनों ओर के तोपची मर रहे थे और दूसरे तोपची उनकी जगह पर आ रहे थे। संध्या के समय किले के पश्चिमी मोर्चे का तोपखाना बन्द हो गया, कारण था दीवार का धुस्स हो जाना।

दीवार के टूट जाने से तोपखाना दिखलाई पड़ने लगा। मुश्किल से तोपों को आड़ में किया। जार पहाड़ी की ओर से एक दस्ता झपटा। खण्डेराव फ़ाटक पर से सागरसिंह ने देख लिया। फाटक पर ताले थे। वैसे भी फाटक खोलने की आज्ञा न थी। सागरसिंह ने तोप चलाई परन्तु वह जल्दबाज था इसलिये निशाना ठीक न बैठता था। खीज उठा।

अपने साथियों से बोला, 'आज बुन्देलों की नाक कटती है और कुंवर सागरसिंह की मूंछ जाती है। जो मेरे साथ इन गोरों का सामना कर सके वह तुरन्त नीचे उतरे।'

एक ने कहा, 'रानी साहब की या दीवान जवाहरसिंह की आज्ञा ले लो।'

सागरसिंह ने उत्तर दिया, 'बावले हुये हो? जब तक किसी की आज्ञा आवेगी तब तक ये लोग क़िले में घुस जायेंगे। तब उस आज्ञा को क्या चाटेंगे?'

रस्से की सीढ़ी लगाकर धड़ाधड़ सौ आदमी नीचे उतर गये। सबसे पहले सागरसिंह। यह लोग सपाटे से बगल वाली टौरिया की ओट में पहुँच गये। जैसे ही अङ्गरेजी दस्ता आया इन लोगों ने बन्दूकों की बाढ़ छोड़ी। दस्ते ने भी बन्दूक दागी। सागरसिंह की टुकड़ी की कोई हानि

नहीं हुई, परन्तु अङ्गरेजी दस्ता छिन्न-भिन्न हो गया। इकट्ठा होने को था कि सागरसिंह अपने साथियों सहित तलवार लेकर पिल पड़ा। अङ्गरेजी दस्ता सब नष्ट हो गया। कुंवर सागरसिंह भी खण्डेराव फाटक के पास ही मारा गया। उसके कुछ आदमी बच गये। भीतर वापिस आ गये।

इन आदमियों की वीरता ने उस दिन झांसी का किला बचा लिया।

रात हो गई। रानी को सागरसिंह के शौर्य का समाचार मिल गया। रानी की आंखों के सामने बरवासागर की घटना का पूरा चित्र खिच गया। रानी ने मन में कहा, 'जिस देश में सागरसिंह सरीखे लोग जन्म लेते हैं, वह स्वराज्य मे बहुत दिनों वंचित नहीं रह सकता।'

रानी ने दीवार की मरम्मत अपने सामने करवाई। कारीगर कम्बल ओढ़ कर दीवारों की मरम्मत पर चिपट गये और रात भर में दीवार को ज्यों का त्यों कर लिया।

सवेरे पश्चिमी अङ्गरेजी मोर्चे ने दूरबीन से देखा—जैसे दीवार का कभी कुछ बिगड़ा ही न था।

उस दिन अत्यन्त भीषण युद्ध हुआ। दोनों ओर निरन्तर और तीव्र गोलाबारी हुई। इधर दीवारें टूट रही थीं उधर अङ्गरेजों के मोर्चे नष्ट हो रहे थे। इधर तोपची पर तोपची मारे जा रहे थे उधर तोप-खानों पर तोपखाने बन्द हो रहे थे। तुरन्त दूसरे तोपची तोपों को सम्भाल लेते थे। रानी की स्त्री सेना इस तरह काम कर रही थी जैसे देवी दुर्गा ने अनेक शरीर और अनेक रूप धारण कर लिये हों।

दीवार टूटी कि उसकी मरम्मत हुई, वह भी दिन दहाड़े। मरम्मत करने का काम पुरुष कर थे और पत्थर तथा चूना इत्यादि देने का काम स्त्रियां। गोले बरस रहे थे। ऐसे गोले जो फटकर अपने भीतर के कील कांटे चारों ओर सनसना देते थे परन्तु न तो झांसी की हिम्मत टूट रही थी और न झांसी की रानी की। जैसे-जैसे सङ्कट बढ़ता, तैसे-तैसे इनका साहस बढ़ता जाता।

यकायक एक गोला क़िले के भीतर वाले गणेश मन्दिर पर गिरा और वह ध्वस्त हो गया। केवल मूर्ति बची। दूसरा शंकर क़िले में गिरा। उस समय आठ-दस ब्राह्मण पानी भर रहे थे। उनमें से आधे मारे गये, बाकी भाग गये। ये गोले पश्चिमी मोर्चे से आये थे।

पानी की टूट पड़ी। ३,४ घंटे लोगों को प्यासा रहना पड़ा। क़िले का पश्चिमी मोर्चा सम्भाला गया। अङ्गरेजी मोर्चे का मुँह बन्द हुआ तब कुयें से पानी आ पाया। फिर रात हुई और बहुत कुछ शांति। दोनों पक्ष थकावट में चूर थे।

इस रात पीरअली और दूल्हाजू को अवसर मिला।

[४१]

बरहामुद्दीन सागर खिड़की की तोप पर पीरअली की जगह आ गया। पीरअली ने उससे कहा, 'आज बहुत से पते लगाने के लिये अङ्गरेजी छावनी में जाना है।'

'शौक से जाइये,' बरहाम बोला, अकेले ही जाइयेगा ? बड़ा खतरनाक काम है।'

पीरअली ने उत्तर दिया, 'अकेला ही जाऊँगा। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जायगा।'

पीरअली खिड़की पर से उतरा। थोड़ी देर ही ठहरा था कि दूल्हाजू आ गया। ओर्छा फाटक पर उसकी जगह सुन्दर आ गई थी।

दूल्हाजू को बरहामुद्दीन ने नहीं देख पाया।

पीरअली और दूल्हाजू मुहरी में घसे ! धसते ही दूल्हाजू ने नाक दबाई। धीरे से कहा, 'मीर साहब यह तो बहुत सकरी और गंदी रास्ता है।'

पीरअली धीरे से बोला, 'दीवान साहब वहां पहुंचने का यही एकमात्र मार्ग है।'

उन दोनों के निकल जाने पर धीरे से बरहामुद्दीन मुहरी में उतरा और आड़ ओट लेते हुये, पहले संत्री के छवीने तक चला गया।

संत्री ने टोका। पीरअली ने बंधे हुये संकेत की भाषा में जवाब दिया। वे दोनों छावनी में चले गये।

बरहामुद्दीन ने सोचा, पीरअली अवश्य कोई घातक षड़यन्त्र रच रहा है और वह झांसी के लिये शुभ नहीं जान पड़ता। आज दूसरा आदमी इसके साथ कौन है।

बरहामुद्दीन सावधानी के साथ लौट आया। हाथ-पैर धोकर मुहरी की बगल में बैठ गया और पीरअली की बाट जोहने लगा।

दूल्हाजू के साथ पीरअली रोज के सामने पेश हुआ। स्टुअर्ट पास था। पूछताछ शुरू हुई।

रोज—'तुम्हारे साथ दूसरा आदमी कौन है ?'

पीरअली—'दीवान दूल्हाजू ठाकुर साहब। ओर्छा-फाटक का तोपखाना इन्हीं के हाथ में है।'

रोज—'मैं खुश हुआ। यह किसी राज-परिवार का पुरुष है ?'

पीरअली—'जी हाँ।'

रोज—'आप क्या काम करोगे, दीवान साहब ?'

दूल्हाजू—'जो कहा जाय।'

पीरअली—'यह सच्चे आदमी हैं, साहब। गङ्गाजली की सौगन्ध लेंगे।'

रोज समझ गया।

दूल्हाजू के पसीना छूट गया। निकल भागने को जी चाहा परन्तु वहां वाल बरावर भी सांस न थी।

रोज ने एक हिन्दू सिपाही से लोटा भर कर मँगवाया।

दूल्हाजू से कहा, 'आपको गङ्गाजी की सौगन्ध खानी पड़ेगी।'

दूल्हाजू ने लोटा दोनों हाथों में ले लिया। आंखें बन्द कर लीं।

रानी का कुपित चेहरा सामने फिर गया। उसने आंखें खोल लीं। रोज ने सोचा—शपथ गम्भीरता पूर्वक ले रहा है।

पीरअली ने अनुरोध किया, 'सौगन्ध ले लीजिये, दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'गङ्गाजी मुझको मारें, जो मैं वेईमानी करूँ।'

रोज—'वेईमानी किसके साथ ? शपथ लो कि कम्पनी सरकार के साथ, अङ्गरेजों के साथ वेईमानी नहीं करूँगा।'

पीरअली—'ले लीजिये सौगन्ध दीवान साहब।'

दूल्हाजू ने शपथ ली, 'कम्पनी सरकार के साथ, अङ्गरेजों के साथ वेईमानी नहीं करूँगा।' और उसने लोटा नीचे रख दिया।

रोज ने कहा, 'अभी नहीं। लोटा फिर हाथ में लीजिये और यह कहिये कि ओर्छा फाटक का तोपखाना या तो वेकार कर देंगे या तोपखाने से गोले नहीं छोड़ेंगे और ओर्छा फाटक हमारे हवाले कर देंगे।

दूल्हाजू ने तदनुसार कसम खाई ।

पीरअली ने विनय की, 'हूजूर को इनाम भी इसी समय बतला देना चाहिये ।'

रोज ने तुरन्त वरदान दिया, 'दो गाँव जागीर में दीवान साहब हमेशा के लिये ।'

दूल्हाजू ने क्षीण मुस्कराहट के साथ स्वीकार किया ।

दूल्हाजू ने प्रश्न किया, 'कब ?'

रोज ने उत्तर दिया, 'जब हम झाँसी पर अधिकार करके शांति स्थापित कर लेंगे ।'

'यह नहीं पूछा,' दूल्हाजू ने कहा, 'वह काम कब करना होगा ?'

रोज और स्टुअर्ट ने सलाह की ।

रोज बोला, 'जब हमारे मोर्चे के पीछे लाल झन्डा देखो । लेकिन जब तक लाल झण्डा न देखो तब तक गोले टेकड़ी के नीचे हिस्से में लगें, हमारे तोपखाने या दस्ते पर गोला न आवे और हमारे तोपखाने का गोला तुम्हारे ऊपर न गिरेगा । या तो दीवार की जड़ में पड़ेगा या तुम्हारे बगल में जो ऊँचाई पर बुर्ज है, उस पर पड़ेगा । यदि तुमने हमारे साथ बेईमानी की तो सबसे पहले तुमको फांसी दी जायगी ।'

दूल्हाजू का चेहरा तमतमा गया ।

'मैंने बहुत बड़ी कसम खाई है । इन मीरसाहब को मालूम है कि रानी साहब से मेरा दिल बिलकुल फिर गया है ।'

पीरअली ने समर्थन किया ।

इसके उपरांत वे दोनों चले गये ।

रोज ने स्टुअर्ट से कहा, 'राज खानदान के लोगों को हाथ में रखना जरूरी है । डलहौजी ने इन लोगों को अपमानित करके हिन्दुस्थान को बिलकुल ही खो दिया होता ।'

स्टुअर्ट—'लेकिन आगे चलकर इन लोगों को सिर पर भी नहीं बिठलाना है ।'

रोज—'नहीं जी। वे सिर पर नहीं बैठना चाहते। वे तो अपनी मखमली गद्दियों पर बैठे रहना चाहते हैं। वहीं अडिग बने रहेंगे।'

पीरअली और दूल्हाजु मुहरी पर गये। दूल्हाजू ने फिर नाक दबाई।

पीरअली ने मुहरी के सिरे पर पहुंच कर कहा, 'दीवान साहब, लाल झण्डे वाली बात याद रखना।'

दूल्हाजू धीरे से 'हूँ' करके ओर्छा फाटक की ओर चला गया। उसके चले जाने पर पीरअली ने दीवार से सटा हुआ किसी को देखा। कांप गया।

बोला, 'कौन ?'

बरहाम ने आगे बढ़कर उत्तर दिया, 'मैं हूं, मीरसाहब।'

हृदय की धड़कन को दबाते हुये पीरअली नें कहा, 'म्यां खां साहब, यहां क्या कर रहे थे ?'

'मुहरी में छप छप की आवाज सुनकर शक हुआ, इसलिये यहां आ गया। आपके साथ दूसरा आदमी कौन था ?'

'होगा। आपको क्या मतलब ? पीरअली ने होश सम्भालते हुये कहा, 'जासूसी मुहकमों की बातों में दखल नहीं देना चाहिये।'

बरहाम - 'आप तो कहते थे कि अकेले ही जायेंगे। दो आदमी होने से खतरा बढ़ जावेगा।

पीरअली—'आपको साथ ले जाता तो खतरा जरूर बढ़ जाता।'

बरहाम—'यह दीवान साहब कौन आदमी था ?'

पीरअली—'दीवान साहबों और खां साहबों की झांसी में कोई कमी है ?'

बरहाम— 'हां, मीरसाहब अलबत्ता बहुत थोड़े हैं।'

पीरअली—'अपना काम देखिये। मैं तो जाकर सोता हूँ। इतना ख्याल रखिये कि किसी के राज में अपना पैर नहीं पटकना चाहिये।'

बरहाम—'मान लिया मीरसाहब, मान लिया। लेकिन इतना तो बतला दीजिये कि आज किस तरह पहुंचे और क्या क्या कर आये ?'

पीरअली—'आप पीछे पीछे क्यों न चले आये ?'

बरहाम—'गया था, लेकिन लाल झण्डे की बात समझ में नहीं आई।'

पीरअली सन्नाटे में आगया परन्तु उसको मनोनिग्रह का काफी अभ्यास था।

बोला, 'लाल झण्डे वाली बात रानी साहब को बतलाई जावेगी, आपको नहीं।'

बरहाम ने कहा, 'रानी साहब से मैं भी कुछ अर्ज करूँगा।'

पीरअली अपने शयनागार में चला गया। उसको नींद नहीं आई। दो दिन पहले उसने एक निश्चय किया था। सवेरा होते ही वह रानी के पास पहुंचा।

पिछले रोज बहुत तोपची और सैनिक मारे गये थे। रानी ने रात में तोपचियों का प्रबन्ध कर लिया था। तड़के के पूर्व ही वह नये सैनिकों की भर्ती के उपायों में व्यस्त थीं। जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह भी उसी चिन्तन में वहीं थे।

पीरअली ने तुरन्त निवेदन किया, 'श्रीमन्त सरकार, आज पश्चिमी मोर्चे से बहुत जोर का हमला होगा। जब आपका ध्यान उस ओर अटक जायगा तब दक्षिणी मोर्चे से जो जीवनशाह की टौरिया के बग़ल में है, धावा बोला जायगा। रात की जासूसी का यही समाचार है।'

रानी ने उपेक्षा के साथ कहा, 'देखूंगी। प्रबन्ध हो गया।'

वह किसी काम के लिये शहर में जाने के लिये उद्यत थीं।

पीरअली हाथ जोड़कर बोला, 'श्रीमन्त सरकार, उस बरहामुद्दीन को मेरे ठिये से हटा दिया जाय। वह मेरे काम में बहुत दखल देता है।'

'देखूंगी,' रानी ने कहा, 'कुछ और कहना है ?'

'हुज़ूर,' पीरअली ने जरा थर्राये हुये स्वर में कहा, 'एक लाल झण्डे के बारे में निवेदन करना है।'

रानी—'लाल–पीले झण्डे के विषय में जो कुछ कहना हो जल्द कहो।'

पीरअली—'अङ्गरेज धोखा देने के लिये खूनी झण्डा किसी टेकड़ी पर उठायेंगे और वहां से गोलाबारी में धूमधाम के साथ करेंगे परन्तु हमला करेंगे किसी दूसरी दिशा से।'

रानी—'समझ लिया। कुछ और?'

पीरअली—'बस हुजूर। केवल यह कि बरहामुद्दीन को मेरी बुर्ज पर से हटा दिया जाय।'

रानी अनुसुनी करके जवाहरसिंह के साथ शहर की ओर गईं। पीरअली दूसरी ओर चला गया।

रानी को मार्ग में बरहामुद्दीन मिल गया। उसने रोक लिया।

अनुनय के साथ प्रार्थना की, 'पीरअली से होशियार हो जायें सरकार। वह रात को अङ्गरेजी छावनी में जाते हैं।'

रानी रात की जागी थीं। सैनिकों का तुरन्त प्रबन्ध करना अत्यन्त आवश्यक था। मार्ग की टोकाटाकी सहन नहीं हो रही थी।

बोली, 'तुमको कैसे मालूम?'

बरहामुद्दीन ने उत्तर दिया, 'मैं पीछे पीछे गया था। अङ्गरेज सन्त्री ने इनको टोका। इन्होंने इशारे की बोली में जवाब दिया। सन्त्री ने तुरन्त छावनी में जाने दिया। यह पहले दिन की बात है सरकार। गई रात वे किसी एक दीवान साहब को साथ ले गये थे। मैं फिर पीछे पीछे गया। सन्त्री ने उसी तरह चिल्लाकर टोका। इन्होंने उसी तरह चिल्लाकर इशारे की बोली में जवाब दिया। दोनों को खट से छावनी में जाने की इजाजत मिल गई। ये लोग देर से लौटकर आये। जब दोनों अलग हुए पीरअली ने दूसरे से कहा, 'दीवान साहब लाल झण्डे वाली बात याद रखना।' मैंने इन दीवान साहब को नहीं पहचान पाया। हुजूर, इस कार्रवाई में क्या है, भेद है, खतरा है।'

घोड़ा आगे बढ़ने के लिये लगाम चबा रहा था, पैर पटक रहा था।

रानी ने रुखाई के साथ कहा, 'तुम मूर्ख मालूम होते हो। अपना काम न करके दूसरों के पीछे-पीछे घूमते हो। अपना ठिया देखो।'

रानी आगे बढ़ गईं। साथ में जवाहरसिंह। जवाहरसिंह ने विनय की, 'सरकार, पठान मूर्ख नहीं है। पीरअली की जांच होनी चाहिये।'

रानी ने उत्तर दिया, 'सामने का काम पहले निबटा लो और फिर जांच करो। पता लगाना यह कौन दीवान साहब हैं, जो पीरअली के साथ गया था।'

नये सैनिकों का प्रबन्ध करके रानी किले में आईं।

जवाहरसिंह शहर के इन्तजाम में उलझ गया।

रानी ने जरा सा अवकाश मिलने पर मोतीबाई से बरहामुद्दीन वाली बात कही।

मोतीबाई बोली, 'पीरअली बेईमानी कर सकता है। साथ में दीवान दूल्हाजू गये होंगे। आप उनसे रुष्ट हुई थीं।'

रानी ने कहा, 'जब तक जांच नहीं हुई है इन दोनों पर नज़र रखनी चाहिये परन्तु सहसा ऐसा कोई काम न करना जिसके लिये पीछे पछताना पड़े। पीरअली ने पहले अच्छे कार्य किये हैं और दीवान दूल्हाजू ने ओर्छा फाटक की अच्छी सम्भाल की है। इस समय हाथ में कोई बढ़िया गोलन्दाज दूल्हाजू की जगह भेजने के लिये नहीं है।'

'मेरे मन में आता है,' मोतीबाई बोली, 'सुन्दर को दीवान साहब के साथ दिन के काम के लिये कर दीजिये। रात के काम के लिये किसी और को भेज दिया जायगा।'

रानी ने स्वीकार किया।

सुन्दर रात को जागी थी। सोने के लिये तैयार हुई थी कि उसको यह योजना बतलाई गई। सुन्दर की नींद भाग गई। वह नहा धोकर और थोड़ा सा खा-पीकर ओर्छा फाटक पर पहुंच गई।

उस दिन भी घनघोर युद्ध हुआ। दोनों तरफ विकट नर-संहार। केवल दो बातें विशेष हुईं, ओर्छा फाटक की वह तोप जो दूल्हाजू के हाथ में थी अच्छी नहीं चली और एक गोला महल के सामने जहां बारूद वन रही थी गिरा, फटा और बारूद जल कर धड़ाके के साथ २५-३० स्त्री पुरुषों को अपने साथ हवा में उठा ले गई—उनके अंगों का भी पता न चला कि कहां गये।

बारूद में आग लग जाने के कारण क़िले में खलबली मच गई। भीषण नरसंहार तथा नगर के मकानों के भयानक विध्वन्स के कारण लोगों में निराशा फैलने लगी। किले की दीवारों में जगह-जगह छेद हो गये थे। सन्ध्या के उपरान्त रानी शहर में गईं। दीवारों का निरीक्षण किया। मरम्मत कराई—उस समय जबकि अन्य रातों की अपेक्षा इस रात अधिक गोलाबारी हो रही और इतनी शीघ्रता के साथ मानो कोई कम काम कर रही हो। रात को देर में लौटीं। सीधी महादेव के मन्दिर में गईं। ध्यान के उपरान्त बारादरी में थोड़ी देर के लिये जा लेटीं। एक झपकी आई। उन्होंने स्वप्न देखा:—

एक गौरवर्ण युवती, सुन्दर आकृति वाली, बड़े बड़े कारे नेत्र लाल रंग की साड़ी का अञ्चल बांधे हुये, आभूषणों से लदी हुई। वह स्त्री किले की बुर्ज पर खड़ी हुई अङ्गरेजों के लाल लाल गोलों को अपने कोमल करों में झेल रही है। कह रही है—'लक्ष्मीबाई देख, इन गोलों को झेलते झेलते मेरे हाथ काले हो गये हैं। चिंता मत कर। स्वराज्य की देवी अमर है।' रानी की आंख खुली। भयंकर गोलाबारी हो रही थी और होती रही। पर उन्हें न कोई चिंता न थकान। झटपट जाने

से उतरी और स्वप्न का सम्वाद सेनापति और मुख्य मुख्य दलपतियों को सुनाया। सवेरा होते होते यह सम्वाद सर्वत्र किले और नगर में फैल गया। तमाम स्त्री-पुरुषों की नसों में बिजली सी कौंध गई। डटकर युद्ध होने लगा। पहले दिन की अपेक्षा भी अधिक घोर। उस दिन पीरअली और बरहामुद्दीन वाले मामले की जांच-पड़ताल न हो सकी परन्तु सन्ध्या समय रानी को मालूम हो गया कि दूल्हाजू ने अनमने होकर काम किया।

[४२]

तात्या टोपे चरखारी को जीत कर कालपी लौटा। उसकी सेना में ग्वालियर का वह यूथ भी था जिसने कानपुर में जनरल विंढम को पराजित करने में हाथ वटाया था। सिपाही विजयोत्सव मना रहे थे और तात्या कालपी के विशाल शस्त्रागार का निरीक्षण कर रहा था। भांति भाँति के गोले ढाले जा रहे थे। वन्दूकें वनाई और वांधी जा रही थीं। दो हजार मन वारूद के होते हुये भी और वारूद तेजी के साथ तैयार की जा रही थी। अन्य प्रकार के शस्त्र और उनके अंगोपांग वनाये और ख़रीद मशीनों पर सम्भाले जा रहे थे। वहुत सी मशीनें नई विलायती थीं।

उसी समय जूही और काशीवाई पहुँचीं। झाँसी का समाचार दिया। तात्या एक वड़ा सैन्य खण्ड लेकर झांसी की सहायता के लिये आया परन्तु वह झांसी के निकट नहीं पहुंच पाया। थोड़ी दूर पर रोज से मुठभेड़ हो गई। काशीबाई इस युद्ध में मारी गई। तात्या अपनी बची-वचाई सेना और सामग्री को लेकर कालपो लौट आया। जूही उसके साथ आई।

रानी को तात्या के लौट जाने का हाल दूरवीनों से मालूम हो गया था परन्तु वह विचलित नहीं हुई।

किले में रानी का वही क्रम जारी रहा—एक मोर्चे से दूसरे मोर्चे पर पहूँचना, निरीक्षण करना और उत्साह प्रदान करना। एक स्थल पर जवाहरसिंह से भेंट हो गई।

रानी ने पूछा, 'उस मामले की जाँच पड़ताल की।'

जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'जी हाँ सरकार, पीरअली वुरी कसम खाता है। कहता है कि दीवान दूल्हाजू को रक्षा के लिये साथ ले गया था। रात में जो जासूसी उसने की उससे और कुछ पता तो नहीं लगा, क्योंकि रोज ने अपनी योजना केवल अपने मातहत जनरलों को

बतलाई थी परन्तु यह अवश्य मालूम हो गया है कि अङ्गरेज़ों को अभी तक दो लाख रुपये की तो बारूद ही खर्च करनी पड़ी है। उनके पास बारूद की कमी हो गई और गोले भी बहुत नहीं हैं। शायद कलकत्ते से कुमुक मंगवाई है।'

रानी ने कहा, 'मुझको भासता है अङ्गरेज लोग कल बिकट युद्ध करेंगे। तात्या का जो सामान उन लोगों के हाथ में पड़ा होगा उससे उनको बहुत सहायता मिलेगी। न जाने बिचारी काशी और जूही कहां होंगी।'

जवाहरसिंह उत्तर ही क्या दे सकता था?

रानी ने एक क्षण सोचकर कहा, 'दीवान दूल्हाजू मिले? उनसे पूछा?'

'नहीं मिले,' जवाहरसिंह ने उत्तर दिया, 'कुमुक बदल गई है। सुन्दरबाई ओर्छा फाटक पर हैं। दीवान साहब कहीं, चले गये हैं।'

'बरहामुद्दीन?' रानी ने प्रश्न किया।

जवाहरसिंह ने जवाब दिया, 'सागर खिड़की पर था। मैंने उनको सावधान रहने के लिये झिड़क दिया है।'

इसी समय क़िले वाले महल पर ज़ोर का धड़ाका हुआ। रानी क़िले की तरफ चलीं। जवाहरसिंह भी। रानी ने निवारण किया, आप शहर के मोर्चों को एक बार फिर देखकर थोड़ा विश्राम कर लो। मैं देखती हूं यह क्या है।

रानी ने क़िले में जाकर देखा। गोला महल पर पड़ा था। महल के दो खण्ड नष्ट हो गये। पानी भरने वाले ब्राह्मण और मन्दिरों के पुजारी महल के बीचों बीच नीचे वाले खण्ड में छिपे हुये थे। रानी ने उनको दिलासा दी। खुद महल के पास टहलने लगीं। दो बज गये। गुलामगौस पश्चिमी तोपखाने पर अन्य तोपचियों के साथ था—लालता मारा जा चुका था। दक्षिणी तोपखाने पर मोतीबाई, पूर्वी पर भाऊ बख्शी और क़ेन्द्रीय पर मुन्दर। इन लोगों को महल का हाल बतलाया। उन्होंने

निशाने साधे। अनुभव से दुश्मन के ठीक स्थलों की सही जानकारी हो गई थी। गोलावारी से अंग्रेजी तोपखाने बन्द हो गये। महल में छिपे हुये ब्राह्मण इत्यादि पसीने में तर वाहर निकल आये और सुख पूर्वक सो गये।

सवेरे एक चिट्ठी वरहामुद्दीन ने रानी के हाथ में दी। वह उसका इस्तीफा था। उसमें लिखा था:—

'मेरा विश्वास नही किया। मुझको उल्टा डाटा–फटकारा गया। मेरा मन काम में नहीं लगता। मैं नौकरी छोड़ता हूँ। हथियार पीरअली को दे दिये गये हैं। पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहियेगा।'

रानी को क्रोध आने को हुआ परन्तु उन्होंने संयम कर लिया।

वोलीं, 'ऐन समय पर तुम जैसे लोग ही काम छोड़ते हैं। जाओ हटो।' और चिट्ठी उन्होंने अपने अङ्गरखे की जेब में रख ली।

दूसरे दिन जैसा युद्ध हुआ उससे रोज की सेना के छक्के छूट गये। वहुत उपाय करने पर भी रोज उस दिन एक अँगुल वरावर भी सफलता प्राप्त न कर सका। नित्य की वही कहानी—दीवारों में छेद हुये, वुर्जों की मुड़ेरें जगह-जगह पर टूटीं, शहर में मकान ध्वस्त हुये, आगें लगी, कुछ लोग मरे, दीवारों और वुर्जों की मरम्मत तुरन्त कर ली गई, आगें वुझा ली गईं, लोगों के मरने से जीवितों में और अधिक हिंसा जागी और दृढ़ता बढ़ी। रात को भी वही क्रम। युद्ध की भयंकरता ने स्थिरता पकड़ ली। वह झांसी वालों के जीवन में एक नित्य की बात हो गई।

रानी ओर्छा फाटक पर पहुंचीं। दूल्हाजू अभी ठिये से हटा न था। सुन्दर भी मौजूद थी।

रानी ने यकायक पूछा, 'दूल्हाजू, तुम पीरअली के साथ अङ्गरेज छावनी में कभी गये?'

'अङ्गरेज छावनी में मैं···मैं', रुंघे गले से दूल्हाजू ने जवाब दिया, 'मैं सरकार कब?'

रानी—'कभी सही। गये या नहीं?'

दूल्हाजू—'मैं ! तो, कभी कहां गया !'

रानी—'नहीं गये ?'

दूल्हाजू—'नहीं सरकार।'

रानी—'पीरअली कहता है कि तुम उसके साथ गये थे।'

दूल्हाजू—'वह झूठ बोलता है, सरकार।'

रानी—'सम्भव है। और यह लाल झण्डा क्या है ?'

दूल्हाजू—'लाल झण्डा ! लाल कैसा ? झण्डा क्या सरकार ?'

रानी—'घबराओ मत, मैं लाल झण्डे की सब बात जानती हूँ।'

दूल्हाजू—'मैं थक गया हूँ, सरकार। दिमाग काम नहीं कर रहा है। कुछ समझ में नहीं आ रहा है। लाल झण्डा ! पीरअली बड़ा वेईमान और झूठा है।'

सुन्दर—'आज इनसे तोप ठीक नहीं चली।'

'ये मुझसे व्यर्थ रुष्ट हैं। इनको बराबर प्रसन्न रखने का प्रयत्न करता हूं।'

रानी—'कोई बात नहीं। कल ठीक-ठीक काम करना। मुन्दर साथ है। वह सहायता करेगी।'

रानी को बरहामुद्दीन याद आ गया। वह और अधिक इस्तीफे नहीं चाहती थीं।

सुन्दर बोली, 'इनको किले में रख लीजिये। मैं आज रात और कल दिन भर तोपखाना सम्भाले रहूंगी।'

रानी ने कहा, 'आज रात आराम के साथ काम कर लो, कल दिन में अवकाश नहीं मिलेगा। कल रात इस मोर्चे का ऐसा प्रबन्ध करूंगी जिसमें तुम दोनों को काफी विश्राम मिल जाय।'

रानी सागर खिड़की पर पहुँचीं। उस समय पीरअली कार्यभार अपने स्थानापन्न को सौंप रहा था।

उसको देखते ही हड़बड़ा गया।

रानी ने कहा, 'दूल्हाजू कहते हैं कि कल तुम्हारे साथ कभी बाहर नहीं गये। तुमने दीवान जवाहरसिंह से कहा कि तुम्हारे साथ गये थे ?'

पीरअली ने हिम्मत बांधी। बोला, 'वे मेरे साथ जरूर गये सरकार। डर के मारे उन्होंने सच्ची बात नहीं कही। व्यर्थ झूठ बोले। मैं उनके मुँह पर कह सकता हूँ। दिशा मैदान के बाद हाजिर हो जाऊंगा।'

रानी ने कहा, 'कोई जल्दी नहीं, थोड़ी देर में किले पर आओ।'

'बहुत अच्छा हुजूर,' पीरअली ने मुक्ति की सांस लेकर कहा।

रानी पूर्व और उत्तरी फाटकों पर होती हुई उन्नाव फाटक पर आईं। यहाँ पूरन कोरी अन्य कोरियों के साथ तोप पर था। कोरियों को शाबाशी दी।

पूरन से पूछा, 'झलकारी कहां है ? अच्छी तरह तो है ?'

'सरकार', पूरन ने कहा, 'घरै है। अवईं बुलवाउत, दिन भर इतै काम करत रई, अवईं थोड़ी देर भई जब गई।'

'नहीं बुलाओ मत।' रानी बोलीं, 'वैसे ही पूछा।'

वे आगे बढ़ गईं।

सब फाटकों से घूमती हुई हलवाईपुरे में आईं। बाजार का चौधरी मिला। लखपति में से था। यह सवेरे इतने पानी से हाथ-मुँह धोया करता था कि पानी सौ-सवासौ गज तक बह जाता था।

रानी ने मुस्कराकर कहा, 'अब भी उतने ही पानी में हाथ धोते हो ?'

'सरकार,' चौधरी ने उत्तर दिया, 'आजकल सब व्योपार बन्द हैं। मुँह हाथ धोते-धोते इतने व्यापारियों से बात करनी पड़ती थी कि पानी बहाने का ध्यान ही न रहता था।'

रानी ने कहा, 'अब व्योपार के साथ पानी बहाना भी बन्द है।'

उस महाकठिन परिस्थिति में भी रानी की इस बात पर बाजार वाले हँसे, हँसते रहे और विपत्ति में धैर्य और साहस पाते रहे।

जो मिला, उससे कोई न कोई मीठी बात कह कर, ढाढ़स बंधाती हुईं रानी किले पर लौट आईं। गोलाबारी का कहीं कम जारी था।

रात समाप्त हुई।

रानी ने सवेरा होते ही सिपाहियों और उनके सरदारों में समाचार भेजा—'आज मैं स्वयं अपने लोगों के लिये कलेवा तैयार करूंगी। खूब खाओ और डटकर लड़ो।'

सुनते ही थके-मांदे और अर्धमृत सिपाहियों तक की छातियां फूल उठीं।

ब्राह्मणों ने आटा रांधा। रानी ने उसमें हाथ लगाया। ब्राह्मणों ने ही पूड़ियां सेंकीं। रानी ने उसमें भी सहयोग दिया। किले के भीतर वाले सरदारों को उन्होंने अपने हाथ से उनके ठियों पर जा-जाकर कलेवा वितरित किया।

हर्ष और अभिमान के मारे वे सब के सब उन्मत्त हो गये। रानी की छुई हुई पूड़ीं तक के एक-एक टुकड़े को पगड़ी के, अङ्गरखे के छोर में कस के बांध लिया। और कस कर बाँधे—प्राणों की गांठ में प्रण।

रानी को पीरअली का स्मरण आया—भूलती तो वे कभी कुछ थी ही नहीं। बुलवाया। मालूम हुआ कि दिशा मैदान के लिये जाने के बाद फिर नहीं दिखलाई पड़ा; यह भी पता लगा कि दिशा निस्तार के लिये मुंहरी के रास्ते से गया था।

रानी ने क्षण के लिये असमञ्जस में पड़ीं।

उनको विश्वास हो गया कि पीरअली झूठ बोलता है और कदाचित् दूल्हाजू सच; परन्तु बरहामुद्दीन ने लिखकर दिया था—पीरअली और दूल्हाजू से होशियार रहियेगा। किसी निश्चय पर पहुंच चुकी थीं कि चारों दिशाओं से अङ्गरेजों ने गोलावारी शुरू कर दी।

[४३]

रानी ने झटपट दलपतियों और गोलन्दाजों को यथोचित आज्ञायें दीं।

अङ्गरेजों का निश्चय जान पड़ता था कि कहीं से भी परकोट की दीवार को फोड़ें और झांसी में घुस पड़ें और झांसी वालों का निश्चय था जब तक शरीर में रक्त है, तब तक दुश्मन का पैर झांसी के भीतर न पड़ने देंगे।

झाँसी की गोलाबारी से आकाश में जलते हुये गोलों की आग की चादर तन गई। इस चादर में से अङ्गरेजी सेना के सिर पर फटे हुये गोलों से गोलियां, कीलें किर्चें बरसती थीं। भूनकर खाक कर डालने वाली हवाइयां विस्फोट कर रही थीं। दक्षिणी मोर्चे पर, जीवनशाह की टौरिया से लेकर ओर्छा फाटक के सामने वाले टेक* तक अङ्गरेजी तोपखाने अत्यन्त वेग के साथ जवाब दे रहे थे।

अपने तोपखानों की रक्षा में अंग्रेज बन्दूकची एक टौरिया से ओर्छा फाटक की टेकड़ी के बीच में सतरें बांधकर ओर्छा फाटक और सैंयर फाटक की ओर बढ़े। परकोटे की बुर्जों और कोट की दीवार के छेदों में से बन्दूकों और हलकी तोपों ने यमराज के शापों को उगला। अंग्रेजी पल्टन बिछने लगी। पैर उखड़े। पीछे भागने को हुई परन्तु उस क्रिया में भी उद्धार न पाकर मार्ग के पत्थरों की ओट में छिप गई। लेकिन एक दस्ता ओर्छा फाटक की ओर बढ़ आया। अंग्रेज तोपखाने ने भीषणतर गोलाबारी आरम्भ की। सैंयर फाटक की ओर भी एक दस्ता बढ़ा।

---

*अब इस पर विपिन विहारी कालेज और बोर्डिंगहाउस है।

रानी और मोतीबाई ने दूरबीन से देखा। ओर्छा फाटक के सामने वाली टेक के पीछे लाल झण्डा उठा। ओर्छा फाटक पर का तोपखाना कुछ धीमा पड़ा।

'सरकार,' मोतीबाई ने अनुनय किया, 'मुझको इस ओर जाने दीजिये। सुन्दर अकेली है। दूल्हाजू के हाथ-पाँव ढीले हो गये हैं।'

'जाओ मोती। हीरा बनकर लौटना' रानी ने कहा।

मोतीबाई चली गई। खुदाबख्श सैंयर फाटक पर था। उसने मोतीबाई को आगे नहीं बढ़ने दिया।

बोला, 'ओर्छा फाटक पर मत जाओ। यहीं मेरे साथ रहो आज मैं अपने देश, अपनी रानी का नमक अदा करूँगा। मरूँगा। मेरी लाश को ठिकाने लगा देना।'

मोतीबाई का चेहरा कुम्हलाया हुआ था। परन्तु उसके सौंदर्य की किरणें छुटकी पड़ रही थीं। आंखों में आंसू आ गये।

तोप पर पलीता डालते डालते खुदाबख्श ने चिल्लाकर कहा, 'यह वक्त आंसुओं का है ?'

मोतीबाई ने बारूद की कालोंच वाले हाथों से आंसू मसल डाले। बोली, 'नहीं। अब आंसू नहीं आवेंगे।'

खुदाबख्श ने उमंग के साथ कहा, 'आज मैं आपका, हमेशा के लिये कैदी हो गया।'

मोतीबाई आंख मिलाकर बोली, 'और हमेशा के लिये मैं आपकी।'

खुदाबख्श ने देखा कि रास्ते पर गोरे फाटक की ओर बढ़े चले आ रहे हैं। तोपों बन्दूकों की बाढ़ हुई।

खुदाबख्श ने मोतीबाई को आदेश दिया, दाहिने हाथ की पूरी ताकत तक बन्दूकें, पत्थर, कटे हुये पेड़ों के लक्कड़ इन

लोगों के सिर पर पटकवाओ। दौड़ो। अङ्गरेज वहां से सीढ़ी लगाकर चढ़ने का उपाय कर रहे हैं।'

मोतीबाई दौड़ी। सीढ़ी लगाने का उपाय करने वाले सब के सब मारे गये। उनके ऊपर गोलियां, पत्थरों के बड़े बड़े ढोंके और कटे हुये पेड़ों के लक्कड़ जो वहां पहिले से जमा थे, बरसाये गये। शहर और किले से ढोल, ताशे और तुरही का कान फोड़ने वाला नाद हुआ। अङ्गरेजों ने अपनी पैदल पल्टन को वापिस बुलाने का बिगुल बजाया। पल्टन गिरते-मरते लौट पड़ी।

रोज जीवनशाह की टौरिया के पीछे घोड़े पर था और उसके मात-हत अफ़सर बगल में।

रोज ने कहा, 'नाऊ आर नैव्हर' (या तो अभी या कभी नहीं) तार से यह आदेश ओर्छा फाटक टेक और जार पहाड़ी के तोपखाने को दिया गया। ओर्छा फाटक टेक ने इसका जो अर्थ लगाया वह लाल झण्डे को और ऊँचा करना था।

इधर रोज के चार अफसर-चारों लैफ्टिनेंट यौवन प्रमत्त--टेकड़ियों, पत्थरों, अपनी तोपों की बाढ़ों की आड़ें लेते हुये सैंयर फाटक की दाहिनी वगल की टेकड़ी की दीवार के नीचे पहुँच गये। उस जगह दीवार थोड़ी देर पहले ही आधी धुस्स हो गई थी। साथ ही उस जगह वाले सैनिक मारे गये। इन अफसरों में से दो ने अपनी देह की सीढ़ी बनाई। उन पर से वाकी दोनों चढ़ गये। इन दोनों ने अपनी सेना के एक दस्ते को संकेत किया। दस्ता आगे बढ़ा। इतने में तलवार लिये मोतीबाई टूट पड़ी। लैफ्टिनेंट ने पिस्तौल चलाई। खाली गई। मोतीबाई ने एक बार में ही उसको खतम कर दिया। दूसरे लैफ्टिनेंट ने तलवार के हाथ किये परन्तु मोतीयाई ने उसको भी समाप्त किया। नीचे वाले दोनों अफसर एक पत्थर की आड़ में छिप गये। इतने में झांसी के दूसरे सिपाही वहां आ गये। खुदाबख्श के तोपखाने ने आगे बढ़ते हुये दस्ते को नष्ट कर

दिया और मोतीबाई के निकट वाले सिपाहियों ने उन दोनों लैफ्टिनेंटों को बन्दूक से समाप्त कर दिया। यह अङ्गरेजी सेना की दूसरी हार हुई।

उत्तरी फाटकों पर भी जोर का हमला था परन्तु ठाकुरों, काछियों, कोरियों और तेलियों की चतुरता तथा वहादुरी के कारण कुछ नहीं कर पा रहे थे।

इधर दक्षिणी मोर्चों पर अङ्गरेजों ने तीसरा आक्रमण शुरू किया।

रानी ने किले पर से देखा कि ओर्छा फाटक का तोपखाना वहुत मन्द गति से काम कर रहा है। उन्होंने रामचन्द्र देशमुख को तुरन्त भेजा परन्तु देशमुख को वहां तक पहुंचने के लिये समय चाहिये था।

मोतीबाई खुदाबख्श के पास पहुँच गई। ओर्छा फाटक की टेक के पीछे लाल झण्डा और ऊँचा हुआ। खूब हिला और फिर छिप गया। दूल्हाजू ने केवल बारूद भर-भर कर तोप चलाई—उसमें से गोले निकलते ही कैसे ?

सुन्दर उससे पश्चिम की ओर जरा हटकर ऊँची वुर्ज पर से तोप चला रही थी। उसके साथी गोलन्दाज मारे जा चुके थे। केवल उसकी तोप कुछ काम कर रही थी। उसने दूल्हाजू का व्यापार देख लिया।

सामने की टेक के पीछे से गोरी पल्टनें टिड्डी दल की तरह उभर पड़ीं और 'हुर्रा' घोष करती हुई भरोसे के साथ ओर्छा फाटक पर दौड़ीं। दूल्हाजू लोहे का एक छड़ हाथ में लेकर बुर्ज से नीचे तुरन्त उतरा। सुन्दर को समझने में एक क्षण की भी देर नहीं लगी। उसने भी तोप छोड़ दी। केवल तलवार उसके पास थी। तलवार खींचकर अपनी वुर्ज से नीचे उतरी। वहां से ओर्छा फाटक जरा दूर पड़ता था।

सुन्दर के नीचे उतर पाने के पहले ही दूल्हाजू फाटक के पास पहुंच चुका था। फाटक पर मोटी सांकलों और कुन्दों में मोटी झर वाले ताले पड़े हुये थे। कुञ्जियाँ किले में थीं परन्तु दूल्हाजू के हाथ में लोहे की मोटी छड़ तो थी। उसने जरा भी विलम्ब नहीं किया।

उछल कर ताले में छड़ डाली। तड़ाक से ताला टूट गया। दूसरे और तीसरे में डाली। सब टूट गये। दो सांकलों को भी तोड़ दिया और तीसरी साँकल खोल दी। फाटक केवल भिड़े रह गये। दूल्हाजू फाटकों को खोल नहीं पाया था कि नङ्गी तलवार लिये सुन्दर आ पहुँची।

'देशद्रोही, नरक के कीड़े', सुन्दर ने कड़ककर कहा, 'तू अंग्रेजों से कुछ नहीं पावेगा।' सुन्दर दूल्हाजू पर पिल पड़ी।

उसकी तलवार का वार दूल्हाजू ने लोहे की छड़ पर झेला। तलवार झन्ना कर बीच से टूट गई। तलवार का जो टुकड़ा सुन्दर की मुट्ठी में बचा था उसी को तान कर सुन्दर दूल्हाजू पर उछली। दूल्हाजू ने छड़ का सीधा हूला दिया। वह ठप से बायें वक्ष पर लगा। साथ ही बाहर तुमुल 'हुर्रा' घोष हुआ।

चोट की परवाह न करके सुन्दर ने फिर वार किया। दूल्हाजू पीछे हटा। परन्तु उसने सुन्दर के पेट पर छड़ अड़ा दी। उधर गोरों ने धक्के से फाटक खोल दिया। सुन्दर के मुँह से 'हर हर महादेव' निकला था कि एक गोरे की गोली ने सौन्दर्यमयी सुन्दर को अमर कर दिया। गोली उसके सिर पर पड़ी थी।

दूल्हाजू ने छड़ पृथ्वी पर टेक दी। दूल्हाजू पर गोरों की बन्दूकें सीधी हुईं परन्तु उनके अफसर ब्रिग्रेडियर ने तुरन्त निवारण किया, 'आवरमैन' (अपना आदमी है)

गोरों ने बन्दूकें नीची कर लीं। टिड्डी दल की तरह भीतर घुस पड़े।

अफसर ने कहा, 'यह रानी है ?'

दूल्हाजू ने उत्तर दिया, 'नहीं साहब, महज नौकरानी।'

अफसर ने अपने साथियों से कहा, 'बट ए सोल्जर। शी बिल हैव ए सोल्जर्स आनर।' (लेकिन सिपाही है। सिपाही की इज्जत उसको मिलेगी)

स्वर्गवासिनी सुन्दर की दृढ़ मुट्ठी अभी ढीली नहीं हुई थी। तलवार का छोटा सा टुकड़ा अब भी उसकी मुट्ठी में था। दो गोरे उसके शरीर को बाहर ले गये और पत्थरों से दबा दिया। जहाँ उनके और नत्थेखाँ के भी अनेक सिपाही दवे हुये थे। उसके उपरान्त वे लोग सव दिशाओं में, शहर में घुसने लगे।

टेक के पीछे से रोज के पास तार द्वारा नगर विजय का सम्वाद पहुँचा।

रोज ने अफ़सरों से कहा, 'उस आदमी को जागीर में दो गाँव पक्के हुये।' दूल्हाजू के उस कृत्य का समाचार वहुत शीघ्र चारों ओर फ़ैल गया।

फिर रोज ने तुरन्त आदेश दिया कि सैंयर फाटक को तोड़ो, शहर में बढ़ो और सब बागियों का नाश करो।

खुदाबख्श के फाटक पर कहर पर कहर वरसने लगे। इसी समय रामचन्द्र देशमुख घोड़े पर आया। उसी समय एक गोली खुदावख्श को लगी। सैंयर फाटक का तोपखाना बन्द हुआ। एक अङ्गरेज दीवार पर चढ़ा। मोतीवाई ने तलवार से उसका सिर कलम कर दिया और खुदावख्श की लाश को टांग कर नीचे उतर आई। रामचन्द्र ने मोतीवाई को अपने पीछे घोड़े पर बिठलाया और लाश को सामने लाद कर किले पर चढ़ आया। उसके किले में आते ही किले का फाटक बन्द कर लिया गया। लाश को महल के पास रख कर ढक दिया गया। मोतीवाई की आँख से आँसू नहीं निकला।

रानी आ गईं।

'मोतीवाई', रानी ने कहा, 'तुम लोगों का अक्षय कर्म मैंने अपनी आँखों देखा है।'

'सरकार', मोतीबाई ने भर्राये हुये स्वर में कहा, 'काम देखिये। अपने पास किला अब भी है और आप हैं। मैं इनका प्रबन्ध करती हूँ।'

'महल के बिलकुल निकट ही', रानी कण्ठ को संयत करके बोलीं, 'कुंवर साहब को दफनाया जावे।'

देशमुख ने पूछा, 'सुन्दर ?'

'ओर्छा फाटक पर मारी गई', मोतीवाई ने उत्तर दिया, 'दूल्हाजू ने देशद्रोह करके फाटक खोल दिया।'

रानी ने होठ सटाये।

धीरे से बोलीं, 'जीवन में यही वड़ा भारी धोखा खाया।'

फिर उन्होंने जरा जोर से कहा, 'वरहामुद्दीन ने ठीक कहा था। उसके साथ अन्याय हुआ। कहां है, कुछ जानते हो देशमुख ?'

'नहीं सरकार' 'देशमुख से संक्षिप्त उत्तर दिया।

रानी ने अंगरखे की जेव में हाथ डाला।

वरहामुद्दीन का इस्तीफा जेव में था। उसको उन्होंने वहीं पड़ा रहने दिया।

मोतीवाई ने महल के पास ही क़बर के लिये मिट्टी खुदवानी आरम्भ कर दी और वहुत शीघ्र ही एक वड़ा गड्ढ़ा खुदवा लिया।

रानी दूरवीन लेकर ऊपर की बुर्ज पर चढ़ गईं।

रोज नगर की बुर्ज पर बुर्ज अपने अधिकार में करता चला जा रहा था। गोरे शहर भर में फैलते चले जा रहे थे। झांसी की सेना मरती-कटती जा रही थी आगें लगाई जा रही थीं। झांसी में हाहाकार हो रहा था और उसके साथ तुमुल 'हुर्रा' घोष। रानी ने देखा कि शहर वाले महल, नाटकशाला और महल के सामने वाले विशाल पुस्तकालय को, गोरे घेरने का प्रयास कर रहे हैं और इन स्थानों के भीतर वन्द झांसी के सैनिक लड़ रहे हैं। तव वे बुर्ज से नीचे उतर आईं।

एक पेड़ के नीचे पत्थर पर बैठकर सोचने लगीं, 'झांसी का सर्वनाश होने को है। स्वराज्य की स्थापना अभी दूर है परन्तु कर्म करने मात्र का अधिकार है, फल से हमको क्या ?'

उठ खड़ी हुईं।

जवाहरसिंह' रघुनाथसिंह, गुलाम ग़ौस, भोऊ बख्शी, गुलमुहम्मद, भोपटकर इत्यादि सरदारों को बुलवाया। उन लोगों को अपना निश्चय सुनायाः—

'बाहर निकल कर लड़ो, गोरों को शहर से निकालो और झांसी की रक्षा करो।'

सलाह-सम्पत्ति का तो न समय था और न मौका।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'हुज़ूर की शुक्रिया। फौरन चलें। गोरों को शहर से निकालें।'

रानी ने आदेश दिया, 'गोलन्दाज अपने-अपने ठियों पर काम करते रहें।'

भाऊ बख्शी ने आगे बढ़कर रानी के पैर पकड़ लिये।

प्रार्थना की, 'सरकार, मुझको बाहर साथ जाने की आज्ञा दी जाय। मेरी तोप पर किसी और को कर दिया जाय।'

'अच्छा, गोलन्दाजों में से केवल तुम,, रानी ने कहा' 'जल्दी करो। विलम्ब का काम नहीं।'

बख्शी साथ हो गया।

भोपटकर की इच्छा न थी कि रानी बाहर जाकर लड़ें परन्तु वह स्तब्ध रह गया। रानी फुर्ती के साथ तैयार होकर किले के बाहर हो गईं। साथ में पठान, बुन्देलखण्डी इत्यादि पन्द्रह सौ सैनिक। पीछे भोपटकर भी गया। दक्षिण की ओर से आ-आकर गोरे महल के पश्चिम की ओर बढ़ रहे थे।

रानी झंझावत की तरह पहले दक्षिण की ओर झपटीं, जहां से अंग्रेजी सेना घुसी चली आ रही थी। रानी का छापा इतना प्रचण्ड था कि अंग्रेजी सेना भागी। पूर्व की ओर के मकानों की आड़ से बन्दूकें चलाने लगी। तलवारों की मार के सामने वह बिलकुल न ठहर सकी।

रानी ने चिल्लाकर कहा, 'आज प्रमाणित कर दो कि हिन्दुस्थानी सिपाही की तलवार के सामने संसार का कोई योद्धा नहीं टिक सकता।'

उनके दस्ते ने ऐसी तलवार चलाई कि गोरी-पल्टन बिखर कर हट गई, परन्तु, मकानों की आड़ से गोलियां चलाने लगी। पांच सौ पठान दक्षिण और पूर्व दिशाओं में फैलकर फिर भी गोरों को पीछे हटाते रहे—और मरते रहे। रानी के महल और हाथीखाने के आस-पास* गोरी सेना फैल हुई थी और उसके लिये मकानों की आड़ थी। जवाब देने के लिये रानी की सेना भी उसी प्रकार और उसी दिशा में फैली। गोरी सेना के कुछ सिपाही दवाव पड़ने के कारण पश्चिम दिशा की ओर बढ़े। वहां उनको अटकना पड़ा।

रानी उसी ओर बढ़ रही थीं कि उन्होंने देखा कि एक सिपाही किसी मकान में से निकल पड़ा और अकेले उन कई गोरों से भिड़ गया। उसने ऐसी तलवार चलाई कि कई गोरे हताहत हुये। कुछ और गोरे आ गये। वह सिपाही घिर गया। तो भी वह अकेला उनको पछेलता गया। रानी ने अपने घोड़े को तेज किया पीछे-पीछे उनके सिपाही दौड़े। उस अकेले सिपाही ने फिर कई गोरों को तलवार के घाट उतारा, परन्तु यकायक उस पर कई वार पड़े, वह गिर गया। इतने में रानी सैनिक सहित आ पहुंची। गोरे भाग गये।

रानी ने पास जाकर देखा—वरहामुद्दीन था। उसके मरने में कुछ क्षण बाकी थे। बैचेन था। रानी घोड़े से उतरीं। वरहाम के सिर पर हाथ फेरा। वरहाम ने पहिचान लिया। उसने आंखें फाड़ीं। पूरा बल लगाया। लेकिन कठिनाई से बोल पाया, 'हुज़ूर, माफ़ी।'

---

*अब यहां सदर अस्पताल है। अस्पताल के उत्तर में टकसाल मुहल्ला।

मुश्किल से रानी के मुंह से निकला, 'तुम सच्चे सिपाही हो। माफ किया।'

फिर जोर लगाकर बरहान ने कहा, 'सरकार, जान नहीं निकलती। मेरी चि···ट्···ठी।'

रानी ने जेब से उसके इस्तीफे का काग़ज़ निकाला। 'यह लो,' रानी बोलीं।

'नहीं, स···र···का···र,' बड़ी मुश्किल से बरहाम ने कहा, 'फाड़···डा···लि···ये तब···जान नि···क···ले···गी।'

रानी ने तुरन्त चिट्ठी की चिन्दी-चिन्दी कर डाली।

बरहामुद्दीन के मुखमण्डल पर उस घोर पीड़ा में आनन्द की छाप लग गई। उसके अन्तिम शब्द थे: ज···ल···वा अल्ला ह।'

भाऊ ने आकाश की ओर दृष्टि करके कहा,

'आहा कैसा मीठा मरण है यह! भगवन् मेरी भी ऐसी ही सद्-गति हो।'

बरहामुद्दीन का प्राणान्त हो गया।

पास के रहने वालों को क़बर का प्रबन्ध देकर रानी और उनके सैनिक गोरों पर झपटे। वे भागे। अब पश्चिम से पूर्व होती हुई दक्षिण तक रानी के सैनिकों की एक पांत सी बन गई। पीठ पर क़िला था।

यकायक वृद्ध नाना भोपटकर रानी के सामने आ गया।

बोला, 'पहले इस बूढ़े ब्राह्मण का वध करिये तब आप गोली खाइये।'

रानी—'नाना साहब, यह क्या?'

नाना—'आप देखती नहीं हैं, गोरे मकानों की आड़ से गोली चला रहे हैं और आपके सैनिक हताहत हो रहे हैं। आप पर गोली पड़ी कि समग्र झांसी रसातल को गई। अभी अपने हाथ में क़िला है। लड़ाई जारी रखी जा सकती है। लौटिये या मेरा वध करिये।'

रानी की समझ में आ गया।

गुलमुहम्मद पास आ गया था। उसने भी कहा, 'सरकार, बुड्ढा ठीक कहता है। अन्दर चलें।'

उत्तरी फाटक से रानी क़िले में भाऊ और नाना झोपटकर के साथ चली गईं। गुलमुहम्मद के साथ तीन सौ पठान ही भीतर जा सके। बाकी सब लड़ाई में मारे गये। बुन्देलखण्डी सैनिक लगभग सब कट मरे। क़िले के फाटक बन्द कर लिये गये।

[४४]

गोरों ने शहर के सब फाटकों पर अपना प्रबन्ध कर लिया, उनको अपने उन निशस्त्र पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के खून का बदला लेना था, जिनको बख्शिशअली इत्यादि बहुत थोड़े से हिन्दुस्थानियों ने मारा था। पांच वर्ष की आयु से अस्सी वर्ष तक के जितने पुरुष मिले उनका क़तल शुरू कर दिया। हलवाईपुरा में आग लगा दी। कुछ स्त्रियां अपने सतीत्व के नष्ट होने के भय से कुओं में गिरकर मर गईं। रोज का आदेश था कि स्त्रियों को न मारा जाय, उनको जान बूझकर गोरों ने नहीं मारा। लेकिन अपने पति की रक्षा के लिये जो स्त्रियां उनकी आड़ बनाने के लिये आ गईं वे गोलियों से मरीं। झाँसी के कवि और गायक भी लड़े थे, वे मारे गये या घायल हुये।

गोरों ने घर-घर में घुसना और सोना-चांदी इत्यादि सामान लूटना शुरू किया।

शहर वाले राजमहल के चारों ओर अङ्गरेजी सेना का सब से अधिक उपद्रव हुआ। नाटकशाला के सामने दक्षिण की ओर रानी का अस्तबल था। उस अस्तबल को रानी के बुन्देलखण्डी सिपाहियों ने किले की लड़ाई में परिवर्तित कर दिया। वे लगभग कुल पचास ही। परन्तु जब तक एक भी जिन्दा रहा अङ्गरेजों ने अस्तबल पर कब्जा नहीं कर पाया। एक-एक दीवार, एक-एक कोठरी, एक-एक ईंट पर कब्जा करने में अङ्गरेजों को न जाने कितने सिपाही बलिदान करने पड़े।

इसके बाद महल की एक-एक इञ्च भूमि के लिये युद्ध हुआ। जब महल के सब सिपाही खतम हो गये तब उस पर भी कब्जा हो गया। सब सामान लूटा। महल के सिरे पर अङ्गरेजी झण्डा लगा दिया। महल के केवल उस भाग को छोड़कर, जिस पर यह झण्डा फहरा रहा था, बाकी महल में आग लगा दी गई।

नाटकशाला भी न बची। सुन्दर पर्दे, जिनकी सहायता से शकुन्तला रत्नावली और हरिश्चन्द्र नाटक खेले जाते थे, खाक कर दिये गये।

और इसके बाद जो कुछ हुआ उससे उन बर्बरों की पाशविकता इतिहास में अमिट अक्षरों में लिख ली गई— महल के सामने वाले विशाल पुस्तकालय में आग लगा दी गई! थोड़ी ही देर में कलाओं का बड़ा भांडार अग्नि की गगनभेदी लौ फेंकने लगा। कभी रोम, सिकन्दरिया और राजग्रह में भी ऐसा हुआ था परन्तु वह बर्बर युग था! और यह विज्ञान का सभ्य युग!!

रानी ने किले पर से देखा। उनके हाथ में दूरबीन न होती तो भी दिखलाई पड़ सकता था। पर दूरबीन ने सब स्पष्ट दृष्टिगोचर करा दिया।

अस्तबल मिटा—फिर बन सकता था। राजमहल जला—उसके बनवाने वाले फिर उत्पन्न हो जायंगे। लेकिन पुस्तकालय? वेद, शास्त्र, पुराण, काव्य, इतिहास इत्यादि संस्कृत के और अरबी फारसी के अनेक हस्तलिखित ग्रन्थ जिनकी प्रतिलिपि करने के लिये दूर दूर के विद्या-व्यसनी आते थे फिर कौन पैदा करेगा? रानी का माथा घूमने लगा। जिसको किसी कष्ट, किसी समस्या, किसी विपत्ति ने कभी नहीं हिला पाया था, वह जलते हुये पुस्तकालय को देखकर मूर्छित होने को हुईं। मुन्दर साथ थी। उसने सँभाल लिया। रानी ने प्रबल प्रयत्न करके मूर्छा को दूर किया। पानी मँगवाया, पिया। इतने में हलवाईपुरा और कोरियों के मुहल्लों की आगों की लपटें दिखलाई दीं। क्रन्दन, पुकार और चीत्कार की समग्र ध्वनियां यकायक सुनाई पड़ीं—जन-वध, कतलआम लोक-संहार का प्रत्यक्ष प्रमाण। रानी का हृदय धसने लगा।

'मुन्दर, मुन्दर, मेरी प्यारी झांसी की यह कुगति, यह दुर्गति! और मेरे जीते जी! मेरी आंखों के सामने!' रानी ने भरे गले से कहा। गला फट सा गया। मुन्दर उनको खींचकर नीचे ले आई।

महल की चौखट पर बैठकर रोईं। लक्ष्मीबाई रोईं! वह जिसकी आंखों ने आंसुओं से कभी परिचय भी न किया था! वह जिसका वक्ष-स्थल वज्र का और हाथ फौलाद के थे! वह जिसके कोश में निराशा का शब्द न था! वह जो भारतीय नारीत्व का गौरव और शान थी! मानो उस दिन हिन्दुओं की दुर्गा रोई।

मुश्किल से आंसुओं की अविरल धारा टूटी थी कि रामचन्द्र देशमुख ने कर्तव्यवश समाचार दिया, 'सरकार, कुंवर गुलाम गौसखाँ दुश्मन की गोली से मारे गये!'

रानी सिंहनी की तरह उछल कर खड़ी हो गईं। अङ्गरखे के छोर से आंसू पोंछ डाले। गला साफ किया।

आज्ञा दी, 'भाऊ को उनकी जगह भेजो और लाश को महल के पास।'

आज्ञा पालन के लिये देशमुख चला गया। रानी मुन्दर को साथ लेकर दक्षिणी बुर्ज के नीचे, जहां खुदाबख्श के शव के लिये कबर तैयार हो चुकी थी, आईं। मोतीबाई वहां थी।

पश्चिमी बुर्ज से भाऊ बख्शी अङ्गरेजी शिविर पर धड़ाधड़ गोला-बारी कर रहा था। केन्द्रीय बुर्ज मे रघुनाथसिंह। दक्षिणी बुर्ज शांत थी।

'मोतीबाई,' रानी ने कहा, 'मैं दफनाने का प्रबन्ध करती हूं, तुम तब तक इस बुर्ज के तोपखाने को तो जगा दो।'

खुदाबख्श के शव के मोह में मोतीबाई जरा ठमठमाई।

रानी बोलीं, 'अभी विलम्ब है। कुँवर गुलाम गौसखां का भी शव यहीं आ रहा है।'

विस्फारित लोचन मोतीबाई ने विस्मय के साथ कहा, 'क्या उस्ताद मारे गये?'

'हां मोती,' रानी ने उत्तर दिया। मोतीबाई तोप पर चली गई। पहली वाढ़ दागी थी कि उस पर नजदीक से गोलियों की बौछार हुई। अङ्गरेज किले के सदर फाटक के पास आ गये थे और उनको पास से निशाना लेने का सुअवसर था। बुर्जों की मुड़ेरें उस दिन के युद्ध में टूट गई थीं और उनकी मरम्मत न हो पाई थी। अन्य गोलियां तो मोतीबाई के आसपास से निकल गईं परन्तु एक ने कन्धा नीचे से फोड़ दिया। हृदय उसका बच गया, मृत्यु अवश्यम्भावी थी।

उधर से गुलामगौस की लाश आई। इधर से एक सैनिक मोतीबाई को उठा लाया। उसको पानी पिलाया गया। रुधिर बहुतायत से जारी था परन्तु वह अचेत न थी।

मुन्दर ने रानी से दक्षिणी बुर्ज के तोपखाने को सम्भालने की अनुमति चाही।

रानी ने दृढ़तापूर्वक इनकार किया, 'नहीं। यहीं ठहर। तुमको अब सहज ही नहीं खोऊँगी।'

मोतीबाई का सिर रानी ने अपनी गोद में रख लिया।

मोतीबाई की आंखों में आंसू भर आये। बोली, 'इस गोदी में सिर रक्खे हुये मरना किसी और के भाग्य में नहीं, बाई साहब।'

रानी ने सिर पर हाथ फेरते हुये कहा, 'मेरी मोती तू आज हीरा हुई।'

'सरकार', मोतीबाई ने व्याकुल स्वर में कहा, 'मैं कुछ भी हूं परन्तु शुद्ध हूँ।'

'नहीं तू शुद्ध ही नहीं', रानी बोलीं, 'तू पवित्र है। देख हीरा, एक दिन सबको मरना है परन्तु सत्कार्य में प्राण देना, भगवान का ध्यान करते-करते मरना, यह जन्म भर की अच्छी कमाई से ही प्राप्त होता है।'

मोतीबाई ने आंख मीची। उसका चेहरा पीला पड़ गया।

रानी ने कहा, 'आत्मा अमर है। शरीर का चाहे जो कुछ हो, वही एक अविनाशी शेष रहता है।'

मोती अचेत हो गई ।

रानी ने दो क़बरें और तैयार करने के लिये आज्ञा दी । कबरें तुरन्त तैयार हो गईं ।

रानी की गोदी मोतीबाई के खून से तर हो गई । मोतीबाई का पीला मुर्झाया चेहरा एकदम प्रदीप्त हुआ । आंखें अधमुदी हुईं, होठ फड़के । उसके मुंह से निकला—'रानी···उजाला···ला···' और वह मुर्झाया हुआ फूल अनन्त विकास पाकर विखर गया ।

मुन्दर ने कहा, 'सरकार, इनको और कुंवर खुदाबख्श को एक ही क़बर में रक्खा जावे ।'

रानी बोलीं, 'ऐसा नहीं होता और फिर यह कुमारी थी ।'

तीनों को अलग अलग कबरों में, परन्तु पास पास दफना दिया गया ! अन्त्येष्टि क्रिया गुलमुहम्मद ने की । रघुनाथसिंह ने उन तीनों वीरों को तोप की सलामी दी ।

सन्ध्या होने को आ रही थी । इसलिये जल्दी जल्दी में चबूतरा इन तीनों का पक्का और एक ही बांध दिया गया । चबूतरे के ऊपर निशान इन तीनों के अलग अलग बना दिये गये ।

इसके उपरान्त रानी ने नहाया-धोया । कपड़े बदले, वेश वही पुरुष सैनिक का ।

महल के पीछे खण्ड में मुख्य लोगों को इकट्ठा किया ।

बोलीं, 'आज तक आप लोगों ने अप्रतिम वीरता से झांसी की रक्षा की । प्राणों की होड़ लगादी । परन्तु अब चिन्ह अच्छे नहीं देख पड़ते हैं । हमारे लगभग सभी सूरमा और दलपति और गोलन्दाज काम आ गये । दीवारों और फाटकों के रक्षक वीर मारे गये । किले की चार सहस्त्र सेना में से उतने सौ भी नहीं बचे हैं । अङ्गरेजों ने किला घेर लिया है । वे एकाध दिन में ही भीतर आ जावेंगे । आप लोगों में से जो लड़ते-लड़ते बचेंगे उनको क़ैद और फांसी होगी । मैं पकड़ी तो नहीं जा सकती परन्तु मेरे शव को फिरंगी स्पर्श

करेंगे। इतने से ही मेरे पुरखों का, मेरे विख्यात ससुर का अपमान हो जायगा। अब शिवराम भाऊ की वहू के लिये केवल एक साधन शेष है। बारूद की कोठी में सैकड़ों मन बारूद है। मैं वहां जाती हूं और पिस्तौल के धड़ाके के साथ अपने पुरखों में मिली जाती हूं। किले से बाहर जाने में कुछ देर है। रात का काफी-अन्धेरा आप लोगों को मिल जायगा।'

भाऊ बख्शी घर्राते हुये कण्ठ से बोला, 'मैं भी उसी बारूद के साथ, सरकार की सेवा के लिये यात्रा करूंगा।'

नाना भोपटकर ने तुरन्त कहा, 'आप आत्मघात करने जा रही हैं। यही न? कृष्ण का पूरा गीता जिसको कण्ठाग्र याद है और जो गीता के अठारहवें अध्याय को अपने जीवन में वर्तती चली आई हैं, और जो प्रत्येक परिस्थिति में स्वराज्य की स्थापना के यज्ञ की वेदी पर संकल्प कर चुकी है वह आत्मघात करेगी। करिये कृष्ण का गीता का अपनान। आप रानी हैं। आपकी आज्ञा का पालन तो सबको करना ही है। परन्तु आपके उपरांत की जनता आपके लिये क्या कहेगी—जिनकी रक्षा के लिये आपने बीड़ा उठाया था?

रानी ने सिर नीचा कर लिया।

वृद्ध भोपटकर कहता गया, 'आप राजमाता हैं। आपके नन्हासा दामोदरराव पुत्र है। वह आपके पुरखों का प्रतीक, झाँसी की आशा है। कालपी में अभी पेशवा की सेना मौजूद है। दिल्ली, लखनऊ, कागपूर इत्यादि के पतन हो जाने पर भी जनता का पतन नहीं हुआ। विन्ध्यखंड महाराष्ट्र और अवध अक्षय हैं।

आप किले के बाहर होइये, अङ्गरेजों की सेना को चीरते हुये निकल जाइये और कालपी पहुँच कर पुनश्च हरिओ३म् कीजिये।'

'रानी सोचने लगीं। भोपटकर ने मुन्दर को दामोदरराव के लिवा लाने के लिये इशारा किया। वह उसके लेने के लिये चली गई।

रानी की आंखों के सामने एक दृश्य घूम गया:—

'कुरुक्षेत्र का मैदान है। कौरव पांडवों की सेनायें एक दूसरे के सामने डटी हुई हैं। अर्जुन ने कृष्ण से कहा, 'भगवान् मेरा साहस डिग गया है। मेरा सामर्थ्य हिल गया है। मैं असमर्थ हूं। लड़ना नहीं चाहता। भगवान कृष्ण ने उद्बोधन किया। अर्जुन ने फिर गाँडीव धनुष हाथ में ले लिया।'

आंखों के भीतर ही रानी को एक चमत्कार की अभिव्यक्ति हुई।

इतने में दामोदरराव वहां आ गया। दौड़कर रानी की गोद में बैठ गया।

गुलमुहम्मद ने कहा, 'सरकार, अमारा सारा कौम मुलक वास्ते कट मरेगा।'

रानी उठीं। उन्होंने नाना भोपटकर के पैर छुये। कहा, 'एक दिन मैंने आपकी राजनीति पर आक्षेप किया था। मुझको क्षमा करना नाना साहब।' फिर एक क्षण बाद बोली, 'भाइयो, मेरी इस क्षणिक दुर्बलता को भूल जाना। मैं लड़ूंगी। आज सबके सामने प्रण करती हूँ कि यदि समस्त अङ्गरेजों का मुझको अकेले सामना करना पड़े, तो करूंगी।

उस अत्यन्त हीन परिस्थिति में भी किले के भीतर वाले नर-नारियों में उमङ्ग का उजाला भर गया।

रानी ने कहा, 'थोड़ा सा खा-पी लो। जो लोग शस्त्र ग्रहण नहीं कर सकते वे गुप्त मार्ग से निकल जायें। शेष मेरे साथ उत्तरी द्वार से भांडेरी फाटक होते हुए कालपी की ओर चलें। भांडेरी फाटक का प्रबन्ध कौन करेगा?

भाऊ बख्शी ने जिम्मा लिया। उसका मकान कोरियों के मुहल्ले के निकट था। और वह उन लोगों को अच्छी तरह जानता था। बख्शी गुप्त मार्ग से किले के बाहर चला गया। रानी ने पुराने सेवक-सेविकाओं को पुरस्कार देकर विदा किया। वे पैर छू-छूकर, रो-रोकर वहाँ से चले गये। नाना भोपटकर भी चला गया।

जवाहरसिंह को रानी ने आज्ञा दी, 'आप अपने इलाके में जाकर सैन्य संग्रह करिये और कालपी जाइये।'

जवाहरसिंह ने प्रार्थना की, 'मैं आपको सुरक्षित स्थान में पहुंचा कर लौटूंगा अन्यथा नहीं। केवल इस आज्ञा का जीवन में उलङ्घन किया है। इस अपराध के लिये क्षमा चाहता हूं।'

रानी ने स्वीकार किया।

थोड़े समय उपरान्त रानी और मुन्दर महादेव के मन्दिर में गईं। वन्दना की। ध्यान किया।

समाप्ति पर रानी ने मुन्दर से कहा, 'वह पलाश अब भी फूल रहा है। सिन्दरोत्सव के दिन की मालायें अब भी उससे लिपटी होंगीं।'

मुन्दर बोली, 'एक बार उसको भेंट लीजिये, बाईसाहब।'

'अवश्य', रानी ने कहा, 'वह हर साल फूलेगा और झांसी हर साल सिन्दरोत्सव मनायेगी। झांसी का सिन्दूर अमर हो।'

उन दोनों ने उस पलाश से भेंट की।

मुन्दर बोली, 'फूल की मालायें सूख गई हैं।'

रानी ने कहा, 'उनकी आत्मा तो हरी-भरी है। ये उनके चढ़ाये फूल हैं जो इस युद्ध में बलिदान हो गई हैं।'

इसके बाद दोनों महल पर आ गईं।

मोरोपन्त ताम्बे ने बहुत सा द्रव्य और जवाहर ईकट्ठे किये। किले के उत्तरी भाग में नीचे की ओर द्वार की बग़ल में एक हवेली, हाथाखाना और घुड़सार थी। लड़ाई के दिनों में जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह इसी हवेली में रहते थे। मोरोपन्त ने एक हाथी पर जवाहर और अशर्फियां लादीं। और लोगों ने कमर में अशर्फियां बांधीं। रानी और मुन्दर पुरुष वेश में घोड़ों पर सवार हुईं।

उस समय रात बहुत नहीं गई थी। पूर्व दिशा में बड़ा तारा ऊपर चढ़ आया था। घना अँधेरा केवल शहर की आगों से फट-फट जा रहा था। अँधेरे के ऊपर बड़े-छोटे तारे दमदमा रहे थे। नीचे शहर के अँधेरे पर उन आगों के बड़े-बड़े लाल-पीले छपके से पड़ जाते थे।

रानी ने एक चादर से दामोदरराव को पीठ पर कसा और अपने तेजस्वी सफेद घोड़े को किले के उत्तरी भाग से निकाल कर आगे किया। पीछे-पीछे पठान, मुन्दर, जवाहरसिंह, रघूनाथसिंह इत्यादि। द्वार से निकलते ही उन्होंने किले को नमस्कार किया, झांसी को नमस्कार किया। कण्ठ में कुछ अवरोध सा अवगत किया। इस भय से कि कहीं आंख में आंसू न आ जाय, उन्होंने उत्तर दिशा की ओर मुँह मोड़ा और किले के उतार के नीचे आ गईं। किला बिलकुल सूना छोड़ा।

मोरोपन्त का हाथी बीच में था। सवार अधिक न थे। उनकी रक्षा के हेतु बाकी सैनिक पैदल थे। नङ्गी तलवारें लिये हुये।

यह टोली टकसाल के पश्चिम वाले मार्ग से भांडेरी फाटक की ओर अग्रसर हुई। जैसे ही कोतवाली की बराबरी पर आई, अँग्रेजी सेना से भिड़ा-भिड़ी हो गई। रानी 'हर हर महादेव' उच्चार करती हुईं उनको चीरती-फाड़ती मुन्दर सहित निकल गईं। पठान शत्रुओं से बेतरह लड़े। बहुत से मारे गये बाकी आगे बढ़े।

जगह-जगह जलते हुये मकानों से उजाला हो रहा था। रानी और उनके सङ्गी द्रुतगति से भांडेरी फाटक के निकट पहुंच गये। वहाँ बख्शी कोरियों को लिये हुये अङ्गरेजी फौज की एक टुकड़ी को तलवार के युद्ध में उलझाये हुये था। इधर से रानी की टुकड़ी पहुँची। जलते हुये मकानों में प्रकाश में थोड़ी देर के लिये विकट युद्ध हुआ। बख्शी ने फाटक खोल दिया और फिर अपने कोरी सैनिकों को लेकर अङ्गरेज टुकड़ी पर टूट पड़ा। जान पड़ता था कि उसको जीवन का मोह नहीं। वैसे ही निर्मोही पठान थे। बख्शी फाटक की बगल में मारा गया। उसने मरने के पहले रानी को देख लिया था। मरने के पहले उसने 'हर हर महादेव' और

रानी लक्ष्मीबाई अंग्रेजी सेना में से मार्ग बना कर जवाहरसिंह, गुलमुहम्मद आदि चुने हुये सरदारों के साथ झांसी छोड़ रही हैं।

'झांसी की रानी की जय' का घोष किया था। उसके शरीरपात को रानी ने देखा परन्तु इतना समय भी न था कि मुंह से धन्य भी कह पातीं।

थोड़े से लोगों के साथ रानी बाहर हो गईं। मरने से बचे हुये अँग्रेज सैनिक भाग गये। कोरियों ने भांडेरी फाटक फिर बन्द कर लिया* और भाऊ बख्शी को एक जलते हुये मकान के अगांरों में डालकर उसकी अन्त्येष्टि करदी।

रानी और उनके साथियों को कोट के बाहर की भूमि का राई-रत्ती पता था। अन्धेरे में वह सहज ही बढ़ती चली गईं। बातचीत बिलकुल धीरे-धीरे होती थी। अछनी की टौरिया के पास ओर्छे की सेना का पहरा था और एक अङ्गरेजी छावनी का। यहां रोक-टोक हुई, लड़ाई भी। यहां से रानी के साथ केवल दस-बारह सवार रह गये और मुन्दर।

आगे निर्गम मार्ग। अगाध अंधेरा। झींगुर झङ्कार रहे थे। उनके ऊपर घोड़ों की टापों की आवाज हो रही थी। सब ओर सन्नाटा छाया हुआ था। पीछे झांसी में आगें जल रही थीं और आवाजें आ रही थीं। आगे अन्धकार में जंगल और गढ़मऊ का पहाड़ लिपटे हुये, दबे हुये से दिखलाई पड़ रहे थे। चिड़ियां पेड़ों पर से भड़भड़ा कर उड़ती और घोड़ों को चौंका देतीं। घोड़े जल्दी चलाये जाने के कारण ठोकर ले ले पड़ते थे। आगे का मार्ग अन्धकार पूर्ण और भविष्य तिमिराच्छन्न। ज्यों त्यों करके आरी नामक ग्राम के पास से यह टोली आगे बढ़ गई। पहूज नदी मिली। लोगों ने चुल्लुओं से पानी पिया और फिर आगे बढ़े। कभी धीमी गति से कभी तेजी के साथ। जब दस-बारह मील निकल आये तब ये लोग कुछ क्षण ठहरे।

---

*यह फाटक ७५ वर्ष तक ज्यों का त्यों बन्द रहा। १९३३ के जाड़ों में खोला गया।

रानी ने जवाहरसिंह और रघुनाथसिंह से कहा, 'अब आप लोग लौट जाओ और सेना एकत्र करके मुझे कालपी में आकर मिलो।

रघुनाथसिंह ने तुरन्त कहा, 'यह कार्य दीवान जवाहरसिंह अच्छा कर सकते हैं। मैं तो साथ चलूंगा।'

रानी मान गईं। जवाहरसिंह ने उनके पैर छुये और कटीली की ओर चला गया।

रानी की टोली आगे बढ़ी। इसमें गुलमुहम्मद और उसके कुछ पठान भी थे।

जनरल रोज़ को रानी के निकल जाने का पता बहुत शीघ्र लग गया। उसने तुरन्त लैफ्टिनेन्ट बोकर नामक अफसर को कुछ गोरों और निजाम हैदराबाद के एक दस्ते के साथ रानी का पीछा करने के लिये भेजा।

मोरोपन्त भांडेरी फाटक से निकल कर अञ्जनी की टौरिया तक आया परन्तु जैसे ही यहां लड़ाई छिड़ी, उसने समझ लिया कि हाथी महान सङ्कट का कारण होगा। उसने दतिया की दिशा में हाथी को मोड़ दिया और जितनी तेजी सम्भव थी उतनी तेजी के साथ भागा। कुछ अङ्गरेज सवारों ने पीछा किया। उसकी जांघ में किसी घुड़सवार की तलवार का घाव भी लगा परन्तु वह निकल गया और सवेरे दतिया में पहुंच गया। एक तम्बोली के यहां ठहरा। परन्तु छिपाये छिप नहीं सकता था। राज्याधिकारियों को मालूम हो गया। राज्य ने हीरे-जवाहर सब जब्त कर लिये और मोरोपन्त को पकड़ कर तुरन्त झांसी भेज दिया।

रोज ने दिन के दो बजे जलते हुये महल और भस्मीभूत पुस्तकालय के बीचों-बीच मोरोपन्त को फांसी दे दी।

जैसे ही झलकारी को मालूम हुआ कि रानी भांडेरी फाटक से बाहर निकल गईं, उसने चैन की साँस ली घर के एक कोने में थोड़ी देर पड़ी रही। पूरन बाहर से आया।

बोला, 'अब इतैं सें भगने पर है।'

झलकारी—'तुम चले जाम्रो। मैं घरैं हों। गोरा लुगाइयन सें नईं बोल हैं।'

पूरन—'मैं कहत इतैं से चल। जिद्द जिन कर। तैं मारी जैय और मैं मारो जैंग्रों।'

झलकारी—'देखौ मोसें हट न करौ। कऊँ जा दुकौ। मैं घर न छोड़ हों, न छोड़ हों बालाजी की सौगन्ध।'

पूरन उसके हठीले स्वभाव को जानता था। वह एक लोटा पानी लेकर खण्डहल में जा छिपा।

थोड़ी देर में झलकारी को अपने दरवाजे के सामने घोड़े की टाप का शब्द सुनाई पड़ा। झांक कर देखा। बिना सवार का बढ़िया घोड़ा ज़ीन समेत। ज़ीन से जान पड़ता था कि झांसी की सेना का है। झलकारी समझ गई कि सवार मारा गया और घोड़ा भाग खड़ा हुआ है।

झलकारी ने किवाड़ खोले। घोड़े को पकड़ा और घर के पास वाले पेड़ से बांध दिया। फिर भीतर चली गई।

उसने एक योजना सोची और उसको कार्यान्वित करने का निश्चय किया। जब उसने निश्चय किया तब वह सीधी तनकर खड़ी हो गई थी।

झलकारी ने अपना श्रृङ्गार किया। बढ़िया से बढ़िया कपड़े पहिने—ठीक उसी तरह जैसे लक्ष्मीबाई करती थीं। गले के लिये हार न था परन्तु कांच की गुरियों का कण्ठा था। उसको गले में डाल लिया। प्रातःकाल की प्रतीक्षा करने लगी।

प्रातःकाल के पहले ही हाथ-मुँह धोकर तैयार हो गई।

पौ फटते ही घोड़े पर बैठी और बड़ी ऐंठ के साथ अङ्गरेजी छावनी की ओर चल दी। साथ में कोई हथियार न लिया। चोली में केवल एक छुरी रख ली।

थोड़ी दूर पर गोरों का पहरा मिला। टोकी गई।

झलकारी को अपने भीतर भाषा और शब्दों की कमी पहले पहल जान पड़ी। परन्तु वह जानती थी कि गोरों के साथ चाहे जैसा भी बोलने में कोई हानि न होगी।

झलकारी ने टोकने के उत्तर में कहा, 'हम तुम्हारे जंडेल के पास जाउता है।'

यदि कोई हिन्दुस्थानी इस भाषा को सुनता तो उसको हँसी आये न रहती।

एक गोरा हिन्दी के कुछ शब्द जानता था। बोला, 'कौन ?'

'रानी—झांसी की रानी लक्ष्मीवाई', झलकारी ने बड़ी हेकड़ी के साथ जवाब दिया।

गोरों ने उसको घेर लिया।

उन लोगों ने आपस में तुरन्त सलाह की।

'जनरल रोज़ के पास अविलम्ब ले चलना चाहिये।'

उसको घेर कर अपनी छावनी की ओर बढ़े।

शहर भर के गोरों में हल्ला फैल गया कि झांसी की रानी पकड़ ली गईं। गोरे सिपाही खुशी में पागल हो गये। उनसे बढ़कर पागल झलकारी थी।

उसको विश्वास था कि मेरी जांच-पड़ताल और हत्या में जब तक अंग्रेज उलझेंगे तब तक रानी को इतना समय मिल जायेगा कि काफी दूर निकल जावेंगी और बच जावेंगी।

झलकारी रोज़ के समीप पहुँचाई गई। वह घोड़े से नहीं उतरी। रानियों की सी शान, वैसा ही अभिमान, वही हेकड़ी। रोज भी कुछ देर के लिये धोखे में आ गया।

शक़्ल सूरत वैसी सुन्दर। केवल रंग वह नहीं था।

रोज ने स्टूअर्ट से कहा, 'हाउ हैन्डसम, दो डार्क एण्ड टैरिबिल, (कितनी सुन्दर है, यद्यपि श्यामल और भयानक)

स्टुअर्ट बोला, लेफ्टनेंट बोकर को सदल व्यर्थ ही भेजा।

परन्तु छावनी में राव दूल्हाजू था। वह खबर पाकर तुरन्त एक आड़ में आया। उसने बारीकी के साथ देखा।

रोज के पास आकर दूल्हाजू बोला, 'यह रानी नहीं है, जनरल साहब। झलकारी कोरिन है। रानी इस प्रकार सामने नहीं आ सकतीं।'

झलकारी ने दूल्हाजू को पहिचान लिया। उसको क्रोध आ गया और वह अपना अभिनय नितान्त भूल गई।

क्रुद्ध स्वर में बोली, 'अरे पापी, ठाकुर होकैं तैनें जौ का करौ।'

दूल्हाजू जिमीन में गड़सा गया।

रोज को झलकारी की वास्तविकता समझाई गई।

रोज के मुँह से निकला, 'यह औरत पागल हो गई है।'

रोज ने झलकारी को घोड़े पर से उतरवाया।

रोज—'तुम रानी नहीं हो। झलकारी कोरिन हो। तुमको गोली मारी जायगी।'

झलकारी ने निर्भय होकर कहा, 'मार दै, मैं का मरबे खों डरात हों? जैसे इत्तै सिपाई मरे तैसैं एक मैं सई।'

रोज ने झलकारी के पागलपन का कारण तलाश किया।

मालूम होने पर दङ्ग रह गया।

स्टुअर्ट बोला, 'शी इज़ मैड (वह पागल है)।'

रोज ने सिर हिलाकर कहा, 'नो स्टुअर्ट। इफ़ वन परसेंट आव इण्डियन वीमन बिकम सो मैड एज दिस गर्ल इज़ वी विल हैव टु लीव आल दैट वी हैव इन दिस कंट्री।' (न स्टुअर्ट, यदि भारतीय स्त्रियों में एक प्रतिशत भी ऐसी पागल हो जायें जैसी यह स्त्री है तो हमको हिन्दुस्थान में अपना सब कुछ छोड़कर चला जाना पड़ेगा)

स्टुअर्ट की समझ में आया।

रोज ने समझाया, 'यह स्त्री हम लोगों को अपने धोखे में उलझाकर रानी को भाग निकलने का समय पाने के लिये यह प्रपञ्च रच कर

आई है परन्तु बोकर पीछे पीछे गया है। आशा है कि वह इस धोखे से बच गया होगा।'

जनरल रोज ने झलकारी को तङ्ग नहीं किया। केवल क़ैद में डाल दिया और एक सप्ताह उपरान्त छोड़ दिया।

सवेरा होते ही रानी भांडेर के नीचे बहने वाली पहूज नदी के किनारे पहुंच गईं। हाथ मुंह धोया ही था कि लैफ्टिनैण्ट बोकर अपनी टुकड़ी सहित आ धमका। रानी ने तुरन्त ओटें लेकर सामना किया। बोकर के कई साथी मारे गये। बोकर स्वयं घायल होकर झांसी लौट गया। रानी का घोड़ा घायल हो गया। थोड़ी दूर चल कर मर गया। उन्होंने एक गांव से दूसरा घोड़ा लिया और लगभग आधी रात के समय कालपी पहुंच गईं।

इधर झांसी में कई दिन विजन हुआ। लगभग तीन सहस्र व्यक्तियों का वध किया गया।

जब रानी कालपी पहुंचीं रावसाहब—नाना का भाई—और तात्या वहीं थे। रानी का इन लोगों ने जी खोलकर आदर-सत्कार किया।

परन्तु रानी आदर की भूखी न थीं। वे काम चाहती थीं। लेकिन वह कालपी में अस्त-व्यस्त था।

[४६]

रानी ने कालपी में दूसरे ही दिन पेशवा की सेना को व्यवस्थित करने की योजनायें बनानी प्रारम्भ कर दीं, कुछ कार्यान्वित हुईं। अनेक पेशवा की ढील-ढाल में यों ही पड़ी रहीं।

कालपी की सेना का शिथिल सङ्गठन देखकर रानी का जी दुख-दुख जाता था।

रावसाहब और उनकी सेना पर भंग-रंग छाया हुआ था। इस सेना में बहुत से चोर और डाकू भी भर्ती हो गये थे। नायकों का यह हाल था कि 'अपनी-अपनी ढपली, अपना-अपना राग।'

रोज ने कालपी पर चढ़ाई कर दी। कोंच में युद्ध हुआ। पेशवा की सेना हारी। फिर कालपी में युद्ध हुआ। रानी ने जिस प्रकार सैन्य-सञ्चालन और मोर्चे बांधने की बात कही थी वह नहीं चल पाई। कालपी की लड़ाई में रानी के पास ढाई सौ लालकुर्ती सवार थे। रानी ने अपने शौर्य, चातुर्य और इन सवारों के सञ्चालन से रोज के कई मोर्चों को कँपा दिया, परन्तु प्रधान सेनापतित्व रावसाहब के हाथ में था, इसलिये विद्रोही इस युद्ध को भी हार गये। बहुत सी युद्ध-सामग्री कालपी में ही छोड़कर उनको ग्वालियर की दिशा में भागना पड़ा। भागकर गोपालपुरा में दम ली।

रावसाहब के पास रईस और सरदार तो काफी हो गये थे, परन्तु सेना बहुत कम थी। तोपें नहीं थीं, सामान नहीं बचा था। और व्यवस्था तो कभी भी न थी।

दिन भर लू चली। रात को भी काफी गरम हवा चल रही था। नारे धूल की पतली चादर से ढके हुये थे। गोपालपुरा के एक बगीचे में रावसाहब, तात्या, बांदा के नवाब इत्यादि आगे की योजना के आकार-प्रकार बना-बिगाड़ रहे थे। रात अंधेरी थी। पास में कोई उजाला

न था। इसलिये किसके चेहरे पर क्या गुजर रही थी, कोई नहीं देख सकता था।

रानी लक्ष्मीबाई अपने शिविर में थीं। उस दरबार में न थीं।

रात भर विवाद जारी रहा परन्तु ये लोग किसी भी निश्चय पर न पहूँच सके।

प्रातःकाल के उपरान्त तात्या रानी को लिवा लाया। तात्या ने उनको रात के अधिवेशन का संक्षिप्त में वृत्तान्त सुना दिया था।

लोग भङ्ग पीकर निवृत्त हो गये थे। हुक्के गुड़गुड़ा रहे थे कि वे आ गईं। लोग उनका अदब करते थे, इसलिये हुक्के हटा दिये गये।

पेशवाई सेना की अधोगति का उनको पता था। तो भी उन्होंने अपने क्षोभ को दबाकर परिस्थिति को भलीभांति समझने के लिये प्रश्न किये। जो उत्तर मिले उनका निचोड़ वही था जो रात की बैठक में बांदा के नवाब ने बतलाया था—'हम लोग पिंजड़े में फँस गये हैं।'

रानी ने कहा, 'अब तब हम लोग जहां-जहां अङ्गरेजों से जम कर लड़ पाये, वहां-वहां किलों का आश्रय लेकर। फिर किसी मजबूत क़िले को हाथ में करना चाहिये। तोपें सहज ही ढल जायेंगीं। काम चालू हो जायगा।'

रावसाहब—'परन्तु झांसी और कालपी के किले तो फिर नहीं मिल सकते—कम से कम अभी हाल हाथ नहीं आ सकते।'

रानी—'इनको कुछ दिनों विचार से अलग रखिये।'

तात्या—'नरवर का किला बहुत अच्छा है। निकट सिन्ध नदी है। आस-पास पहाड़ और जङ्गल हैं।'

नवाब—'करेरा का भी किला अच्छा है।'

रानी—न।

रावसाहब—'तब फिर कौन सा किला ?'

रानी—'ग्वालियर का। यही यहां से अत्यन्त निकट है।'

रावसाहब—'ग्वालियर का किला !'

नवाब—'ग्वालियर का !'

रानी—'हाँ, ग्वालियर का। ग्वालियर की वस्तुस्थिति का अनुसंधान करके तुरन्त ग्वालियर पर आक्रमण कर देना चाहिये। राजा और वहां के दो-तीन सरदार अङ्गरेज कम्पनी के पक्षपाती हैं परन्तु सेना और जनता नहीं। सेना यदि हमारा पक्ष प्रबलता के साथ न भी पकड़ेगी तो ढुलमुल अवश्य रहेगी। ग्वालियर में बनी-बनाई सजी-सजाई बढ़िया तोपें, गोले, गोली, सैकड़ों मन बारूद और अन्य प्रकार की युद्ध-सामग्री तथा अटूट कोष हैं।'

नवाब—'लेकिन...'

रावसाहब—'हाँ, परन्तु...'

रानी—'किन्तु-परन्तु, कुछ नहीं। बिना किले के कोई भी प्रयास आत्म-वध के समान होगा और सिवाय ग्वालियर के किले के हमारे लिये सब किले स्वप्न हैं।'

रावसाहब—'बात तो ठीक कह रही हैं, बाहसाहब, आप भी सोचिये नवाब साहब। क्यों तात्या ?'

नवाब—'मैं रानी साहब की राय को मानने के लिये तैयार हूँ। लेकिन ग्वालियर की सेना या कुछ सरदारों को, चढ़ाई के पहले मिला लेना चाहिये।'

तात्या—'वहां का हाल मुझको मालूम है। माहुरकर, बलवन्तराव और दिनकरराव दीवान के सिवाय और सब सरदार स्वराज्य-स्थापना के पक्ष में हैं। सेना का काफी अंश हमारा साथ देगा।'

रानी—'एक बार फिर जाओ। शीघ्र जाओ और पूरा पता लगाकर शीघ्र आओ।'

रावसाहव—शीघ्रता के लिये तो तात्या शेरों का शेर है ।

आज्ञा पाकर तात्या तुरन्त ग्वालियर की ओर रवाना हुआ ।

ग्वालियर स्थित अङ्गरेजी सेना में विद्रोह फैल चुका था । तात्या को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ा ।

उसके लौटने पर रावसाहव का दल ग्वालियर पहुँच गया । ग्वालियर की सेना इस दल से आ मिली । ग्वालियर-नरेश की छोटी सी सेना लड़ी और हार गई । राजा को अपने दो एक सरदारों के साथ अङ्गरेजों के पास आगरे भाग जाना पड़ा । पेशवा का अधिकार ग्वालियर पर हो गया । रावसाहव ने तीसरी जून को एक विशाल दरबार किया । पेशवाई का राजतिलक करवाया ! उत्सवों का प्रवाह सा आ गया । भङ्ग बूटी, लड्डू मिठाई, श्रीखण्ड इत्यादि की मानो, वर्षा हो उठी ।

आनन्द के इस तूफान में यदि कोई नहीं पड़ा तो लक्ष्मीवाई और उनके पांच नायक—उनकी लालकुर्ती सेना अवश्य इनाम की भागी बनी ।

ग्वालियर का गायन–वादन शताब्दियों से प्रसिद्ध रहा है । इसलिये उसका अखण्ड उपयोग किया जाने लगा । नृत्य और गायन से दिन और रात ओतप्रोत हो गये । ग्वालियर की ऐसी कोई भी नर्तकी और गायिका न थी, जिसको अपने कला-कौशल के दिखाने का काफी अवसर और समय न मिला हो । कवि सम्मेलन और मुशायरे भी हुये जिनमें कवि-कल्पना ने शब्दों के पुल बांध-बांधकर, जिमीन आसपास एक कर दिये । कोई पेशवा की तुलना रामचन्द्र जी के साथ कर रहा था और कोई इन्द्र के साथ । दूसरी ओर भांडों की नकलें जारी थीं, जिनमें परिहास और अट्टहास के फव्वारे छूट रहे थे ।

रानी किसी उत्सव में शामिल नहीं होती थीं । इस वैराग्यवृत्ति के कारण उनको उत्सवों में बुलाया ही नहीं जाता था ।

इन उत्सवों का प्रतिरोध करने के लिये रानी ने पेशवा से भेंट करने का प्रयत्न किया; परन्तु वहां नाच से छुट्टी मिली तो भङ्ग और निद्रा, और भङ्ग तथा निद्रा से निस्तार पाया तो नाच-रंग । तात्या इस नाच-

रङ्ग में डूब तो गया ही, उसको यह घमण्ड भी हो गया कि कोई भी अङ्गरेज जनरल उसका मुकाबला नहीं कर सकता।

निदान एक दिन तीसरे पहर रानी को ऐश्वर्य प्रमत्त पेशवा से थोड़ी देर की भेंट प्राप्त हो गई। रानी उदास थीं और क्षुब्द। पेशवा सो कर उठा था। रात की खुमारी और सवेरे की भङ्ग की छाया अब भी शेष थी। आंखें लाल थीं और शरीर अङ्गड़ाइयां चाहता था। रानी ने बहुत समझाया परन्तु रावसाहब की समझ में कुछ न आया।

[४७]

भङ्ग और नाचरङ्ग का यही क्रम जारी रहा। लड्डुओं और श्रीखंड के लिये इतनी शकर खर्च होने लगी कि सिपाहियों को भंग के लिये उसका मिलना दुर्लभ हो गया। श्रीखंड के लिये दही की इतनी मांग हो गई कि मट्ठा अप्राप्य हो गया।

ब्राह्मण भोजन और दान-पुण्य की आड़ में वेहिसाव भिखमङ्गी बढ़ गई। कोई प्रतिबन्ध या प्रवन्ध न था, इसलिये अनेक सिपाही भी इस मुफ्तखोरी में सन गये।

रानी लक्ष्मीवाई ने देखा कि जब वे अपने किले में घिर गई थीं तब स्वतन्त्र थीं, और ग्वालियर में स्वच्छन्द होते हुये भी उनकी दशा एक कैदी की सी है।

रानी का स्वभाव था कि वे जहां जाती थीं, उसके चौगिर्द का वारीकी के साथ निरीक्षण करती थीं। इस निरीक्षण से उनको युद्ध के लिये मोर्चे बनाने में बड़ी सुविधा होती थी। उनकी रणनीति में इस क्रिया का विशेष स्थान था।

उन्होंने देखा कि ग्वालियर का क़िला और पश्चिम-दक्षिण की पहाड़ियां ग्वालियर की बस्ती और लश्कर के नगर की अच्छी रक्षा कर सकती हैं। पूर्व की ओर पहाड़ियों का सिलसिला लश्कर से लगभग दो मील पड़ता था--यह भी रक्षा का साधन हो सकता था, परन्तु उत्तर-पूर्व में मुरार की ओर दिशा खुली पड़ी थी। उसको ढकने के लिये सोनरेखा नाम का केवल एक नाला था, जो लश्कर को तीन ओर से घेर कर कतराता हुआ मुरार की ओर चला गया था; परन्तु यह कोई वड़ा साधन न था, उल्टे कुछ अड़चन डाल सकता था। इसके सिवाय दक्षिणवर्ती पहाड़ियों का क्रम, जिसके अगले भाग पर दुर्गा का मन्दिर था, शत्रुओं के लिये भी लाभदायक हो सकता था और पूर्व की ओर की पहाड़ियां यदि शत्रु की तोपों के लिये मिल जायं तो लश्कर का नगर

और ग्वालियर तथा मुरार की वस्तियां पूरे संकट में आ जायें। उनकी इच्छा थी कि यदि पेशवा की सेना के दस्ते सब ओर से बढ़ती हुई आने वाली अँग्रेजी सेनाओं का आगे जाकर मुकाबिला न करें तो कम से कम इन पहाड़ियों पर यथास्थान तोपखाने तो लगा लें। परन्तु वहां भग की तरंग और श्रीखंड की अखण्डता में उनकी सुनता ही कौन था ?

इस निरीक्षण के सिलसिले में उनको एक बाबा गंगादास का पता चला। इनकी कुटी सोनरेखा नाले से उत्तर ओर कुछ दूरी पर हट कर थी—किले के दक्षिणी छोर से पूर्व की दिशा में। बाबा गंगादास की कुटी फूस और लकड़ी का छान-छप्पर थी। निरीक्षण करते-करते रानी को प्यास लगी। बाबा ने पानी पिलाया। उस समय उनको मालूम हुआ कि झांसी की रानी लक्ष्मीबाई हैं। उन्होंने बाबा की आंखों में शांति का एक अद्भुत आकर्षण देखा।

पेशवा के अनसुनी कर देने के दिन से उनका मन खिन्नसा रहने लगा था। निरीक्षण करती थीं, लड़ाई के नकशे बनाती थीं, अपने सिपाहियों की कवायद-परेड कराती थीं और समय पर पूजन-ध्यान करती थीं परन्तु मन का अनमनापन नहीं जाता था।

सन्ध्या होने में विलम्ब था। लू तेज चल रही थी। रानी मुन्दर के साथ स्त्री-वेश में बाबा गंगादास की कुटी पर पहुंचीं। घोड़े एक पेड़ से बाँध दिये गये। बाबा के सासने पहुंच कर नमस्कार किया। बाबा ने आसन दिया। ठण्डा पानी पिलाया।

रानी ने कहा, 'मैं आपसे कुछ पूछने आई हूं। मेरा मन अशांत है। आपके उत्तर से शांति मिलने की आशा है।'

बाबा बोले, 'मै राम भजन के सिवाय और कुछ जानता ही नहीं हूं।'

रानी—'आप ब्राह्मण-भोजन में गये ?'

बाबा—'नहीं गया। यहीं बहुत खाने को मिल जाता है।'

रानी—'इसीलिये आपके पास आई। आप टाल नहीं सकेंगे। बतलाना होगा। आपने अकेले अपने मन को शांत कर लिया तो क्या हुआ ? हम लोगों को भी शांति दीजिये।'

वावा—'पूछो बेटी। यदि समझ में आ जायगा तो बतला दूंगा।'

रानी—'यहां थोड़े दिनों में युद्ध होने वाला है। आपकी कुटी का स्थान रक्षित नहीं है। किसी सुरक्षित स्थान में न चले जाइये।'

बाबा—'सुरक्षित है। बात पूछो।'

रानी—'इस देश को स्वराज्य कैसे प्राप्त होगा ?'

बाबा—'इस प्रश्न का उत्तर राजा लोग दे सकते हैं।'

रानी—'नहीं दे सकते, तभी आपसे पूछने आई हूँ।'

बाबा—'जैसे प्राप्त होता आया है, वैसे ही होगा।'

रानी—'कैसे बाबा जी ?'

बाबा—'सेवा, तपस्या, बलिदान से।'

रानी—'हम लोग कैसे स्वराज्य स्थापित कर पावेंगे ?'

बाबा—'गड्ढे कैसे भरे जाते हैं। नींव कैसे पूरी की जाती है ? एक पत्थर गिरता है, फिर दूसरा, फिर तीसरा और चौथा, इसी प्रकार और। तब उसके ऊपर भवन खड़ा होता है। नींव के पत्थर भवन को नहीं देख पाते। परन्तु भवन खड़ा होता है उन्हीं के भरोसे—जो नींव में गड़े हुये हैं। वह गड्ढा या नींव एक पत्थर से नहीं भरी जाती। और न एक दिन में। अनवरत प्रयत्न, निरन्तर बलिदान आवश्यक है।'

रानी—'हम लोगों के जीवनकाल में स्वराज्य स्थापित हो जायगा ?'

बाबा—'यह मोह क्यों ? तुमने आरम्भ किये हुये कार्य को आगे बढ़ा दिया है। अन्य लोग आयेंगे। वे इसको बढ़ाते जायेंगे। अभी कसर है। स्वराज्य स्थापना के आदर्शवादी अपने-अपने छोटे-छोटे राज्य बनाकर बैठ जाते हैं। जनता और उसके बीच का अन्तर नहीं मिटता—घटता ही बहुत कम है। जनता बहुत बनी रहती है। जब जनता का

पूरा सहयोग राज्य को प्राप्त हो जाय और राजा टीमटाम तथा विलासिता का दासत्व छोड़कर प्रजा का सेवक बन जाय तब जानो स्वराज्य की नींव भर गई और भवन बनाना आरम्भ हो गया। शाश्वत धर्म का रूप बिगड़ गया है। इसके सुधार के विना वह भवन खड़ा न हो पायगा।'

रानी—'हम लोग प्रयत्न करते रहें ?'

बाबा—'अवश्य। तुम तो भगवान कृष्ण और गीता की भक्त हो।'

रानी—'अपने कैसे जाना ?'

बाबा मुस्कराये।

बोले, 'सब कहते हैं।

रानी—'मैं पाठ करती हूँ परन्तु समझते तो आप महात्मा लोग ही हैं।'

बाबा—'गृहस्थ से बढ़कर और कोई साधू नहीं। मुझसे कुछ और नहीं हो सका, इसलिये कुटी बना ली।'

सूर्यास्त होने को आया। रानी को सन्ध्या-ध्यान का स्मरण हुआ। कहा, 'बाबा जी, फिर कभी दर्शन करूँगी। आपकी इतनी बात से चित्त को बहुत शांति मिली।' और नमस्कार करके चली गईं।

मार्ग में मुन्दर ने कहा, 'सरकार भी इन्हीं बातों को बतलाया करती हैं ?'

'परन्तु', रानी बोलीं, 'बाबा के समान होने में बहुत देर है।'

[४८]

रावसाहब पेशवा का ऐश-आराम और ब्राह्मण-भोजन जारी रहा। जनरल रोज के उद्योग ने पहले की अपेक्षा और अधिक सबलता पकड़ी।

रोज ने अपनी सेना के कई भाग करके अनुभवी अफसरों के सुपुर्द किया। ब्रिगेडियर स्मिथ को ग्वालियर के पूर्व की ओर पाँच मील पर कोटे की सराय भेजा। एक अफसर को ग्वालियर और आगरे के मार्ग पर और स्वयं एक प्रबल दल लेकर कालपी से ग्वालियर की ओर ६ जून को बढ़ा। मार्ग में उसको ब्रिगेडियर स्टुअर्ट ससैन्स मिल गया। १६ जून को जनरल रोज बहादुर ग्राम पर आ गया, जहां जयाजीराव की हार हुई थी। जनरल रोज के साथ मध्यभारत और ग्वालियर के पोलिटिकल एजेण्ट भी थे। इन्होंने इस बीच में एक चाल खेली—जयाजीराव और दिनकरराव को आगरे से बुलवा लिया।

मुरार में पेशवा की सेना काफी थी, बाकी इधर-उधर बिखरी हुई पड़ी थी।

इनमें से अधिकांश सैनिक सिन्धिया की सेना के ही नौकर थे। यदि ये बारह-तेरह दिन नष्ट न किये गये होते और यदि इन सैनिक को विभक्त करके अपने विश्वासनीय दलपतियों की अधीनता में, शुरू से ही उनका अनुशासनमय संसर्ग स्थापित कर दिया गया होता, तो बात न बिगड़ती।

जनरल रोज ने दो घण्टे की कड़ी लड़ाई में पेशवा की मुरार वाली सेना को हरा दिया और मुरार को कब्जे में कर लिया। पेशवा की यह पराजित सेना भाग कर ग्वालियर आई। अब रावसाहब पेशवा का नशा फरार हुआ!

रोज ने जयाजीराव द्वारा पेशवा के उन सैनिकों को, जो उनकी ग्वालियर-फौज के थे, माफी का आश्वासन दिलवाया और यह लिखित घोषणा प्रकाशित करवाई कि अङ्गरेज ग्वालियर के राजा को पुनः गद्दी

दिलवाने के लिये ही लड़ने आये हैं। सरदारों और सैनिकों में फूट पड़ गई। उनके मन फिर गये। उत्सवों की रिश्वत बेकार गई ?

पेशवा, बांदा के नवाब किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें ?

तब झांसी की रानी की याद आई परन्तु उनके पास जाने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी—कैसे मुंह दिखलायें ?

तात्या को भेजा।

तात्या कलेजा साधकर उनके सामने गया। उस समय उनके पास जूही और मुन्दर थीं। तात्या नमस्कार करने के उपरान्त हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

'क्या बात है, सरदार साहब ?' रानी ने व्यङ्ग किया, 'तोपें कहां चल रहीं थीं ?'

तात्या ने विनीत भाव से कहा, 'अब क्षमा-प्रार्थना तक का समय नहीं है बाईसाहब।'

रानी बोलीं, 'क्या भङ्ग छानने का भी समय नहीं ? एक तान भी सुनने के लिये समय नहीं ?'

तात्या पैरों पर गिरने को हुआ, 'रक्षा करो देवी !'

रानी ने उसको बीच में ही पकड़ लिया।

जूही बोली, 'सरकार, क्षमा कर दीजिये।'

रानी मुस्कराईं।

'तात्या', उन्होंने कहा, 'तुम से मुझको बड़ी-बड़ी आशायें थीं। अब भी बहुत कुछ कर सकोगे परन्तु दृढ़ हो जाओ तो।'

तात्या बोला, 'जो-जो आज्ञा होगी उसका तन मन से पालन करूंगा। आपको कभी उलहने का अवसर न दूंगा।'

रानी ने उठती हुई सांस को दबा कर कहा. 'मेरा कदाचित् यह अन्तिम युद्ध होगा। क्यों मुन्दर, स्मरण है बाबा गङ्गादास ने क्या कहा था ?'

जूही बोली, 'कदापि नहीं सरकार ।'

रानी ने गम्भीर स्वर में कहा, 'स्वराज्य के भवन की नींव एक दो पत्थरों से नहीं भरेगी ।'

तात्या अधीर होकर कातरता के साथ मुँह ताकने लगा ।'

रानी फिर मुस्कराईं । तात्या को आश्वासन दिया, 'घबराओ नहीं । पेशवा से कहो कि धैर्य से काम लें । जो योजना बतलाती हूँ, उसके अनुसार काम करें । कदाचित् विजय प्राप्त हो जाय । न भी हो तो युद्ध सामग्री और सेना को दक्षिण की ओर ले चलने का प्रबन्ध रखना । तुम इस क्रिया के आचार्य हो ।'

रानी ने तात्या को थोड़े समय में अपनी योजना, विस्तार-पूर्वक समझा दी और फिर अपने पांचों सरदारों की बुद्धि में बिठला दी ।

१७ जून को सवेरे ब्रिगेडियर स्मिथ ने लड़ाई का बिगुल बजाया । लड़ाई आरम्भ हो गई । ब्रिगेडियर स्मिथ का आक्रमण कोटा की सराय से शहर पर होना था, पूर्व दिशा से रानी की तोपों की मार के भीतर आई, रानी ने गोलन्दाजों को संकेत दिया । गोलावारी होते ही अङ्गरेजी सेना की दुर्गति हुई और वह पीछे हटी । रानी के लालकुर्ती सवारों ने तुरन्त छापा मारा । स्मिथ ने एक चतुर चाल खेली—उसने अपनी उस टुकड़ी को और अधिक पीछे खींचा और रानी के सवारों को आगे बढ़ने दिया । इन सवारों के ज्यादा निकल जाने से उनका स्थान खाली हो गया । स्मिथ ने कई दिशाओं से रानी के मोर्चों पर आक्रमण किया । घमासान युद्ध हुआ । तलवार चली । लोहे ने लोहे से चिनगारियां छुटकाईं । स्मिथ ने रानी के पार्श्व पर अपनी दो पल्टनें और फेंकीं जो अभी तक चुपचाप खड़ी थीं । रानी के सवारों को पीछे हटना पड़ा । ब्रिगेडियर स्मिथ ने अपने सामने की पांतों को फोड़कर रिसाले समेत बढ़ने का संकल्प किया । उद्देश्य था फूलबाग पर अधिकार करने का ।

अपने सवारों को पीछे हटता देखकर रानी घोड़े को तेज करके तुरन्त उसके समीप पहुंचीं । गुलमुहम्मद दिखलाई दिया । उसके पास

घोड़ा दौड़ा कर बढ़ते हुये अङ्गरेजों की ओर तलवार की नोक करके बोलीं, 'खान, आज हाथ ढीला क्यों पड़ रहा है ?'

गुलमुहम्मद चिल्लाकर बोला, 'हुजूर, अमारा हाथ अब मुलाहिजा करें।'

पठान सरदार चिल्लाता हुआ, रेलपेल करता हुआ, लालकुर्तियों को बढ़ावा देता हुआ आगे फिका। रानी साथ में।

गुलमुहम्मद ने प्रखर स्वर में रानी से प्रार्थना की, 'हुजूर जूही सरदार का तोपखाना ठीक करें।'

रानी लौट पड़ीं। एक टौरिया के पीछे जूही तोपखाना की मार को जारी किये थी परन्तु लालकुर्ती को पीछे हटा देखकर हड़बड़ा गई थी। गोरा रिसाला उसकी ओर बढ़ रहा था।

'जूही', रानी ने आदेश किया, 'तोप का मुहरा एक अँगुल नीचा कर।'

'जो आज्ञा।' उसने उत्साहित होकर कहा और अपने साथियों की सहायता से तुरन्त वैसा ही किया।

'मार', रानी ने दूसरा आदेश दिया। तोप ने धांय किया। गोरे सवार बिछ गये। लौट पड़े।

रानी दूसरे स्थल पर पहुँचीं। वे जहां पहुँचती वहीं अपने सिपाहियों पर तेज छिटक देतीं।

यद्यपि उनके योधाओं की संख्या कम थी परन्तु वे उनके प्रति अटल विश्वास रखते थे। फिर बढ़े। उनकी रानी उनके साथ—दोनों हाथों एक समान कौशल और शक्ति से तलवार चलाने वालीं।

अंग्रेज वीरता के साथ लड़े और बहुत मरे। रानी के उन थोड़े से लालकुर्ती सवारों ने तो कमाल ही कर दिया। यथावत् आज्ञा का पालन करते हुये उन लोगों ने अङ्गरेजों के छक्के छुटा दिये। ब्रिग्रेडियर स्मिथ को रानी ने उस दिन की चालों में और शूरवीरों में मात दी।

स्मिथ उनके व्यूह को न भेद सका। उसको लक्ष्मीबाई के मुकाबिले में हार कर लौटना पड़ा। अङ्गरेजों ने उस दिन का युद्ध बन्द करके दम ली।

रानी ने उस दिन निरन्तर परिश्रम किया था और उनके सरदारों ने भी। इस पर भी उन्होंने रात को काफी समय तक अथक परिश्रम किया—योजनायें सुधारीं, परिवर्तित की, सलाह सम्मति दी, उनके जिन योधाओं ने उस दिन के युद्ध में कोई विशेष कार्य किया था, उनको शाबाशी दी और पुरस्कार दिये और गुलमुहम्मद को कुँवर की उपाधि प्रदान की।

ग्वालियर की सेना पर जयाजीराव की उस घोषणा के कारण प्रभाव पड़ चुका था परन्तु उस दिन उस सेना ने कोई ऐसा स्पष्ट काम नहीं किया जिससे उस पर तात्या या पेशवा को अविश्वास होता परन्तु रानी को सन्देह था। तात्या और रावसाहब ने निवारण किया। अविश्वास करने से अब होता भी क्या था? लाचार होकर दूसरे दिन के युद्ध में वे ही साधन काम में लाने पड़े जो उनको उपलब्ध थे।

ब

तुर

[४६]

अठारह जून आई। ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी। शुक्रवार। सफेद और पीली पौ फटी। ऊषा ने अपनी मुस्कान बिखेरी। रानी स्नान-ध्यान और गीता के अठारहवें अध्याय के पाठ से निबट चुकीं। झींगुरों की झंकार पर एकाध चिड़िया ने चहक लगाई। रानी ने नित्यवत् अपने रिसाले की लालकुर्ती की मर्दाना पोशाक पहिनी। दोनों ओर एक तलवार बांधी और पिस्तौलें लटकाईं। गले में मोतियों और हीरों की माला—जिससे संग्राम के घमासान में उनके सिपाहियों को उन्हें पहिचानने में सुविधा रहे। लोहे के कुले पर चंदेरी का ज़रतारी लाल साफा बांधा। लोहे के दस्ताने और भुजबन्द पहिने। इतने में उनके पाँचों सरदार आ गये।

मुन्दर ने कहा, 'सरकार, घोड़ा लँगड़ाता है। कल की लड़ाई में या तो घायल हो गया है या ठोकर खा गया है।'

रानी ने आज्ञा दी, 'तुंरन्त दूसरा अच्छा और मजबूत घोड़ा ले आ।'

मुन्दर घोड़ा लेने गई और उसने अस्तबल में से एक बहुत तगड़ा और देखने में पानीदार घोड़ा चुना।

अस्तबल के प्रहरी ने कहा, 'हमारे सिन्धिया सरकार का यह खास घोड़ा है।'

मुन्दर बोली, 'खास ही चाहिये। हमारी सरकार की सवारी में आवेगा।'

प्रहरी—'झांसी भी रानी साहब की सवारी में ?'

मुन्दर—'हां।'

प्रहरी—'खैर ठीक है। हमारे सरकार जब इस पर बैठते थे बहुत ऊबते थे। इसके जाने से कुछ रंज होता है।'

मुन्दर—क्यों ?'

प्रहरी—'जब सरकार इसको न पावेंगे, दुखी होंगे।'

मुन्दर जल्दी में थी। घोड़ा लेकर चली आई।

रानी ने अपने सरदारों को हिदायतें दीं।

रानी ने कहा, 'कुंवर गुलमुहम्मद, आज तुमको अपने जौहर का जौहर दिखलाना है। कल की लड़ाई का हाल देखकर आज जीत की आशा होती है। परन्तु यदि पश्चिम या उत्तर का मोर्चा उखड़ जाय तो उसको संभालता और दक्षिण चल पड़ने की तैयारी में रहना।'

'सरकार,' गुलमुहम्मद बोला, 'अम सब पठान् आज कट जाने का कसम खाया है। जो बचेगा वो दखन जायगा। आप दखन जाना सरकार। अमारा राहतगढ़ लेना। अमारा भौत पठान वहां मारा गया। उनका यादगार बनवाना।'

'नहीं कुंवर साहब, हम जीतेंगे,' रानी ने कहा, 'दक्षिण जाने की बात तो तब उठेगी जब यहां कुछ हाथ न रहे। फौजदार के विचार में जीतने की बात पहले उठनी ही चाहिये परन्तु दूसरी बात जो तै की जावे वह बच निकलने और फिर कहीं जमकर युद्ध करने की है।'

मुन्दर बोली, 'सरकार कुछ जलपान करलें। इसी समय से हवा में कुछ कुछ गरमी है। दिखता है लू बहुत चलेगी।'

रानी ने कहा, 'तुम लोग कुछ खा लो। दामोदरराव को खूब खिला पिला लो। पीठ पर पानी का प्रबन्ध रखना। मैं केवल शर्बत पियूंगी।'

जूही—'मैं भी शर्बत ही पियूंगी।'

रानी—'देशमुख, तुम ?'

देशमुख—'मैं तो कुछ खा-पी आया।'

रानी—'रघुनाथसिंह ?'

रघुनाथसिंह—'मैं कुछ खाऊंगा।'

रानी—'तुम और मुन्दर कुछ खा-पीकर झटपट शर्बत बना लाओ।'

मुन्दर और रघुनाथसिंह गये। दामोरदराव आ गया। रानी ने उसको खिलाया-पिलाया।

रानी ने जूही से कहा, 'आज तेरी सुगन्धि ऐसी बरसे कि बैरी बिछ जाय।

जूही प्रसन्न होकर बोली, 'आज मैं जो कुछ कर सकूं, कह नहीं सकती परन्तु आंख खुलते ही जो कुछ प्रण किया है उसके अनुसार अवश्य काम करूंगी।'

रानी—'परन्तु जो कुछ करे, ठंडक के साथ करना। केवल उत्तेजना से बहुत सहायता नहीं मिलेगी।'

जूही—'तभी तो सरकार मैं हँस रही हूं। एक हसरत मन में रही जाती है।—आपको गाना न सुना पाया।'

रानी—'किसी दिन सुनूंगी।'

जूही—'हां सरकार, अवश्य।' जूही जरा ज्यादा हंस पड़ी।'

रानी—'तेरी हंसी आज कुछ भीषण है।'

जूही—'काम इससे अधिक भीषण होगा, सरकार।'

[५०]

मुन्दर और रघुनाथसिंह ने कुछ भी न खाकर जेत्रों में कलेवा डाला और पीठ पर पानी का बर्तन कस किया। झटपट शर्बत बनाया।

'मुन्दरबाई', रघुनाथसिंह ने कहा, 'रानी साहब का साथ एक क्षण के लिये भी न छूटने पावे। वे आज अन्तिम युद्ध लड़ने जा रही हैं।

मुन्दर—'आप कहां रहेंगे?'

रघुनाथसिंह—'जहां उनकी आज्ञा होगी। वैसे आप लोगों के समीप ही रहने का प्रयत्न करूंगा?'

दूर से दुश्मन के बिगुल के शब्द की झाँई कान में पड़ी। मुन्दर ने रघुनाथसिंह को मस्तक नवाकर प्रणाम किया और उस ओट में जल्दी आँसू पोंछ डाले। रघुनाथसिंह ने मुन्दर को नमस्कार किया। फिर तुरन्त दोनों शर्बत लिये हुए रानी के पास पहुंचे।

मुन्दर ने जूही को पिलाया, रघुनाथसिंह ने रानी को। अङ्गरेजों की बिगुल का साफ शब्द सुनाई दिया। तोप का धड़ाका हुआ, गोला सन्नाकर ऊपर से निकल गया। रानी ने दूसरा नहीं पी पाया।

रानी ने रामचन्द्र देशमुख को आदेश किया, 'दामोदर को आज तुम पीठ पर बांधो। यदि मैं मारी जाऊँ तो इसको किसी तरह दक्षिण सुरक्षित पहुंचा देना। तुमको आज मेरे प्राणों से बढ़कर अपनी रक्षा की चिन्ता करनी होगी। दूसरी बात यह है कि मारी जाने पर ये विधर्मी मेरी देह को न छूने पावें। बस, घोड़ा लाओ।'

मुन्दर घोड़ा ले आई। उसकी आंखें छलछला रही थीं! पूर्व दिशा में अरुणिमा फैल गई। अबकी बार कई तोपों का धड़ाका हुआ।

रानी मुस्कराईं। बोलीं, 'यह तात्या की तोपों का जवाब है।'

मुन्दर की छलकती हुई आंखों को देखकर कहा, यह समय आंसुओं का नहीं है, मुन्दर। जा, तुरन्त अपने घोड़े पर सवार हो।

अपने लिये आये हुये घोड़े को देखकर बोलीं, 'यह अस्तबल को प्यार करने वाला जानवर है। परन्तु अब दूसरे को चुनने का समय ही नहीं है। इसी से काम निकालूंगी।'

जूही के सिर पर हाथ फेरकर कहा, 'जा जूही, अपने तोपखाने पर। छका तो दे इन बैरियों को आज।'

जूही ने प्रणाम किया। जाते हुए कह गई, 'इस जीवन का यथोचित अभिनय आपको न दिखला पाया। खैर।'

अङ्गरेजों के गोलों की वर्षा हो उठी। रानी के सब सरदार और सवार घोड़ों पर जम गये, जूही का तोपखाना आग उगलने लगा।

इतने में सूर्य उदय हुआ।

सूर्य की किरणों ने रानी के सुन्दर मुख को प्रदीप्त किया। उनके नेत्रों की ज्योति दुहरे चमत्कार से भासमान हुई। लाल वर्दी के ऊपर मोती-हीरों का कण्ठा दमक उठा और चमक पड़ी म्यान से निकली हुई तलवार।

रानी ने घोड़े को एड़ लगाई। पहले जरा हिचका फिर तेज हो गया। रानी ने सोचा कई दिन का बँधा होगा, थोड़ी देर में गरम हो जायगा।

उत्तर और पश्चिम की दिशाओं में तात्या और रावसाहब के मोर्चे थे। दक्षिण में बांदा के नवाब का। रानी ने पूर्व की ओर झपट लगाई।

गत दिवस की हार के कारण अङ्गरेज जनरल सावधान और चिंतित हो गये थे। इन लोगों ने अपनी पैदल पल्टनें पूर्व और दक्षिण के बीहड़ में छिपा लीं और हुज़र* सवारों को कई दिशाओं से आक्रमण करने की योजना की। तोपें पीठ पर रक्षा के लिये थीं ही। हुजर सवारों ने हमला कड़ाबीन बन्दूकों से किया। बन्दूकों का जवाब बन्दूक से दिया गया। रानी ने आक्रमण पर आक्रमण करके हुज़र सवारों को पीछे

---

*Hussars.

हटाया। दोनों ओर के सवारों की बेहिसाव दौड़ से धूल के बादल छा गये। रानी के रण कौशल के मारे अङ्गरेज जनरल थर्रा गये। काफी समय हो गया परन्तु अङ्गरेजों को पेशवाई मोर्चों में से निकल जाने की गुञ्जाइश न मिली।

जूही की तोपें ग़जब ढा रही थीं। अङ्गरेज नायक ने इन तोपों का मुंह वन्द करना तै किया। हुजर सवार बढ़ते जाते थे, मरते जाते थे; परन्तु उन्होंने इस तरफ की तोपों को चुप करने का निश्चय कर लिया था। रानी ने जूही की सहायता के लिये कुमुक भेजी। उसी समय उनको खबर मिली कि पेशवा की अधिकाँश ग्वालियरी सेना और सरदार 'अपने महाराज' की शरण में चले गये।

मुन्दर ने रानी से कहा, 'सवेरे अस्तवल का प्रहरी रिस-रिस कर अपने 'सरकार' का स्मरण कर रहा था। मुझे सन्देह हो गया था कि ग्वालियरी कुछ गड़बड़ करेंगे।'

'गाँठ में समय न होने के कारण कुछ नहीं किया जा सकता था,' रानी बोलीं, 'अब जो कुछ सम्भव है, वह करो।'

इनकी लालकुर्ती अब तलवार खींचकर आगे बढ़ी। उस धूल-धूसरित प्रकाश में भी तलवारों की चमचमाहट ने चकाचौंध लगा दी।

कुछ ही समय उपरान्त समाचार मिला कि ग्वालियरी सेना के परपक्ष में मिल जाने के कारण रावसाहब के दो मोर्चे छिन गये और अँग्रेज उसमें घुसने लगे हैं। रानी के पीछे पैदल-पल्टन थी। उसको स्थिति सम्भालने की आज्ञा देकर वह एक ओर आगे बढ़ीं। उधर हुजर-सवार जूही के तोपखाने पर जा टूटे। जूही तलवार से भिड़ गई, घिर गई और मारी गई। मरते समय उसने आह तक न की। चिर गई थी। परन्तु शत्रु की तलवार चीरने में, जिस बात पर असमर्थ रही—वह थी जूही की क्षीण मुस्कराहट जो उसके होंटों पर अनन्त दिव्यता की गोद में खेल गई थी।

वर्दी के कट जाने पर हुजरों ने देखा कि तोपखाने का अफसर गोरे रंग की एक सुन्दर युवती थी ! और उसके होठों पर मुस्कराहट !!

समाचार मिलते ही रानी ने इस तोपखाने का प्रवन्ध किया ।

इतने में ब्रिग्रेडियर स्मिथ ने अपने छिपे हुये पैदलों को अपने छिपे हुये स्थानों से निकाला । वे संगीनें सीधी किये रानी के पीछे वाली पैदल पल्टन पर दो पार्श्वों से झपटे । पेशवा की पैदल पल्टन घवरा गई । उसके पैर उखड़े । भाग उठी । रानी ने प्रोत्साहन, उत्तेजन दिया । परन्तु उनके और उस भागती हुई पल्टन के वीच में गोरों की संगीनें और हुजरों के घोड़े आ चुके थे ।

अंगरेजों की कड़ाबीनें, संगीनें और तोपें पेशवाई सेना का संहार कर उठीं । पेशवा की दो तोपें भी उन लोगों ने छीन लीं । अंगरेजी सेना वाढ़ पर आई हुई नदी की तरह वढ़ने और फैलने लगी ।

रानी की रक्षा के लिये लालकुर्ती सवार अटूट शौर्य और अपार विक्रम दिखलाने लगे । न कड़ावीन की परवाह न संगीन का भय और तलवार तो मानो उनकी ईश्वरीय देन थी । उस तेजस्वी दल ने घण्टों अङ्गरेजों का प्रचण्ड सामना किया । रानी धीरे-धीरे पश्चिम-दक्षिण की ओर अपने मोर्चे की शेष सेना से मिलने के लिये मुड़ीं । यह मिलान लगभग असंभव था, क्योंकि उस भागती हुई पैदल पल्टन और रानी के वीच में वहुसंख्यक हुजर सवार और संगीन-वरदार पैदल थे । परन्तु उन वचे-खुचे लालकुर्ती वीरों ने अपनी तलवारों की आड़ वनाई ।

रानी ने घोड़े की लगाम अपने दांतों में थामी और दोनों हाथों से तलवार चलाकर अपना मार्ग बनाना आरम्भ कर दिया । दक्षिण-पश्चिम की ओर सोनरेखा नाला था । आगे चलकर बाबा गङ्गादास की कुटी थी । कुटी के पीछे दक्षिण और पश्चिम की ओर हटती हुई पेशवाई पैदल पल्टन ।

मुन्दर रानी के साथ थी । अगल-वगल रघुनाथसिंह और रामचन्द्र देशमुख । पीछे कुंवर गुलमुहम्मद और केवल वीस-पच्चीस अवशिष्ट लाल

सवार। अंगरेजों ने थोड़ी देर में इन सबके चारों तरफ घेरा डाल दिया। सिमट सिमटकर उस घेरे को काम करते जा रहे थे।

परन्तु रानी की दुहत्थू तलवारें आगे का मार्ग साफ करती चली जा रही थीं। पीछे के वीर सवारों की संख्या घटते घटते नगण्य हो गई। उसी समय तात्या ने रुहेली और अवधी सैनिकों की सहायता से अंगरेजों के व्यूह पर प्रहार किया। तात्या कठिन से कठिन व्यूह में होकर बच निकलने की रणविद्या का पारंगत पण्डित था। अंगरेज थोड़े से सवारों को लालकुर्ती का पीछा करने के लिये छोड़कर तात्या की ओर मुड़ गये। सूर्यास्त होने में कुछ विलम्ब था।

लालकुर्ती का अंतिम सवार मारा गया। रानी के साथ केवल चार सरदार और उनकी तलवारें रह गईं। पीछे से कड़ाबीन और तलवार वाले दस-पन्द्रह गोरे सवार। आगे संगीन वाले कुछ गोरे पैदल।

रानी ने पीछे की तरफ देखा—रघुनाथसिंह और गुलमुहम्मद तलवार से अंगरेज़ सैनिकों की संख्या कम कर रहे हैं। एक ओर रामचन्द्र देशमुख दामोदरराव की रक्षा की चिन्ता में बरकाव करके लड़ रहा था। रानी ने देशमुख की सहायता के लिये मुन्दर को इशारा किया। और वह स्वयं संगीनबरदारों को दोनों हाथों की तलवारों से खटाखट साफ करके आगे बढ़ने लगीं। एक संगीनबरदार की हूल रानी के सीने के नीचे पड़ी। उन्होंने उसी समय तलवार से उस संगीनबरदार को खतम किया। हूल करारी थी परन्तु आंतें बच गईं।

रानी ने सोचा, 'स्वराज्य की नींव का पत्थर बनने जा रही हूँ।' रानी के खून बह निकला।

उस संगीनबरदार के खतम होते ही बाकी भागे। रानी आगे निकल गईं। उसके साथी भी दायें, बायें और पीछे। आठ-दस गोरे घुड़सवार उनको पछियाते हुये।

रघुनाथसिंह पास था। रानी ने कहा, 'मेरे देह को अंगरेज न छूने पावें।

गुलमुहम्मद ने भी सुना—और समझ लिया। वह और भी जोर से लड़ा।

एक अंगरेज सवार ने मुन्दर पर पिस्तौल दागी। उनके मुँह से केवल ये शब्द निकले, 'बाईसाहब, मैं मरी। मेरी देह···भगवन्।' अन्तिम शब्द के साथ उसने एक दृष्टि रघुनाथसिंह पर डाली और वह लटक गई।

रानी ने मुड़कर देखा।

रघुनाथसिंह से कहा, 'सम्भालो उसे। उसके शरीर को वे न छूने पावें।' और वे घोड़े को मोड़कर अङ्गरेज सवारों पर तलवारों की बौछार करने लगीं। कई कटे। मुन्दर को मारने वाला मारा गया।

रघुनाथसिंह फुर्ती के साथ घोड़े से उतरा। अपना साफा फाड़ा। मुन्दर के शव को पीठ पर कसा और घोड़े पर सवार होकर आगे बढ़ा।

गुलमुहम्मद वाकी सवारों से उलझा। रानी ने फिर सोनरेखा नाले की ओर घोड़े को बढ़ाया। देशमुख साथ में हो गया।

अङ्गरेज सवार पांच रह गये। गुलमुहम्मद उनको बहकावा देकर रानी के साथ हो लिया। रानी तेजी के साथ नाले की ढी पर आ गईं।

घोड़े ने आगे बढ़ने से इनकार कर दिया—बिलकुल अड़ गया। रानी ने पुचकारा। कई प्रयत्न किये परन्तु सब व्यर्थ।
वे अङ्गरेज सवार आ पहुंचे।

एक गोरे ने पिस्तौल निकाली और रानी पर दाग दी। गोली उनकी बाईं जंघा में पड़ी। वे गले में मोती-हीरों का दमदमाता हुआ कंठा पहिने हुई थीं। उस अङ्गरेज सवार ने रानी को कोई बड़ा सरदार समझ कर विश्वास कर लिया कि अब वह कंठा मेरा हुआ। रानी ने बायें हाथ की तलवार फेंक कर घोड़े की अयाल पकड़ी और दूसरी जांघ तथा हाथ की सहायता से अपना आसन सम्भाला। इतने में वह सवार और भी निकट आया। रानी ने दायें हाथ के वार से उसको समाप्त कर दिया। उस वार के पीछे से एक और आगे निकल पड़ा।

रानी ने आगे बढ़ने के लिये फिर पैर की एड़ लगाई।

घोड़ा बहुत प्रयत्न करने पर भी अड़ा। वह दोनों पैर से खड़ा हो गया। रानी को पीछे खिसकना पड़ा। एक जांघ काम नहीं कर रही थी। बहुत पीड़ा थी। खून के फव्वारे पेट और जांघ के घाव से छूट रहे थे।

गुलमुहम्मद आगे बढ़े हुये अंग्रेज सवार की ओर लपका।

परन्तु अँग्रेज सवार ने गुलमुहम्मद के आ पहुंचने के पहले ही तलवार का वार रानी के सिर पर किया। वह उनकी दाईं ओर पड़ा। सिर का वह हिस्सा कट गया और दाईं आंख बाहर निकल पड़ी। इस पर भी उन्होंने अपने घातक पर तलवार चलाई और उसका कन्धा काट दिया!

गुलमुहम्मद ने उस सवार के ऊपर कस कर भरपूर हाथ छोड़ा। उसके दो टुकड़े हो गये।

बाकी दो तीन अँग्रेज सवार बचे थे। उन पर गुलमुहम्मद बिजली की तरह टूट पड़ा। उसने एक को घायल कर दूसरे के घोड़े को लगभग अधमरा कर दिया। वे तीनों मैदान छोड़कर भाग गये। अब वहां कोई शत्रु न था। जब गुलमुहम्मद मुड़ा तो उसने देखा—रामचन्द्र देशमुख घोड़े से गिरती हुई रानी को साधे हुये हैं।

दिन भर के थके मांदे, भूखे-प्यासे, धूल और खून में सने हुये गुलमुहम्मद ने पश्चिम की ओर मुंह फेरकर कहा, 'खुदा, पाक परवरदिगार, रहम, रहम!'

उस कट्टर सिपाही की आंखें आंसुओं को मानो बरसाने लगीं और वह बच्चों की तरह हिलक-हिलक कर रोने लगा।

रघुनाथसिंह और देशमुख ने रानी को घोड़े से सम्भाल कर उतारा। आवेश में आकर उस अड़ियल घोड़े को एक लात मारी। वह अपने अस्तबल की दिशा में भाग गया।

रघुनाथसिंह ने देशमुख से कहा, 'एक क्षण का भी विलम्ब नहीं होना चाहिये। अपने घोड़े पर इनको होशियारी के साथ रखो और बाबा गङ्गादास की कुटी पर चलो। सूर्यास्त हुआ ही चाहता है।'

देशमुख का गला रुँधा हुआ था। बालक दामोदरराव अपनी माता के लिये चुपचाप रो रहा था।

रामचन्द्र ने पुचकार कर कहा, 'इनकी दवा करेंगे, अच्छी हो जायेंगी, रोओ मत।'

रामचन्द्र ने रघुनाथसिंह की सहायता से रानी को सम्भाल कर अपने घोड़े पर रक्खा।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्द से कहा, 'कुँवर साहब, इस कमजोरी से काम और विगड़ेगा। याद करिये, अपने मालिक ने क्या कहा था। अङ्गरेज अब भी मारते-काटते दौड़-धूप कर रहे हैं। यदि आ गये तो रानी साहब की देह का क्या होगा?'

गुलमुहम्मद चौंक पड़ा। साफे के छोर से आंसू पोंछे गला बिलकुल सूख गया था। आगे बढ़ने का इशारा किया। वे सब द्रुतगति से बाबा गङ्गादास की कुटी पर पहुंचे।

[५१]

विसूरते हुये दामोदरराव को एक ओर बिठला कर रामचन्द्रराव ने अपनी वर्दी पर रानी को लिटाया और बचे हुये साफे के टुकड़े से उनके सिर के घाव को बांधा। रघुनाथसिंह ने अपनी वर्दी पर मुन्दर के शव को रख दिया। गुलमुहम्मद ने घोड़े को जरा दूर पेड़ों से जा अटकाया।

बाबा गंगादास ने पहिचान लिया। बोले, 'सीता और सावित्री के देश की लड़कियां हैं ये।'

रानी ने पानी के लिये मुंह खोला। बाबा गंगादास तुरन्त गंगाजल ले आये। रानी को पिलाया। उनको कुछ चेत आया।

मुंह से पीड़ित स्वर में धीरे से निकला, 'हर हर महादेव।' उनका चेहरा कष्ट के मारे बिलकुल पीला पड़ गया। अचेत हो गईं।

बाबा गंगादास ने पश्चिम की ओर देखकर कहा, 'अभी कुछ प्रकाश है। परन्तु अधिक विलम्ब नहीं। थोड़ी दूर घास की एक गञ्ज लगी हुई है। उसी पर चिता बनाओ।'

मुन्दर की ओर देख कर बोले, 'यह इस कुटी में रानी लक्ष्मीबाई के साथ कई बार आई थी। इसका तो प्राणान्त हो गया।'

रघुनाथसिंह के रुद्ध कण्ठ से केवल 'जी' निकला।

उसके मुंह में भी बाबा ने गंगाजल की कुछ बूंदें डालीं।

रानी फिर थोड़े से चेत में आईं। कम से कम रघुनाथसिंह इत्यादि को यही जान पड़ा। दामोदरराव पास आ गया। उसको अवगत हुआ कि मां बच गई और फिर खड़ी हो जायेंगी। उत्सुकता के साथ उनकी ओर टकटकी लगाई।

रानी के मुंह से बहुत टूटे स्वर में निकला, 'ॐ वासुदेवाय नमः।'

इसके उपरांत उनके मुंह से जो कुछ निकला। वह अस्पष्ट था। होठ हिल रहे थे। वे लोग कान लगाकर सुनने लगे। उनकी समझ में केवल तीन टूटे हुये शब्द आये :-

'···द···ह···ति···नै···नं···पावकः' मुखमण्डल प्रदीप्त हो गया।

सूर्यास्त हुआ। प्रकाश का अरुण पुंज दिशा के भाल पर था। उसकी अगणित रेखायें गगन में फैली हुई थीं।

देशमुख ने विलख कर कहा, 'झांसी का सूर्यास्त हो गया।'

रघुनाथसिंह बिलख-बिलख कर रोने लगा।

दामोदर ने चीत्कार किया।

बाबा गंगादास ने कहा, 'प्रकाश अनन्त है। वह कण-कण को भासमान कर रहा है। फिर उदय होगा। फिर प्रत्येक कण मुखरित हो उठेगा।'

[५२]

बाबा गङ्गादास ने सचेत किया, 'झांसी की रानी के सिधार जाने को अस्त होना कहते हो। यह तुम्हारा मोह है। वह अस्त नहीं हुई। वह अमर हो गई। कायरता का त्याग करो। उस घास की गन्जी पर इन दोनों देवियों के शव का दाह संस्कार करो। अङ्गरेज इन लोगों की खोज में आते होंगे। शीघ्र करो।

वे दोनों सम्भले।

देशमुख ने कहा, 'घास की गन्जी बड़ी है?'

बाबा गङ्गादास ने उत्तर दिया, 'गन्जी तो छोटी सी है।'

देशमुख कष्टपूर्ण स्वर में बोला, 'झांसी की रानी के दाह के लिये आज लकड़ी भी सुलभ नहीं! घास की अग्नि तो इन दो शवों को केवल झोंस देगी। सवेरे शत्रु इनके अर्धदग्ध शरीर देखेंगे, हंसेंगे और शायद कहीं फेंक देंगे।'

बाबा ने सिर उठाकर अपनी कुटिया को देखा।

बोले, 'इस कुटिया में काफी लकड़ी है। उचेड़ डालो। अन्त्येष्टि का आरम्भ करो।'

रघुनाथसिंह ने प्रार्थना की, 'आपकी कुटी की लकड़ी! आप एक कृपा करें तो...।'

बाबा ने पूछा, 'क्या?'

रघुनाथसिंह ने उत्तर दिया, 'फिर से कुटी बनाने में आपको असुविधा होगी, इसलिये कुछ भेंट ग्रहण कर ली जावे।'

बाबा मुस्काये।

बोले, 'यह लकड़ी मेरी नहीं है। जिन्होंने पहले दी थी वे फिर दे देंगे। देर मत करो। कुटिया को उचेड़ो।'

देशमुख ने कहा, 'उसमें का सामान बाहर निकाल लिया जाये।'

बाबा भीतर से एक कम्बल, तूँबी, चटाई और लंगोटी उठा लाये। बोले, 'बस और कुछ नहीं है, जल्दी करो।'

दोनों शवों को बाहर रखकर, दामोदरराव को एक ओर बिठलाया और वे तीनों सिपाही कुटी को उखेड़ने में लग गये। बात की बात में कुटी को तोड़कर लकड़ी इकट्ठी कर ली।

गञ्जी की कुछ घास घोड़ों को डाल दी और कुछ से चिता का काम लिया।

रानी का कण्ठा उतार कर दामोदरराव के पास रख दिया। मोतियों की एक छोटी कण्ठी उनके गले में रहने दी। उनका कवच और और तवे भी।

चिता चुनने के पश्चात् रानी लक्ष्मीबाई और मुन्दरबाई के शवों को चिता पर देशमुख ने रख दिया और अग्नि संस्कार कर दिया। अपनी और रघुनाथसिंह की वर्दियां भी चिता पर रख दीं।

आधी घड़ी में चिता प्रज्वलित हो गई।

उस कुटी की भूमि पर रक्त बह गया था। उसको देशमुख ने धो डाला।

परन्तु उन रक्त की बूँदों ने पृथ्वी पर जो इतिहास लिख दिया था, वह अमिट रहा।

[५३]

कुछ दूरी पर रिसाले की टापों का शब्द सुनाई पड़ा। वह रिसाला अङ्गरेजों का था।

देशमुख—'रानी साहब की तलाश में बैरी घूम रहे हैं।'

रघुनाथसिंह—'आप दामोदरराव को लेकर तुरन्त निकल जाइये।'

देशमुख—'आप दीवान साहब, क्या झांसी की ओर जायेंगे ?'

रघुनाथसिंह—'झांसी में मेरा अब क्या रक्खा है। मैं इन सवारों को मार कर मरूँगा। ये लोग चिता की ओर आयेंगे। इसे उसेलेंगे। जाइये तुरन्त जाइये। रात को कहीं छिप जाना। विश्राम करना।'

देशमुख—'कण्ठे का क्या होगा ?'

रघुनाथसिंह—'मृत सिपाहियों के बाल-बच्चों में बांट देना या कुछ भी करना।' देशमुख ने दामोदरराव को पीठ पर बांधा और घोड़े पर सवार होकर चल दिया।

रघुनाथसिंह ने गुलमुहम्मद से कहा, 'कुंवर साहब, आप भी जाइये। मेरे घोड़े को छोड़ दीजिये, उस विचारे को कोई न कोई रख लेगा। आवरे में से मेरी बन्दूक और गोली-बारूद का झोला लाने की कृपा करिये।'

गुलमुहम्मद घोड़े के पास गया। दोनों के आवरों में से गोली-बारूद और बन्दूकें निकाल लीं और, दोनों घोड़ों को जीन सहित छोड़ दिया।

गुलमुहम्मद ने रघुनाथसिंह को बन्दूक और गोली-बारूद देते हुये कहा, 'दीवान साहब, अम कहां जायगा ? अम राहतगढ़ से जब चला तब पाँच सौ पठान था। अब एक रह गया। अकेला कहां जायगा ? अम भी मरेगा और मरेगा। बाई, हमको मत हटाओ।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'मैं चाहता हूं आप जिन्दा रहें, और इनकी पवित्र हड्डियों और भस्म को किसी गैर को न छूने दें। रहा मैं सो जाने की बहुत जल्दी पड़ रही है। वे अभी रास्ते में होंगी उनसे जल्दी मिलना है।' और बन्दूकें भरने लगा।

रघुनाथसिंह पागलों का सा हँसा।

गुलमुहम्मद ने एक क्षण सोचा। बोला, 'यह फकीर साहब हड्डियों की हिफाजत करेगा।'

रघुनाथसिंह ने कहा, 'फकीर नहीं करेगा। आप चाहें तो कर सकते हैं।'

'अच्छा', गुलमुहम्मद बोला, 'अम जिन्दा रहेगा। खाक और हड्डियों पर चबूतरा बना देगा।'

'अपनी बन्दूक भी मुझको दे दो। कुँवर साहब', रघुनाथसिंह ने प्रस्ताव किया।

गुलमुहम्मद ने प्रतिवाद किया, 'अब कुँवर साहब नहीं। अम फकीर बन कर रहेगा। गुलसांई नाम होगा।'

उसने अपनी बन्दूक दे दी।

'इसको भर दीजिये', रघुनाथसिंह ने अनुरोध किया।

'बस बाई। अब बन्दूक या कोई हथियार नहीं छुयेगा। अम खुदा-पाक की याद में बाकी जिन्दगी खतम करेगा।'

एक तरफ जाकर गुलमुहम्मद ने अपनी वर्दी जलती हुई चिता पर फेंककर खाक कर दी—केवल साफा रक्खा। उसके एक टुकड़े की लगोटी लगाई। बाकी ओढ़ने-बिछाने को रख लिया।

खूब हँसकर बोला, 'अब अम बिलकुल आजाद हो गया बाई।'

रघुनाथसिंह ने दोनों बन्दूकें भर लीं। गोला-बारूद के, झोले लटकाये। गुलमुहम्मद के पास गया। उसको देखकर विस्मित हुआ।

बोला, 'आप तो सचमुच फकीर हो गये! अच्छा सलाम कुँवर, साईं साहब। भूल चूक गलती माफ कीजिये।'

'सलाम', गुलमुहम्मद ने कहा।

जिस ओर से टापों का शब्द आ रहा था, रघुनाथसिंह उसी दिशा में गया। पास जाकर एक आड़ ली। लेट गया। प्रतीति कर ली कि अङ्गरेजों का रिसाला है और कुटी की ओर आ रहा है।

'धायं धाय' बन्दूक चलाई।

'धायं धायं', अंगरेजी रिसाले का जवाब आया।

काफ़ी समय तक रिसाले के सैनिकों को हताहत करता रहा। फिर? एक गोली से मारा गया।

चिता सायं सायं जलती रही।

गुलमुहम्मद चिता से कुछ दूर जाकर लेट गया। साफे के टुकड़े से अपने को ढका। वेहद थका हुआ था, सो गया। सवेरे जब आंख खुली देखा कि चिता के स्थान पर कुछ जली हड्डियां बाकी रह गई हैं।

उसके मुंह से निकल पड़ा, 'ओफ रानी साहब का सिर्फ यह हड्डी रह गया है। और उस हसीन लड़की का।'

फिर तुरन्त उसने अपने मन में कहा, 'ओ! कबी नहीं। वो मरा नहीं। वो कबी नहीं मरेगा। वो मुर्दों को जान बख्शता रहेगा।'

चिता के ठण्डे हो जाने पर गुलमुहम्मद ने उस स्थान पर एक चबूतरा बांधा और कहीं से फूल लाकर उस पर चढ़ाये।

अंग्रेजी सेना का एक दल रानी की ढूंढ़ खोज में वहां पर आया।

चबूतरा अभी सूखा न था। उस दल के अगुआ का कुतूहल जागा। गुलमहम्मद से उसने पूछा, 'यह किसका मजार है, साईं साहब?'

गुलमुहम्मद ने उत्तर दिया, 'अमारे पीर का, वो बोत बड़ा वली था।'